Impact Factor : 7.834

गीना देवी शोध संस्थान

द्वारा पटियाला, श्रीगंगानगर व नेपाल से प्रसारित

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध का अंतर्राष्ट्रीय मासिक

ISSN : 2321-8037

March-April 2025

Volume 13, Issue 3-4

Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Editor :
Dr. Rekha Soni

Chief-Editor :
Dr. Naresh Sihag Adv.

संस्थापक सम्पादिका :
स्मृति शेष
डॉ. विश्वकीर्ति

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

www.ginajournal.com

संस्थापक संरक्षक :
स्मृति शेष
श्री हरविन्द्र कमल चौधरी

वर्ष : 13 | अंक : 3 – 4 (2) | मार्च – अप्रैल : 2025 | आईएसएसएन : 2321 – 8037

सम्पादक :
डॉ. रेखा सोनी
शिक्षा विभाग, टांटिया वि.वि.,
श्रीगंगानगर – 335001 (राज.)

प्रधान सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
सचिव, गीना देवी शोध संस्थान,
भिवानी (हरियाणा)

मार्गदर्शन :
डॉ. राजेन्द्र गोदारा
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. लक्ष्मी जोशी
त्रिभुवन वि.वि. काठमाण्डू।

डॉ. सृष्टि चौधरी
लेक्चरर, इलेक्ट्रानिक्स
एंड कम्युनिकेशन,
सरकारी पॉलिटेक्निक कॉलेज फॉर
गर्ल्स, पटियाला, पंजाब।

श्री श्रेष्ठ चौधरी,
सीनियर मैनेजर,
स्टेट बैंक ऑफ इंडिया,
साहिबजादा अजित सिंह नगर,
मोहाली, पंजाब।

कानूनी सलाहकार :
डॉ. रामफल दलाल एडवोकेट,
श्रीमती रूपिन्द्र कौर, एडवोकेट

सलाहाकार समिति (Advisory Committee)

डॉ. सुलक्षणा अहलावत
अंग्रेजी प्रवक्ता, शिक्षा विभाग
नूंह (हरियाणा)

डॉ. अरूणा अंचल
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. सुशीला
चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी।

डॉ. अल्पना शर्मा
आईएएसई विश्वविद्यालय सरदारशहर

डॉ. विजय महादेव गाडे
बाबा साहेब चितले महाविद्यालय
भिलवडी (महाराष्ट्र)

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कॉलेज
धारवाड़ (कर्नाटक)

डॉ. रीना कुमारी
दशमेश गर्ल्स कॉलेज,
अल्ला बक्श, मुकेरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती
यूक्रेन।

श्री हेमराज न्यौपाने
नेपाल।

डॉ. ममता तनेजा
अबोहर, पंजाब।

डॉ. प्रियंका खंडेलवाल
बराण, राजस्थान।

डॉ. संदीप
ओम विश्वविद्यालय, हिसार।

प्रो. मधुबाला
राजकीय महिला महाविद्यालय, हिसार।

डॉ. पीयूष कुमार द्विवेदी
जगद्गुरू रामभद्राचार्य दिव्यांग
विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उत्तरप्रदेश

डॉ. हवासिंह ढाका
राजकीय महाविद्यालय, हिन्दुमलकोट,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत प्रवक्ता, शिक्षा विभाग हरियाणा

डॉ. राजेश शर्मा
टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मोहिनी दहिया
माती जीतोजी कन्या महाविद्यालय,
सूरतगढ़ (राजस्थान)

डॉ. मुद्दस्सिर अहमद भट्ट
हिन्दी विभाग,
कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर, कश्मीर

डॉ. सीहेच वी. महालक्ष्मी
सीहेच एसडीएसटी थेरेसा महिला
महाविद्यालय, एलुरू, आंध्र प्रदेश

डॉ. मोरवे रोशन के.
यूनाईटिड किंगडम।

डॉ. अनुपमा, पूर्व प्रोफेसर,
अंकारा विश्वविधालय, अंकारा, टर्की

डॉ. आर.के विश्वास
अध्यक्ष होम्योपैथिक, टांटिया, वि.वि.

प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक **डॉ. नरेश सिहाग,** एडवोकेट ने **मनभावन प्रिन्टर्ज,** पुराना बस स्टैण्ड रोड़, नया बाजार, भिवानी से छपवाकर 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी – 127021 (हरियाणा) से जारी किया।

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

(Journal of Literature, Arts, Science, Commerece, Culture, Humanities and Social Sciences)

सचिव :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,

भिवानी-127021 (हरियाणा)

Email : grngobwn@gmail.com

मो. 09466532152

संगम मासिक पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं/लेखों की मौलिकता का दायित्त्व स्वयं रचनाकारों/लेखकों का है। उससे सम्पादक व प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। किसी भी प्रकार का विवाद होने पर न्यायक्षेत्र केवल भिवानी (हरियाणा) होगा। सम्पादन और प्रबंधन के सभी पद पूर्ण रूप से अवैतनिक हैं।

Published by :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalsm.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1300/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

Impact Factor : 7.834

ISSN : 2321-8037

Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

तालिका– 2

शैक्षणिक / शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसेः प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि।)

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान / अभियांत्रिकी / कृषि / चिकित्सा / पशु–चिकित्सा विज्ञान संकाय	भाषा / मानविकी / कला / सामाजिक विज्ञान / पुस्तकालय / शिक्षा / शारीरिक शिक्षा / वाणिज्य / प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
1	समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त)		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान– अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

www.bohalsm.blogspot.com grsbohal@gmail.com 8708822674 9466532152

अनुक्रमाणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. रेखा सोनी	07–07
2.	बुद्धचरितमहाकाव्ये योगतत्त्वस्य परिशीलनम्	डा. पङ्कज कुमार माहाना	8–14
3.	संजीव के उपन्यासों का शिल्पगत वैशिष्ट्य	संतोष कुमार यादव	15–20
4.	VAKROKTI AS A POETIC ART	LATHA KUMARI P	21-25
5.	गुरू जम्भेश्वर जी : जीवन-वृत्त तथा शिक्षाएँ	बबीता	26–34
6.	Health Impact Pathways in Indian Green Buildings : A Conceptual Framework	Astha Singh, Anupam Kumar Gautam	35-45
7.	कृषिविज्ञानविषयकमन्त्राणाम् अन्वेषणं महत्वञ्च	गणेश चन्द्र पण्डा	46–48
8.	The Impact of Political Culture on Policy Making : A Cross-National Study	Banita	49-53
9.	भाषा बहता नीर	सविता अधाना	54–56
10.	सुप्रसिद्ध अमृतलाल नागर रचित 'मानस का हंस' उपन्यास में वस्तु विधान	डॉ. नेहा भाकुनी	57–63
11.	काला शुक्रवार कहानी में अभिव्यक्त सांप्रदायिकता की समस्या	भूमिका कपूर	64–66
12.	महाराजा जगतसिंहस्य प्रेयसी रसकपूरस्य संदर्भे : श्रृंगारः करूणरसश्च	चेतनः पुरी, डॉ. अंजना शर्मा	67–71
13.	डिजिटल साहित्य और हिंदी	डॉ. शशि कांत शर्मा	72–76
14.	भारत के संदर्भ में हनुमानगढ़ जिले का ऐतिहासिक योगदान का अध्ययन (Study of the Historical Contribution of Hanumangarh District in the Context of India)	NITESH RINWA	77-82
15.	A brief morphological analysis of Braj Varieties spoken in Rathgawan in Western Uttar Pradesh, India	Juveria Alam, Ovais Amin	83-94
16.	MUTUAL FUNDS : CHALLENGES AND OPPORTUNITIES	Dr. Anju Singla	95-103
17.	वैश्विक दृष्टि से रामचरितमानस की प्रासंगिकता	सपना विश्वकर्मा, प्रो. अञ्जलि यादव	104–107
18.	राजनीतिक संचार पर सोशल मीडिया का प्रभाव	भंवराराम	108–110
19.	संगीत कला पर वैश्वीकरण का प्रभाव	डॉ० रचना	111–114
20.	जयाजादवानी के कथासाहित्य में दमन	देवीप्रिया ओ	115–120
21.	419वें शहादत दिवस (30 मई सन 2025 ई.) पर विशेष शहीदों के सरताज : श्री गुरू अर्जुन देव साहिब जी की जीवन-गाथा (तेरा कीआ मीठा लागै। हरि नामु पदारथु नानकु माँगै।।)	डॉ. रणजीत सिंह 'अर्श'	121–124

22.	**On The Problems and Strategies of Multimedia Technology in English Teaching**	**Dr. Shriya, Manisha Sharma**	**125-130**
23.	**संस्कृतभाषायां शास्त्रीया लिङ्गव्यवस्था**	**Dr THAHIRA P**	**131-133**
24.	**सहयोगात्मक शिक्षण : संस्कृत भाषा कौशल के विकास में प्रभावशीलता**	**जलि नायक**	134–139
25.	**मोहन राकेश और सुरेन्द्र महान्ति की कहानियों में संवेदनाओं की गहराई : तुलनात्मक अध्ययन**	**धरित्री स्वाई**	140–146
26.	**सुशीला टाकभौरे की कहानियों में स्त्री विमर्श**	**डॉ. निशा चौहान**	147–150
27.	**Criminal justice system in India : challenges and measures**	**Pratap Singh, Dr. Anil Kumar Dr. Narendra Kumar Verma**	**151-158**
28.	**A FEMINIST ANALYSIS OF FEMALE CHARACTERS IN VIJAY TENDULKAR'S PLAYS**	**BHOIR PRANJAL PRAJVAL KALPANA Dr. ANSHU SHARMA**	**159-163**
29.	**इक्कीसवीं सदी की स्त्री कविताओं में प्रतिरोध का स्वरूप**	**चंद्रकांत यादव, डॉ. दीनानाथ मौर्य**	164–168
30.	**वेद प्रतिपाद्य ब्रह्म, साक्षात्/परम्परया मौलिक विश्लेषण**	**डॉ. राधेश्याम मिश्र**	169–172
31.	**The Hermeneutics of Vedic Action: An Examination of *Vidhi* , *Niṣedha*, and *Arthavāda* in *Mimāṁsā* Philosophy**	**Dr. Gauranga Das**	**173-181**
32.	**Recycle and Reuse of Waste Construction Materials**	**Mr. Utkarsh Singh, Ms. Astha Singh**	**182-187**
33.	**वैश्वीकरण और हिन्दी भाषा का भविष्य**	**डॉ. गजानन्द मीणा**	188–192
34.	**Swami Dayanand Saraswati : A National Maker**	**Himani Meena**	**193-197**
35.	**हरियाणा में जनसांख्यिकीय का भूमि उपयोग पर प्रभाव**	**सुमित श्योराण, डॉ. आलोक कुमार बंसल**	198–203
36.	**स्वातन्त्र्योत्तर नारी के प्रेम-संवेदना का यथार्थ ('यही सच है' के सन्दर्भ में)**	**डॉ. रत्ना चटर्जी**	204–208
37.	**विश्वविद्यालय के छात्रों द्वारा डिजिटल पुस्तकालय संसाधनों का उपयोग : एक तुलनात्मक अध्ययन**	**आरती ग्वालेर, डॉ मोहम्मद नासिर**	209–221
38.	**Recasting Indian Historiography through Graphic Narratives : An Examination of Myth, Memory, and Oral Tradition in Amruta Patil's Parva Duology and Aranyaka**	**Dr. A Vijayanand, Rachna Thakur**	**222-225**

सम्पादक की कलम से.....

नए आयाम, नई दिशाएँ'

प्रिय पाठकों,

गीना शोध संगम पत्रिका के इस 'मार्च–अप्रैल' अंक में आपका स्वागत है। समय के साथ ज्ञान, विचार और अनुसंधान की धाराएँ सतत प्रवाहित होती रहती हैं, और हमारी यह पत्रिका उन्हीं विचारों का संगम प्रस्तुत करने का एक विनम्र प्रयास है।

इस अंक में हम उन 'नए आयामों और दिशाओं' पर प्रकाश डाल रहे हैं, जो आज के सामाजिक, शैक्षिक और वैज्ञानिक परिवेश को प्रभावित कर रही हैं। आज हम एक ऐसे दौर में हैं, जहाँ 'प्रौद्योगिकी, नवाचार और शोध' का महत्व पहले से कहीं अधिक बढ़ गया है। बदलती दुनिया में न केवल शिक्षा और अनुसंधान के तरीके बदल रहे हैं, बल्कि समाज के हर क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं।

'शिक्षा और शोध' की बात करें तो आज पारंपरिक सीमाओं से परे जाकर अंतरविषयक अध्ययन का दौर है। विभिन्न विषयों का संगम नई खोजों और नवाचारों को जन्म दे रहा है। हमारी पत्रिका में इस बार के शोध पत्र और लेख भी इसी प्रवृत्ति को दर्शाते हैं।

इसी के साथ, 'सामाजिक और सांस्कृतिक बदलाव' भी महत्वपूर्ण हैं। तकनीक ने जहाँ हमारे जीवन को आसान बनाया है, वहीं मानवीय मूल्यों, पर्यावरणीय संतुलन और मानसिक स्वास्थ्य जैसी चुनौतियों को भी जन्म दिया है। इन विषयों पर विचार–विमर्श करना और समाधान प्रस्तुत करना भी शोध का एक महत्वपूर्ण दायित्व है।

हमारे लेखक, शोधकर्ता और विद्वान अपने विश्लेषण और दृष्टिकोण से इन मुद्दों को गहराई से प्रस्तुत कर रहे हैं। यह अंक ज्ञान की एक नई यात्रा का निमंत्रण देता है, जो शोधकर्ताओं, शिक्षकों, विद्यार्थियों और सामान्य पाठकों के लिए समान रूप से उपयोगी सिद्ध होगा।

नवसृजन और शोध की इस यात्रा में एक बार फिर गीना शोध संगम का नया अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। साहित्य, शोध और अभिव्यक्ति के इस मंच पर, हम हर बार नई सोच, नई धारा और नई दृष्टि को स्थान देने का प्रयास करते हैं। यह अंक भी उसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए, विचारों के गहरे सागर से निकले कुछ अनमोल मोतियों को संजोकर आपके सामने ला रहा है।

इस बार के अंक में हमने साहित्य और शोध की उन प्रवृत्तियों पर विशेष ध्यान दिया है, जो समाज के बौद्धिक और सांस्कृतिक परिदृश्य को नई दिशा देती हैं। हमारे रचनाकारों ने अपने विचारों को शब्दों में ढालते हुए, जीवन के विभिन्न आयामों को उकेरा है। कविता, लेख, समीक्षाएँ और शोध आलेखों के माध्यम से, यह अंक एक सार्थक विमर्श को जन्म देगा।

अंत में, हम अपने सभी लेखकों, समीक्षकों और पाठकों का हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं, जिनके सहयोग से यह पत्रिका निरंतर आगे बढ़ रही है। आपके सुझाव और प्रतिक्रियाएँ हमें और बेहतर करने की प्रेरणा देती हैं।

'आशा है कि यह अंक आपकी जिज्ञासा को उत्तेजित करेगा और नए विचारों को जन्म देगा।'

''शब्दों की लौ से ज्ञान का दीप जले,
हर पंक्ति में सृजन का संगीत ढले।''

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 8-14

बुद्धचरितमहाकाव्ये योगतत्त्वस्य परिशीलनम्

डा. पङ्कज कुमार माहाना
अतिथि अध्यापकः, स्नातकोत्तर संस्कृतविभागः, धरणीधरविश्वविद्यालयः, केन्दुझरः, ओडिशा–758001

शोधसार :–

योगः भारतीयचिन्तनपरम्परायाः अमूल्यनिधिः भवति। स्मृतिः,पुराणं चिकित्साशास्त्रं, ज्योतिषादिषु शास्त्रेषु प्रत्येकस्मिन् विभागे योगभ्यासजन्यऋतम्भरा प्रज्ञाः मधुराः महौहराश्च फलं भवन्ति। इदमेव कारणं भवति प्रत्येकभारतीयचिन्तनपरम्परायाः समरूपं स्वीकृतिप्रदानं क्रियते। एकाग्रता, समाधिः, योगः एते त्रयः शब्दाः एकार्थप्रतिपादकाः भवन्ति। योगस्य महता यज्ञस्य सिद्धये तस्य अनिवार्यताविषये समुल्लेखः सर्वप्रथमं ऋग्वेदे कृतम्। तथाहि –

यस्मादृते न सिद्ध्यति यज्ञो विपश्चितश्चन।
स धीनांयोगमिन्वति।।[1]

अर्थात् योगं विना विदुषः यज्ञकर्म सिद्धिं कर्तुं नैव प्रभवन्ति। योगः कः इति प्रश्नस्य समाधाने उच्यते यत् – **योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः**[2] इति।

अर्थात् चित्तवृत्तीनां निरोध एव योगस्य संसिद्धिः भवति। अर्थात् येन कर्मणा अस्माभिः अस्माकं चित्तवृत्तेः नियन्त्रणं कर्तुं शक्यते स एव योग भवति। शोध पत्रेऽस्मिन् बुद्धचरितमहाकाव्ये योगतत्त्वस्य परिशीलनम् व्युत्पत्तिपुरस्सरं अत्र सुविचार्यते।

वीजशब्दाः – एकाग्रता, समाधिः, योगः कौशलम्, नियमाः, शान्तः च इति।

मूलविषयः –

वेदस्यानन्तरं उपनिषदि अपि योगस्योल्लेखं प्राप्यते। तत्र उपनिषदि योगस्य प्रयोग अध्यात्मरूपमेव भवति। योगस्य नेकाः क्रियाकलापा अपि ब्राह्मणसंहितायां संयोगरूपेण दृश्यते। तस्याः उद्देश्यं वर्तते सिद्धिः। यदा स्य प्रयोगः भवति मोक्षप्राप्तिनिमित्तम्। तदा तत् अध्यात्मयोग इति कथ्यते। अत एव कठोपनिषदि वर्णितं यत् –

तं ददर्श गूढमनुप्रविष्टं गुहाहितं गह्वरेष्ठं पुराणम् अध्यात्मयोगाधिगमेन देवं मत्वा धीरो हर्षशोको जहाति।[3]

अपि च –

यदा पञ्चावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह।
बुद्धिश्च न विचेष्टति तामाहिः परमां गतिम्।।
तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रियाधारणाम्।
अप्रमत्तस्तदा भवति योगो प्रभावाप्ययौ।।

अत्र युर्जिधातुना सह मनस् शब्दस्य प्रयोगो भवति। एतदतिरिच्य मुण्डकछान्दोग्योपनिषत्सु अध्यात्मयोगस्य

प्रयोगं नाम्ना कथयति। यत्र साधकप्रत्यकप्रमादात् विरतो भवति, सः योग इति कथ्यते।

क्रियात्मकयोगस्य रूपं प्रकारादीनां विवरणं सम्यक् रूपेण उपनिषत्सु वर्तते। पुनश्च श्वेताश्वेतरोपनिषदि षडाङ्गयोगस्य वर्णनं स्पष्टरूपेण दृश्यते। एतदतिरिच्य योगः साधकं फलस्य निर्देशं ददाति। उक्तं हि –

न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः।
प्राप्तस्य योगाग्निमयं शरीरम्।।

कठोपनिषदि यमः अमृतपदस्य प्राप्त्यर्थं योगात् उपदिष्टवान्। अतः योगः भारतीयटिन्तनपरम्परायाः प्राचीनतमो दार्शनिकसिद्धान्तः भवति।

युजि इति धातुना घञ् प्रत्यये कृते योगशब्दस्य निष्पत्तिर्जायते। आचार्यः पाणिनिः गणपाठे युज् इति धातोः अर्थत्रयं विदधाति। तत्र दिवादि गणे युज् धातोरर्थः समाधिः। रुधादिगणे युज् धातोरर्थः संयोगः। एवञ्च चुरादिगणे युज् धातोरर्थः संयमनम् अकरोत्।

युज् धातोरर्थः समाधिः भवति। यः योगशब्दस्य मौलिकार्थः भवति। समाधिरिति शब्दस्यार्थः सांसारिकविषयवासना–कामना–आसक्ति–संस्कारादिषु सर्वविधं मालिन्यं दूरीकरणम्। तदानीमेव भगवन्तं प्राप्तुं शक्यते। अर्थात् ब्रह्मजीवयोः एकाकारः यदा एकाकारः भवति तदा तस्मिन् समये समाध्यवस्था प्राप्यते।

महाकवेः अश्वघोषस्य मतानुसारं स्नेहः, तृष्णा, रागयुक्तचेतः प्रियत इति भावः मोहात् आयाति। प्रियजनस्य वियोगः शोकस्य कारणं भवति। यस्मात् उन्मादितं चेतः चाञ्चल्यं प्राप्नोति। अत्र विचलितं हि चेतः अन्येषाम् इन्द्रियाणां सहयोगेन रूपम् अर्थात् शरीरस्य उदयं विनाशं वा गमयति। पुनश्च जन्ममृत्योः कारणं भवति। जन्म, व्याधिः, जरा, मृत्युः, तथा अप्रिय–संयोगः प्रियवियोगः एतानि दुःखानि बौद्धदर्शने निरूपितानि भवन्ति।

चित्तवृत्तिनिरोधः

योगः नाम चित्तवृत्तिनिरोधः। अश्वघोषः कथयति यत् यस्य चित्तः योगरतयुक्तं भवति, तस्य चित्तं शान्तं निर्मलञ्च भवति। योगयुक्तः पुरुषः सर्वदा निर्मलम् अर्थात् शान्तस्वावको भवति। यदा चेतः निर्मलं भवति तदा मनुष्यः स्वस्य सर्वाण्यपि इन्द्रियाणि स्वस्य अधीने नियन्त्रयितुं शक्नोति। उक्तं यथा –

ऋष्यशृङ्गं मुनिसुतं तथैव स्त्रीष्वपण्डितम्।
उपायैर्विविधैः शान्ता जग्राह च जहार च।।

अश्वघोषः चित्तवृत्तिनिरोधः त्राणदायक ति मन्यते। यथा लौकिकवृत्तिः परित्यागं मनः वाणी तथा शरीरस्य शुद्धतायाः साधनमिति मन्यते। एवमेव स्पष्टरूपेण चित्तवृत्तिनिरोधं चित्तस्य अलौकिकवृत्तिरूपेण स्वीकार्यं करोति। मनः वाणी शरीरात् शुद्धिः हि बौद्धपरम्परायाः चिन्तनम् इति कथ्यते।

अष्टाङ्गयोगः –

योगाङ्गानि समाधिम् अधिजिगषूणां कर्तव्यमीमांसां बोधयति। योगसाफल्याय कार्यस्य मनसः इन्द्रियाणां च शुद्धिरभिष्टा। तदर्थं साधनाष्टकं योगसूत्रे प्रतिपाद्यते। एतत् योगाङ्गनाम्ना व्यवह्रीयते। –
यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोष्टाङ्गनि।

यमः –

अहिंसासत्यास्तेयब्रह्म चर्यापरिग्रा यमाः

अहिंसादिः पञ्चकं यम नाम्ना व्यवह्रीयते। तत्र अहिंसा सर्वथा च सर्व भूतानामभिद्रोहः। सत्यं यथार्थे

वाङ्मये। अस्तेयं स्तेयं परस्वादपहरणम्। तदभावोऽस्तेयम्। ब्रह्मचर्यं तु गुढेन्द्रियस्य संयमनम्।

नियमाः –

शौचसन्तोषतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानम्।।

तत्र शौचं नाम मृज्जलादिजनितम् मेध्याथ्यवहरणादि च बाह्यम्। आभ्यन्तरं चिन्तनलानामाक्षालनम्। सन्निहितसाधनादधिकरस्यानुपादित्सा। तपो नाम देवनेदसहनम्। स्वाध्यायो मोक्षशास्त्राणामध्ययनम्, प्रणवजयो वा। ईश्वरप्रणिधानं तस्मिन् परमगुरौ सर्वकर्मार्पणम्।

आसनम् –

स्थिरसुखमासनम्। स्थिरतया दीर्घकालं यावत् सुखेन निषदनम् आसनम् इत्युच्यते। पद्मासनं सिद्धासनं शीर्षासनम् आदीनि योगासनान्यत्र संगृह्यन्ते। यौगासनैः कायरोगचिकित्सापि संज्जायते।

प्राणायमः –

तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः। अर्थात् सत्यासनसमये बाह्यस्य वायोराचमनं स्वासः कौष्टस्यवायोर्निस्सारणं प्रश्वासः तयोर्गतिविच्छेदः प्राणायमः। स च चतुर्विधः। पूरकः, गृहीतः, स्वासस्य अन्तर्निरोधः।

प्रत्याहारः –

स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्य स्वरूपानुकार इव इन्द्रियाणाम् प्रत्याहारः। इन्द्रियाणां स्वविषयोभ्यो निवृत्तिः अन्तर्मुखी वृत्तिश्च प्रत्याहार इत्यभिज्ञायते।

धारणा –

देशबन्धचित्तस्य धारणा। यथा नाभिचक्रे हृदयपुण्डरीके, मूर्ध्नि, ज्योतिषि, नासिकाग्रे, जिह्वाग्रे इत्येवमादिषु देशेषु बाह्यो वा विषये चित्तस्य वृत्तिमात्रेण बन्ध इति धारणा। धारणया मनसो निग्रहः एकाग्रतायाः विषयैकये मनसोऽभिरूचिश्च प्रवर्तते।

ध्यानम् –

तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्। एकाग्रस्य कृते चित्ते ध्येयस्य वस्तुनः एकाकाररूपेण प्रवाहो ध्यानमित्युच्यते। यस्य कस्यापि वस्तुनः स्वमनसि एकाग्रचित्तेन अन्यत्र मनः नैव संस्थाप्य चिन्तनमेव ध्यानम् इति निश्चप्रचं वक्तुं शक्यते।

अत्र एतादृशस्य योगतत्त्वस्य परिशीलनस्य का आवश्यकता इत्युक्ते महाकवेः अश्वघोषस्य बुद्धचरिते महाकाव्ये एतेषां योगविषयाणां निरूपणं क्वचित् दृश्यते। तदर्थं लघुशोधप्रबन्धेऽस्मिन् अस्मिन् पञ्चमाध्याये तस्य योगतत्त्वस्य किञ्चित् निरूपणं विहितम्। तदिदानीं बुद्धचरितमहाकाव्ये एतानि योगतत्त्वानि कथं विससन्तीति विषयमधस्तान्निरूप्यते।

अश्वघोषस्य योगस्याधारः बौद्धमान्यता भवति। तथा दार्शनिकविषयाणां व्याख्यानं कृत्वा बौद्धपरम्परातः एव बीजग्रहणं करोति महाकविः अश्वघोषः। चित्तस्य विषये प्रसङ्गानुसारं वर्णनं विधाय अश्वघोषेन बौद्धाः चेतः प्रकृतेः विकारविशेषरूपेण नैव पश्यन्ति। श्वघोषेन चित्तम् एकम् इन्द्रियविशेषम् इति कथयति। यः चेतः मानवस्य इतरेन्द्रियाणामपेक्षया अतिरिक्ततया भवतीति अश्वघोषेन बुद्धचरिचतमहाकाव्ये वर्णितम्। उक्तं यथा –

षजक्षाणां हि संयोगात् षड्विधयैश्चौव षड्विधा।
चेतनोत्पद्यते वत्स तया वेदनसंम्भवः।।[4]

चेतः अन्येषा पञ्च इन्द्रियाणामुपरि स्वस्य प्राधान्यं स्थापयति। तानि पञ्चेन्द्रियाणि (चक्षुः, श्रोत्रम्, घ्राणः, जिह्वा, कायञ्च) स्वस्वविषयस्य यथाक्रमं (रूपं, शब्दः, गन्धः, रसः तथा स्पर्शः) ज्ञानं चेतसः माध्यमेन एव सम्भवति। चित्तः मन इति इन्द्रियस्य विषयधर्मः भवति। स च चेतः अन्यैः इन्द्रियविशेषैः गृहीतस्य गुणावगुणस्य अनुभवं करोति। तदेव तस्य धर्मो भवति। प्रसङ्गेऽस्मिन् उक्तं यथा बुद्धचरिचते –

सेनाङ्गानां यथाध्यक्षः इन्द्रियाणां तथा मनः।
तस्मिञ्जिते तु सर्वाणि चाक्षाणि विजितानि वै।।[5]

अश्वघोषेन बुद्धचरितमहाकाव्ये चित्तस्य विषये अनेकानि उदाहरणानि निगदितानि। तस्य कथनानुसारं चेतः विविधगतियुक्तः भवति तथा शुभाशुभयोः विचारमपि कर्तुं प्रभवति। अर्थात् किं कर्तव्यं किं न कर्तव्यमिति इति विषयं चेतः ज्ञातुं प्रभवति। प्रसङ्गेऽस्मिन् उक्तं यथा बुद्धचरिचतमहाकाव्ये अष्टमसर्गे –

अविचारयतः शुभाशुभं विषयेष्वेव निविष्टचेतसः।
उपपन्नमलब्धचक्षुषो न रतिः श्रेयसि चेद्भवेत्तव।।[6]
यतः शरीरं मनसो वशेन प्रवर्तते चापि निवर्तते च।
युक्तो दमश्चेतस एव तस्माच्चित्तादृते काष्ठसमं शरीरम्।।[7]

अश्वघोषः बुद्धचरितमहाकाव्ये योगतत्त्वं किञ्चित् स्पृशन्नवदत् यत् षड्विधानि इन्द्रियाणि स्वस्य षड्विधविषयैः सह संयोगेन चेतनायाः उत्पत्तिर्जाते। तथा तया चेतनया वेदनायाः (दुःखस्य) अनुभवो जायते। प्रसङ्गेऽस्मिन् उक्तं यथा –

यावत् किञ्चिददंसर्वं न मे नाहं विजानतः।
अक्षयश्चाव्ययस्तस्य निर्वाणो जायतेऽमलः।।[8]

मनसि वेदनायाः अनुभवः सुखदुःखात्मकञ्च भवति। एतादृशस्य सुखदुःखात्मकरूपायाः वेदनायाः धारको चेतः अहम्, मम इत्यस्य भावस्य धारको भवति। अर्थात् मनुष्यः एतत् मम सुखम्,एतत् तव दुःखम् इति भावं मनसि चिन्तयति। प्रसङ्गेऽस्मिन् उक्तं यथा –

ध्यायतो जायते रागः पुंसो वस्तुगुणान् तथा।
वस्तुदोषविमर्शेन तथा क्रोधोऽपि जायते।।[9]

एवञ्च चित्तस्यानुभूतं सुखं दुःखं मदीयं त्वदीयम् इति स्वाभाविकरूपेण मनुष्यः चिन्तयति। महाकविः अश्वघोषः चित्तस्य लौकिकम् अलौकिकञ्च वृत्तयः समुल्लिखति। बुद्धचरिते षोडशसर्गे बिम्बिसारस्य कृते चित्तस्य इन्द्रियाणां च विषयं बोधयन् अश्वघोषेन बुद्धस्य चिन्तनं प्रकटितम्। तत्रोक्तं बुद्धेन –

हे राजन् ! चेतसः तथा इन्द्रियस्योत्पादः तथा विनाशः भवति। एतस्य उत्पादविनाशस्य धर्मबुद्धिहेतुः अस्माभिः ज्ञातव्यः। उक्तं यथा –

चित्तेन्द्रियरूपैः सह भूप स्त उदयव्ययौ।
सम्यग्ज्ञानां हि सिद्धानां जानातु विजितेन्द्रिय।।[10]
उदयास्तौ च तौ सम्यग्ज्ञेयौ धर्मविवृद्धये।
जिज्ञासुना ततो ज्ञेया स्वकीया कायसंस्थितिः।।[11]

अश्वघोषस्य मान्यातनुसारं स्नेहः, तृष्णा, तथा रागेण युक्तः चित्तः प्रियतायाः भावेन (मोहेन) ग्रस्तो भवति।

प्रियस्य वियोगेन शोकः समुपजायते। येन वियोगेन विचलितं मनः चेतः वा अतीव चाञ्चल्यम् अनुभवति। प्रसङ्गेऽस्मिन् उक्तं यथा –

उदयो भूपरूपस्य व्ययश्चापि जितेन्द्रियः।
चित्तेन चेन्द्रियैश्चैव साकं शश्वतप्रजायते।।[12]

अश्वघोषः चित्तवृत्तिनिरोधमेव त्राणदायकम् इति मन्यते। तथा च लौकिकवृत्तेः परित्यागमेव मनसः वाण्याः तथा शरीरस्य शुद्धिसाधनम् इति चिन्तयति। शीलः यदा अक्षुण्णो विशुद्धो च भवति तदा साधकस्य इन्द्रियाणि चञ्चलानि नैव भवन्ति।

यथा दण्डस्य साहाय्येन शस्यक्षेत्रे पशून् धान्येभ्यः दूरीक्रियते तथैव साधकाः दृढतापूर्वकं स्वस्य षडिन्द्रियाणां स्वस्वविषयेषु संरक्षणं (संवरणम्) वा कुर्युः। यदा इन्द्रियरूपम् अश्वं विषयस्य मध्ये स्वतन्त्ररूपेण त्यज्यते तदा पुरुषः सन्मार्गादपि निवृत्तो भवति। कुकर्मगाम्यश्वमिव मार्गभ्रष्टः रथारोही इव विपत्तिमेव भुङ्क्ते। प्रसङ्गेऽस्मिन् उक्तं यथा –

यथा रून्धन्ति यष्ट्या गा गोपा धान्यादितस्तथा।
षडिन्द्रियाणि शीलेन विषयेभ्यो निवारय।।[13]
यस्येन्द्रियाण्यवश्यानि लभते न च सत्पथम्।
यथारोही कदश्वस्य भवत्यापन्न एव वै।।[14]

अश्वघोषस्य मतानुसारं योगेन (चित्तवृत्तिनिरोधेन) युक्तः चित्तः शान्तः निर्मलश्च भवति। तथा अन्यान्यपि इन्द्रियाणि स्वस्यानुकूलं (निर्मलं शान्तञ्च) विदधाति। एतादृशीं शान्तिमवाप्तुं आत्मवेत्तारं विषयात् (कामोपभोगात्) तथा कस्यापि पदार्थस्योपरि आसक्तितः दूरे तिष्ठेत्। तदेव योगस्य माहात्म्यं भवति। प्रसङ्गेऽस्मिन् निगदितं यत्–

तस्मिन्स्तथा भूमिमपत्तौ प्रवृत्ते भृत्याश्च पौराश्च तथैव चेरूः।
शमात्मके चेतसि विप्रसन्ने प्रयुक्तयोगाम यथेन्द्रियाणि।।15
ऋष्यशृङ्गं मुनिसुतं तथैव स्त्रीष्वपण्डितम्।
उपायार्विविधै शान्ता जग्राह च जहार च।।16

विविधेषु स्थानेषु अश्वघोषः क्लेशयुक्तवृत्तीनां तथा च अशुभवृत्तीनां प्रतिकारस्य मार्गं निर्दिष्टवान्।

अशुभवृत्तीनां प्रतिकार एव समीचीनमिति तत्काव्ये निर्दिष्टम्। अयं च प्रतिकारः शुभवृत्तीनां साहाय्येन एव सम्भवति। तृष्णायाः निरोधं चेतः दुःखनिरोधेन तथा व्रतरूपिणः उत्तमधर्मेण तृष्णायाः विनाशः सम्भवतीति अश्वघोषेन सूचितम्। उक्तं यथा –

यथा भूतार्थविज्ञानादाशु चित्तं विरज्यते।
ततः कामो न वस्तुषु जायते सदसत्सु वा।।[17]

चित्तवृत्तेः व्याख्यानं विधाय अश्वघोषः तां चित्तवृत्तिं करामाशयात् (कर्मणः धर्म धर्मरूपस्संस्कारात्) मुक्तिं प्राप्तुं शक्नोतीति कथयति। उक्तं यथा बुद्धचरिते सप्तदशसर्गे –

कर्माशयविनिर्मुक्तः शुद्धचेता गुरूप्रियः।
हस्तामलकवत्तत्त्व ययौ पश्यन् गुरूं प्रति।। [18]

योगस्य विरोधीतत्त्वं भोगो भवति। येन भोगेन योगं विनश्यति। पालिभाषायां यः योगं करोति तस्य नाम

योगावचर इति। प्रज्ञा, वीर्यं, तथा स्मृतिः एते सर्वेपि योगक्रियायां सहायकाः भवन्ति। योगस्य परिपूर्तये अनित्यस्य अनात्मनः तथा दुःखस्य ज्ञानम् अत्यावश्यकमेव भवति। उक्तं यथा –

दुःखानात्मस्वरूपाश्चापूताऽनित्या हि योषितः।
इति प्रपश्यतां ज्ञानं नः तीभर्ह्रियते मनः।। [19]

विशुद्धिमनसा योगसिद्धान्तस्य स्वरूपमवगन्तुं शक्यते। अशुभकर्मणः फलरूपेण मनुष्यान् दुःखस्वरूपं नरकं तथा पशुयोनिषु जन्मप्राप्तिः भवति। तेषां विषयः वासनासु आसक्तिः। विविधविषयेषु लिप्तः मनः वासनासु आसक्तिः भवति, तेन अशुभकर्मसु लिप्तो भवति। चक्षुः रूपं पश्यति, तथा मनः तस्य रूपस्य स्मरणं करोति। तेनैव ध्यानेन स्मरणेन च कामनायाः उत्पत्तिर्जायते। उक्तं यथा –

तत्रालस्यं तमोविद्धि मोहं मृत्युं च जन्म च।
महामोहस्त्वसंमोह! काम इत्येव गम्यताम्।। [20]

योगः तथा योगाचारशब्दस्य प्रयोगः अट्ठकथायां ध्यानकरणे युक्तः इत्यस्मिन् अर्थे प्रयुक्तः। तदर्थं न केवलं अश्वघोषस्य बुद्धचरितमहाकाव्ये अपि तु सौन्दरानन्दमहाकाव्येऽपि योगशब्दस्य विस्ताररूपेण प्रयोगः विहितः। योग एव सर्वश्रेष्ठः मार्गः मनसः इन्द्रियाणां च इति तस्मिन् महाकाव्ये निरूपितमस्ति। प्रसङ्गेऽस्मिन् उक्तं यथा –

आस्थाय योगं परिगमय तत्त्वं न त्रासमागच्छति मृत्युकाले।
आबद्धसन्नाह सधनुः कृतास्त्रो जिगीषया शूर एवाहवस्थः।। [21]

एवञ्च महाकविना अश्वघोषेन योगतत्त्वस्य स्वरूपं महत्वं संक्षिप्तरूपेण वर्णितं तथा इन्द्रियाणां संयमनस्य कारणमपि योग एव इत्युक्तम्।

संयमनरूपेण दिवा मनोनिग्रहेण यापयितव्यः तथा निद्रामपि रात्रौ दूरीकृत्वा योगभ्यासेन प्रयत्नः कुर्यादिति तस्मिन् सौन्दरानन्दमहाकाव्ये उक्तम्। तथाहि –

मनोधारणाया चैव परिणाम्यात्मवानहः।
विधूय निद्रां योगेन निशामप्यतिमानयेः।। [22]

एवञ्च अश्वघोषेन बुद्धचरितमहाकाव्ये प्रथमसर्गात् अन्तिमम् अष्टाविंशतिसर्गं यावत् योगतत्वस्य तथा तेनैव योगमाध्यमेन कथम् इन्दिरियनिग्रहः भवतीति विषयः महता परिश्रमेण सुवर्णितः। यदि विचार्यते तदा वक्तुं शक्यते यत् प्रकृतरूपेण योगस्य माहात्म्यं सर्वेषमपि मानवानां सकलरोगनिवारणाय तथा इन्द्रियनिग्रहाय इदनीं सततम् अपेक्ष्यत एव नास्त्यत्र सन्देहः लेशोऽपि।

उपसंहारः –

शोधपतऽस्मिन् योगतत्त्वस्य विषये योगः कर्मसु कौशलम् इति अनेन सुप्रसिद्धेन वाक्येन अश्वघोषस्य बुद्धचरितमहाकाव्ये योगतत्त्वस्य विषयेऽपि चर्चा कृतावलोक्यते।

सन्दर्भाः –

1. ऋग्वेद 1.18.7
2. प.यो.द.–2.1
3. कठो. 12

4. बुद्ध.च 16.90
5. बुद्ध.च 26.40
6. बुद्ध.च 8.23
7. बुद्ध.च 7.27
8. बुद्ध.च 16.75
9. बुद्ध.च 23.45
10. बुद्ध.च 16.73
11. बुद्ध.च 16.74
12. बुद्ध.च 16.72
13. बुद्ध.च 26.31
14. बुद्ध.च 26.32
15. बुद्ध.च 2.45
16. बुद्ध.च 4.9
17. बुद्ध.च 22.44
18. बुद्ध.च 17.20
19. बुद्ध.च 22.26
20. बुद्ध.च 12.34
21. सौ.न 5.32
22. सौ.न 14.20

सहायकग्रन्थाः –

1. कठोपनिषद्– आनन्दाश्रममुद्रणालयः, १९१४
2. पातञ्जलयोगदर्शनम् – (वाचस्पतिमिश्रविरचित–तत्त्ववैशारदी–विज्ञानभिक्षुकृत योगवार्त्तिकविभूषित–व्यासभाष्यसमेतम्) संपा. डा. श्रीनारायण मिश्रः, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी, सं.– १९९२
3. बुद्धचरितम्. अश्वघोषः.(प्रथमो भागः) (संपा) महन्त श्री रामचन्द्रदास शास्त्री. चौखम्बा विद्या भवन. वारणासी –2009
4. बुद्धचरितम्. अश्वघोषः.(द्वितीयो भागः), (संपा) महन्त श्री रामचन्द्रदास शास्त्री. चौखम्बा विद्या भवन. वाराणसी –2009

Pankajmahana22@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 15–20

संजीव के उपन्यासों का शिल्पगत वैशिष्ट्य

संतोष कुमार यादव
शोधार्थी, पश्चिम बंग राज्य विश्वविद्यालय, बारासात, कोलकाता–700120

शोध–सारांश :–

हिंदी उपन्यासकारों में संजीव का विशिष्ट स्थान है जो विषय की व्यापकता और लेखन कौशल की प्रवीणता के कारण पाठकों के अंतःकरण को झकझोर देते हैं। वस्तुतः जिस रचनाकार का शिल्प पर जितनी अच्छी पकड़ होती है, उसकी रचना उतनी ही बेजोड़ होती है। संजीव के उपन्यासों की कथावस्तु, पात्र, संवाद, देशकाल–वातावरण और भाषा–शैली प्रभावशाली है जो उपन्यास के उद्देश्य को प्रकट करने में सक्षम हैं। पीड़ित, शोषित, उपेक्षित, दलित, आदिवासी, मजदूर, किसान आदि की पीड़ा को साहित्य के धरातल पर चित्रित करते हुए सामाजिक विसंगतियों, आर्थिक विषमताओं, धार्मिक उन्माद, राजनीतिक भ्रष्टाचार और खल पात्रों के शोषण–अत्याचार को उजागर करते हुए इस समस्याओं को जड़ से उखाड़ फेकने के लिए लोगों में नई चेतना का संचार करना इनका मूल उद्देश्य है और इस उद्देश्य को कार्यान्वित करने में इनके शिल्पगत वैशिष्ट्य की अहम भूमिका है।

बीज शब्द :– शिल्प, स्ट्रक्चर, क्राफ्ट, दस्तकारी, तरासना, कौतुहल, बुनावट, लोकगीत, लोककथा, अहेर।

प्रयोगधर्मी साहित्यकार संजीव के उपन्यासों में भाषा और शिल्पगत वैविध्य पर्याप्त देखने को मिलता है। दरअसल शिल्प का संबंध उपन्यास–सृजन के बाह्य पक्ष से है जिसका निर्धारण लेखक की क्षमता और दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। वैसे देखा जाए, तो 'शिल्प' शब्द की व्युत्पति संस्कृत के 'शिल्पम्' शब्द से हुई है जिसका शाब्दिक अर्थ है – मूर्ति कला, हुनर, निर्माण या गढ़न के तत्व अथवा कारीगरी। यह अंग्रेजी के स्ट्रक्चर, टेकनीक, डिजाईन, फॉर्म, क्राफ्ट आदि का पर्याय शब्द है जिसके सन्दर्भ में वृहद हिंदी कोश में कहा गया है – "शिल्प से अभिप्राय हाथ से कोई वस्तु तैयार करने अथवा दस्तकारी या कारीगरी से है।"[1] साहित्य के क्षेत्र में शिल्प का विशेष महत्त्व होता है। इसके लिए कला, रूप, शैली, संरचना आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है। यह लेखक की रूचि और पाठकों की अभीरूचि में संतुलन स्थापित करने का कार्य करता है। रचनाकार अपने विषय को प्रभावात्मक और रोचक बनाने हेतु शिल्प को तरासता है। स्पष्ट है कि अच्छे साहित्य और साहित्यकार की विशेषता में शिल्प–पक्ष का मजबूत होना अति आवश्यक होता है। कथाकार संजीव में और उनकी रचनाओं में यह विशेषता निहित है।

औपन्यासिक तत्वों के अंतर्गत कथावस्तु का स्थान महत्वपूर्ण होता है। किसी भी कृति की मूल कथा को ही कथावस्तु या कथानक कहा जाता है जो रचना के बुनावट का अनिवार्य तत्व होता है। दूसरे शब्दों में कहा

जाए तो, कथा साहित्य में घटनाओं के संगठन को कथानक कहा जाता है जिसके माध्यम से ही कथाकार सामाजिक यथार्थ और विसंगतियों को सबके सामने रखने का प्रयास करता है। इसलिए कथानक या कथावस्तु रोचक, सरस, कौतुहल और प्रभावपूर्ण होना चाहिए क्योंकि किसी भी रचना की सफलता सिर्फ शीर्षक से नहीं बल्कि कथानक के आदि, मध्य और अन्त के साथ उचित सामंजस्य में है जिसके कारण पाठक उस रचना में निहित समस्या को अपनी समस्या से जोड़कर देखने लगता है। संजीव के उपन्यासों की बुनावट पूर्णतः स्वदेशी है जिसका ताना–बाना आंचलिकता की धरोहर पर खड़ा किया गया लोक–जीवन के धड़कन की झंकार है। इनके उपन्यासों की कथावस्तु लोक–जीवन की समस्याओं से जुड़ी होती है जिसमें लोक संस्कृति के मूल्यवान धरोहर लोकगीत, लोकसंगीत, लोककथा और लोकनाट्य का कलात्मक प्रयोग किया गया है। संजीव के उपन्यासों की कथावस्तु में विविधता देखने को मिलता है। कुछ उपन्यासों के कथानक घटना प्रधान हैं, तो कुछ के व्यक्ति प्रधान हैं। इनके अधिकांश उपन्यास घटना और परिवेश के वर्णन से प्रारम्भ होते हैं तो कुछ आत्मकथात्मक, पूर्वदीप्ति तथा अन्य शैलियों से भी होते हैं। 'धार' उपन्यास में स्पष्ट देखा जा सकता है – "जेल का जबड़ा थोड़ा–सा खुला और रिहा होने वाले कैदियों को उगलकर फिर से बंद हो गया। चेहरे का सिपाही सलाखेदार फाटक में ताले बंद करते हुए इत्मीनान की साँस ले रहा था कि तभी उसके कानों में कोई शोर सुनाई पड़ा। उसने पलटकर अन्दर देखा तो एक छोटी–मोटी भीड़ उमड़ती चली आ रही थी। इस शोर में सबसे विचित्र थी किसी नवजात शिशु की रुलाई।"[2]

उपन्यास में कथानक के पश्चात् दूसरा महत्वपूर्ण तत्व पात्र तथा चरित्र–चित्रण है। यह उपन्यास का अभिन्न तत्व है जो उपन्यासकार की कल्पना और यथार्थ की धरातल पर निर्मित सजीव एवं स्वाभाविक प्रतिबिम्ब होता है। वस्तुतः इन पात्रों और चरित्रों के माध्यम से ही कथाकार अपने उद्देश्य को जनता के सामने भली–भांति प्रकट कर पता है। यद्यपि उपन्यास में लेखक के निजी अनुभवों की बड़ी भूमिका होती है। परन्तु पात्र का भी अपना जीवन है और उस जीवन में उसका जीवन–संघर्ष है जिससे वह जद्दोजहद करते हुए एक नए इतिहास का सृजन करता है। ऐसे पात्र अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं के कारण पाठक की स्मृति से कभी ओझल नहीं होते हैं। कथाकार संजीव के उपन्यासों के पात्रों में यह खूबी देखने को मिलती है क्योंकि संजीव तटस्थ होकर पात्रों के चरित्रों का विश्लेषण करते हैं। उनके उपन्यासों के पात्र मानवीय गुणों से युक्त यथार्थ की धरातल पर खड़े हाड़–मांस के मनुष्य हैं जो मेहनत–मजदूरी करने वाले शोषित और पीड़ित वर्ग हैं। संजीव के उपन्यासों की कथावस्तु इन्हीं प्रमुख पात्रों की छाया में पल्लवित, पुष्पित और विकसित होती है अर्थात् इन्हीं पात्रों के चारों तरफ घटनाएँ चक्कर काटती रहती हैं। संजीव के उपन्यासों में प्रमुख पात्रों के रूप में 'किशनगढ़ के अहेरी' का जय, इनरपति सिंह और राजा कक्का, 'सावधान ! नीचे आग है' का उधम सिंह और आशीष, 'धार' का अविनाश, 'पाँव तले की दूब' का लेखक सुदीप्त, 'जंगल जहाँ शुरू होता है' का कुमार, 'सूत्रधार' का भिखारी ठाकुर, 'आकाश चम्पा' का मास्टर मोतीलाल, 'फाँस' का शिवशंकर और मोहनदास, 'प्रत्यंचा' का छत्रपति शाहूजी महराज आदि हैं।

उपन्यास में मुख्य पात्र के साथ–साथ खल पात्र या खलनायक पात्र की भी भूमिका महत्वपूर्ण होती है। दरअसल ये खल पात्र ही अपनी भूमिका से सामाजिक विसंगतियों, अत्याचार, बलत्कार, पाप, शोषण आदि को यथार्थ और व्यापक स्तर पर प्रस्तुत करते हैं, जिससे नायक–नायिका की चारित्रिक विशेषताएं उभरकर सामने

आती है। संजीव ने इन खल पात्रों को अपने उपन्यासों में यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है। 'किशनगढ़ के अहेरी' में ज्योतिषी, इनरपति सिंह, दिग्विजय सिंह रूपई आदि, 'सर्कस' का सर्कस मालिक, 'सावधान! नीचे आग है' का रामबुझारथ सिंह, राजगढ़िया साहब, जावेद साहब, 'जंगल जहाँ शुरू होता है' का मंत्री दुबे, लल्लन जोगी, सोखाइन, नोनिया, परशुराम, 'धार' का मील मालिक महेंद्रबाबू आदि हैं।

मूल चेतना के रूप में प्रकट होने वाले आदर्श पात्र कहीं न कहीं वे शोषित और पीड़ित वर्ग का नेतृत्व करते हैं। वे समाज में नैतिकता और सदाचार को बनाए रखने के लिए अच्छाई और अहिंसा के मार्ग पर चलने का सन्देश देते हैं। संजीव के उपन्यासों में आदर्शवादी पात्रों के रूप में 'सूत्रधार' का नायक 'भिखारी ठाकुर', 'किशनगढ़ के अहेरी' का जय और चाँदनी, 'सर्कस' की झरना, इब्राहीम खान, 'सावधान ! नीचे आग है' का उधम सिंह और आशीष, 'पाँव तले की दूब' का सुदीप्त, समीर और माधो हंसदा, 'जंगल जहाँ शुरू होता है' का डी.एस.पी. कुमार और मुरली पाण्डे, 'आकाश चम्पा' के मास्टर मोतीलाल, 'फाँस' का शिबू आदि पात्रों को लिया जा सकता है।

संजीव के उपन्यासों में संघर्षरत साहसी स्त्री पात्र देखने को मिलते हैं जिसमें चेतना और क्रान्तिकारी भावना कूट–कूटकर भरी हुई है जो पूँजीपति, अनीति, अत्याचार, शोषण और सामंतवादी व्यवस्था से दो–दो हाथ करती हैं। 'किशनगढ़ के अहेरी उपन्यास' में संघर्षशील स्त्री पात्र के रूप में चाँदनी और शोषित–पीड़ित पात्र राधा, सोना, रतिया आदि है। 'सर्कस' उपन्यास की झरना, चंदा, रीता, सुनीता, रूपा, संधू दी आदि स्त्री पात्र है। 'सावधान ! नीचे आग है' उपन्यास की स्वाति, गूंगी, कालिंदी आदि है। 'जंगल जहाँ शुरू होता है' उपन्यास की मलारी, सीता, और बिसराम बहू, 'पाँव तले की दूब' उपन्यास की शिला केरकेटा, तथा 'धार' उपन्यास की मैना और फाँस की 'कलावती' स्त्री पात्र है।

पात्रों के बीच चलने वाली वार्तालाप ही संवाद है जो उपन्यास का तीसरा महत्वपूर्ण तत्व होता है। यह पात्रों के चरित्र–चित्रण को स्पष्ट करने के साथ–साथ कथाकार के उद्देश्य को भी पाठक तक संप्रेषित करने का माध्यम होता है। दरअसल उपन्यास में संवाद या कथोपकथन की भूमिका कथानक के विकास, चरित्रों के चारित्रिक विशेषताओं के उद्‌घाटन, देशकाल तथा वातावरण की सृष्टि एवं उद्देश्य की पूर्ति में सहायक सिद्ध होता है। सच कहा जाए तो, संवादों के कारण ही उपन्यासों में कलात्मकता और प्रभावात्मकता आती है। इस सन्दर्भ में डॉ. श्यामसुन्दर दास का कथन दृष्टव्य है –"हम किसी पात्र का जैसा चरित्र–चित्रण कर रहे हों और जिस स्थिति में तथा जिस अवसर पर वह कुछ कह रहा हो उसी के अनुकूल उसकी बातचीत भी होनी चाहिए। साथ ही वह बातचीत सुबोध, सरस, स्पष्ट और मनोहर होनी चाहिए।"[3] संजीव के उपन्यासों में संवाद योजना पात्रानुकूल है जिसमें सजीवता, सरलता, सरसता, रोचकता, प्रभावात्मकता, उद्देश्यपूर्णता, विश्वसनीयता और संक्षिप्तता के गुण विद्यमान हैं। 'सावधान! नीचे आग है' में उनके संवाद कौशल की इस विशेषता को देखा जा सकता है –

साहेब!!

ऊँऽऽऽ....!

आपो का बाल–बच्चा है, औ हमरो है। अइसा कौनो जतन कीजिए जे दूनो का पेट भर जाये।

पेट नहीं भरता आपका?

खाक भरेगा? कोयला ढोने का ठेका खतम, सूद का कारोबार खतम।

नौकरी तो सलामत है।

नौकरी के नाम पर उन्होंने ऐसा वितृष्ण मुहँ बनाया कि साहब देख लेते तो दया आ जाती।"[4]

संजीव के उपन्यासों में संवाद योजना पात्रानुकूल, स्पष्ट और आकर्षित होता है जिसे 'सर्कस' उपन्यास में देखा जा सकता है – "भैया हमरे सरकसवा में फिलिम बना लो, हीरो बोला दुत....बोई छोकड़ी जो नया–नया आया है कामना। कामणा नहीं कामणी।"[5]

दरअसल प्रकृति आदिकाल से ही साहित्यकारों की सहचरी रही है जो कभी अनुकूल तो कभी प्रतिकूल रूप में जीवन के जीवंत यथार्थ को प्रस्तुत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वस्तुतः घटना के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देने वाली प्रकृति या यूँ कहे देशकाल और वातावरण उपन्यास का चौथा महत्वपूर्ण तत्व है, जो कथानक को वास्तविकता देने के साथ–साथ पात्रों के व्यक्तित्व और घटना–क्रम को भी स्पष्ट करता है जिसके महत्त्व को रेखांकित करते हुए 'बाबू गुलाबराय' का मंतव्य है कि – "जिस प्रकार बिना अँगूठी के नगीना शोभा नहीं देता उसी प्रकार बिना देशकाल के पात्रों का व्यक्तित्व भी स्पष्ट नहीं होता है और घटना–क्रम को समझने के लिए भी इसकी आवश्यकता होती है।"[6] दरअसल उपन्यास को यथार्थ की धरातल पर जीवंत रूप में खड़ा करने की सबसे बड़ी भूमिका देशकाल और वातावरण का ही होता है क्योंकि देशकाल और वातावरण में उस काल की रीति–रिवाज, आचार–विचार, रहन–सहन तथा सामाजिक विसंगतियों एवं विशेषताएँ निहित रहती है। इस सन्दर्भ में डॉ. श्यामसुन्दर दास का मंतव्य दृष्टव्य है – "देशकाल से हमारा तात्पर्य उसमें वर्णित आचार–विचार, रीति–रिवाज, रहन–सहन और परिस्थिति आदि से है।"[7]

संजीव ने कभी कोयलांचल के खदान का, तो कभी भारत–नेपाल के समीपवर्ती भू–भाग का, तो कभी घने जंगल में विचरण करने आदिवासी परिवेश का, तो कभी सूखे की मार से पीड़ित किसान के बंजर खेत–खलिहान का दृश्य प्रस्तुत किया है। इनके उपन्यासों में देशकाल और वातावरण के अंतर्गत लोक–जीवन की आँचलिक स्वरूप और प्राकृतिक वातावरण का बिम्बात्मक चित्र अंकित हुआ है जिसके कारण उपन्यास का समूचा परिवेश आकर्षण और विश्वसनीय प्रतीत होता है। 'सावधान! नीचे आग है' उपन्यास में लेखक ने झरिया शहर के प्राकृतिक वातावरण का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है – "आग की नदी दामोदर और धुँआसे का शहर झरिया ! कुहासा नहीं, धुआँसा ! धूल, धुआँ और कुहासा – इनसे मिलकर एक शब्द बनता है धुआँसा। इस धुआँसे के जाल में उलझ तारों की झिलमिलाहट लिये जल रही हैं दूर–दूर की बत्तियाँ ! दोनों ओर खण्ड–खण्ड जड़ते–टूटते हार्ड–कोक प्लांट की दैत्यमुखी ज्वाला की कतारें।"[8]

'धार' उपन्यास में भी वातावरण का सुन्दर चित्रण देखने को मिलता है – "रात को यह सौन्दर्य बदली का चाँद बन जाता। पेड़ों, लताओं की छाया में जब लालटेन, ढिबरियां और टॉर्च से जंगल के पत्ते–पत्ते चकमकाने लगते, वह सधे कदमों से आती और अपनी माँद में समा जाती, उजाला अब माँद से छिटकने लगता, उसकी खसखस आवाज जब तक सुनाई पड़ती।"[9] भौगोलिक वातावरण कथानक में प्राण फूँकते हैं जिसके कारण पाठक प्रारम्भ से अन्त तक घटना से जुड़े रहते हैं और घटना के उतार चढ़ाव को भली–भांति समझ पाते हैं। 'जंगल जहाँ शुरू होता है' उपन्यास में उप–पुलिस अधिकारी सिंहा साहब पश्चिमी चंपारण की भौगोलिक वातावरण का वर्णन करते हैं– "यहाँ की भौगोलिक और सामाजिक स्थिति भी उनके अनुकूल पड़ती है। उत्तर

में पड़ोसी देश नेपाल, पश्चिम में पड़ोसी प्रान्त उत्तर प्रदेश, बीच में प्रायः दुर्भेद्य जंगल पहाड़ मीलों फैले गन्ने के खेत, नारायणी नदी के तिलस्मी कछार।"[10] वैसे देखा जाए, तो संजीव के अन्य उपन्यासों में भी देशकाल और वातावरण का वर्णनात्मक शैली में सूक्ष्म चित्रण किया है जिसमें बिम्ब, कौतुहल, आकर्षण, सजीवता और विश्वसनीयता के गुण विद्यमान है।

प्रत्येक कार्य के पीछे कुछ–न–कुछ उद्देश्य जरूर होता है। बिना उद्देश्य का कोई कार्य नहीं होता है। वैसे देखा जाए तो प्रत्येक उपन्यासकार किसी निश्चित उद्देश्य से ही साहित्य का सृजन करता है। इसलिए विषय की गंभीरता और विविधता के कारण उसके उद्देश्य में भी भिन्नता देखने को मिलता है। वास्तव में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से लगभग सभी उपन्यासकार जीवन के यथार्थ का व्यापक चित्रण करते हुए मानवतावादी दृष्टिकोण को स्थापित करते हैं। 'सावधान ! नीचे आग है' में कोयला खदानों में काम करने वाले मजदूरों का दलालों और मालिकों द्वारा शोषण, 'सर्कस' उपन्यास में गायब होती लोक कलाएं और सर्कस के मालिकों का अत्याचार, 'सूत्रधार' में दलितों की सामाजिक दुर्दशा, 'धार', 'जंगल जहाँ शुरू होता है' तथा 'पाँव तले की दूब' में आदिवासी विमर्श और विस्थापन की समस्या, 'किशनगढ़ के अहेरी' उपन्यास में बंधुआ मजदूर का दर्द और जातिभेद की पीड़ा को सिर्फ रेखांकित करना ही संजीव का मूल उद्देश्य नहीं, अपितु इस समस्याओं को जड़ से उखाड़ फेकने के लिए लोगों में नई चेतना का संचार करना भी है।

यद्यपि संजीव के उपन्यासों की भाषा और शैली के सन्दर्भ में कहा जाए तो संजीव की भाषा विविधता से युक्त है जो ग्रामीण अंचल की लोक ध्वनि को लिए हुए है जिसमें अंचल विशेष की विविधता और विशेषता समाहित है। इनके उपन्यासों की भाषा में हिंदी तथा हिंदी की विभिन्न बोलियों के अतिरिक्त संस्कृत, अंग्रेजी, अरबी–फारसी, देशी–विदेशी आदि शब्दों का उचित सम्मिश्रण है जो पाठकों को अपनी ओर खींचता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि संजीव के सभी उपन्यास शिल्पगत वैशिष्ट्य की दृष्टि एक सफल उपन्यास हैं। इनके उपन्यासों की कथावस्तु में पर्याप्त विविधता, नवीनता और मौलिकता है जो जीवन के अनछुए पहलू को चरितार्थ करते हैं तो पात्रों की दृष्टि से संजीव के उपन्यासों में आदिवासी, दलित मजदूर वर्ग के पात्रों की संख्या पर्याप्त है जो पूंजीपति, सामन्तवादी शोषण का विरूद्ध तेज धार है। इनके उपन्यासों के संवाद–योजना से यह विदित होता है कि संजीव पात्रों की योग्यता, शिक्षा, स्थिति–परिस्थिति, परिवेश, घटना, उद्देश्य आदि के अनुरूप संवाद गढ़ते हैं जिसमें उन्हें सफलता मिली है। संजीव के उपन्यासों में देशकाल और वातावरण का मार्मिक चित्रण करने के कारण ही उपन्यास–सौन्दर्य में वृद्धि हुई और समूचा परिवेश एक सहज और वास्तविक वातावरण में परिणत है। कथाकार संजीव के उपन्यासों का उद्देश्य वर्तमान समय की समसामयिक समस्याओं पर आधारित व्यापक और गंभीर है। इनके उपन्यासों की भाषा पात्रों के अनुकूल गढ़ी होती है जो पाठक को यह एहसास दिलाती है कि ये अपने आस–पास के क्षेत्र की भाषा है। अतः अत्यन्त सरल, सहज, और प्रभावशाली शब्दों में मूल गम्भीर बात को कह देने की हुनर संजीव में विद्यमान है।

सन्दर्भ सूची :-

1. (संपा.) प्रसाद, कालिका, वृहद हिंदी कोश, ज्ञान मंडल लि., बनारस, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2000, पृ. 1334.
2. संजीव, धार, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण 2018, पृ० 9.

3. डॉ. सुन्दर, श्याम. साहित्यालोचन, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण, पृ० 155.
4. संजीव, सावधान ! नीचे आग है, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, तृतीय संस्करण 2018, पृ० 99.
5. संजीव, सर्कस, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, तृतीय संस्करण 2018, पृ० 104.
6. गुलाबराय, काव्य के रूप, प्रतिभा प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृ० 182.
7. डॉ. सुन्दर, श्याम. साहित्यालोचन, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण, पृ० 158.
8. संजीव, सावधान ! नीचे आग है, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, तृतीय संस्करण 2018, पृ० 14.
9. संजीव, धार, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण 2018, पृ० 9.
10. संजीव, जंगल जहाँ शुरू होता है, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, चौथा संस्करण 2019, पृ० 08.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 21-25

VAKROKTI AS A POETIC ART

LATHA KUMARI P
Assistant Professor, Dept.of Sanskrit,
Sree Neelakanta Govt. Sanskrit College Pattambi, University of Calicut.

Key words : Kuntaka, Vakrokti, Alankara.

Introduction.

The Vakroktijīvita of Kuntaka is a work of great literary value because it contains many charming and novel ideas about poetic beauty. Later literature typically refers to Kuntaka as the Vakroktijīvitakāra based on the title of his once-famous work, which is named after the principle it elaborates: that the essence (jīvita) of poetry is a certain strikingness of expression (vakrokti). He does not slavishly follow any of his predecessors. He quotes Bhāmaha, Dandi, etc., giving respect to them. But critiques all of them; according to Kuntaka, it is Vakrokti that charms the poetic expression. He has his own perspective on all aspects of literature. The term vakrokti is being used in a particular sense by them. The word has been used in literature from very ancient times onwards and bears several senses. Bāṇabhatta uses the term vakrokti" in the sense of a particular meaning that is gay men's expertise. 'वक्रोक्तिनिपुणेना विलासीजनेन.'। In Amaruśataka also the word is used in the sense of poeticians like Dandi using the word as the opposite of Svabhavokti. भिन्नं द्विधा स्वभावोक्तिवक्रोक्तिश्चेति वाङ्मयम्। He says that Vakrokti is a striking mode of speech based on Slesha and suffering from the ordinary speech Bhahama also uses the word almost in the same sense. According to him Vakrokti is to be present in all Alankaras--वक्राभिधेयशब्दोक्ति इष्टावाचामलंकृति: ।

This paper tries to explain the six varieties of vakrokti as discussed by Kuntaka.

The insistence of Vakrokti stresses two characteristic features of poetry.

1. Poetry takes the words that are commonly used in ordinary language. But diction is different. The poet gives expression to striking combinations that are beyond the usages in ordinary languages.

2. Vakrokti is treated as the soul of poetry. Some politicians, like Vamana considers Vakrokti as a particular mode of expression related with Metaphor or Lakshana--सादृश्यालक्षणावक्रोक्ति ।

Some opines that Vakrokti is only an Alankara and can be said to be भणितिकृतिवैचित्र्यमात्रम्।

The treatment of Vakrokti by Rudrata and Ruyyaka is comparatively narrower than that of Bhamaha and Dandin.

However, the theory of Vakrokti propounded by Kuntaka has originated from the Alankara concept. He gives newer dimensions and depicts the concept of Vakrokti. It is treated as the soul of poetry.

Definition and types of Vakrokti :

Kuntaka gives a detailed explanation of Vakrokti in accordance with the concept of poetry. He says that--

शब्दार्थौ वक्राकविव्यपाराशालिनी बंधे व्यवस्थितौ काव्यम तद्विधाहलादकारिणी[i] ।

Poetry is the harmonious mingling of śabda and artha. This mingling should be with Vakrokti, which is a particular mode of expression.

वणविन्यासवक्रत्वं पदापूर्धवक्रता वक्रताया परोप्यस्ति प्रकार: प्रत्ययाश्रय: ।।

वाक्यस्य वक्रभावोन्यो भिद्यते य: सहस्रधा यत्रालंकारवगोसौ सर्वोप्यंतरभविष्यति ।।

वक्रभाव: प्रकरण प्रबन्धे वास्ति यादृशा: उच्यते सहजाहायसौकुमायमनोहर: [ii]।।

Kuntaka classifies Vakrokti into six varieties. They areVarṇavinyāsavakrata

This Vakrata is almost same to alliteration or Anuprāsa. The letters or syllable or rather sounds that are incorporated in a poetic composition should be beautiful rhyta Matic alliteration will be capable of conveying beautiful meaning. The poet should be careful on the selection of beautifully sounding syllables and words and the selection should accordance with the sentiment

to be suggested. Kuntaka gives a number of examples to substantiate has point of view. This Vakrata has got a number of varieties.

Padapūrvārdhavakrata :

This peculiarity is related to the selection of appropriate words; both nouns and verbs have some peculiarity in conveying meanings. The poet should be conscious in the selection of words according to the context and matter to be portrayed. In the selection of synonyms also the poet should be careful. In the case of certain words, though, they will have the ability to give the proposed meaning, and their usage may become unappropriated. For example, "Siva has many numbers of synonyms. A poet having divine flair for poetic fancy will select the appropriate synonyms:

द्वयं गतं सम्प्रति शोचनीयतां समागमाप्रार्थनया कपालिनः।

कला च सा कान्तिमती कलावत:त्वमस्य लोकस्य च नेत्रकौमुदी[iii]।।

Here Kalidasa has selected the term kapāli as a synonym of śiva. The word capable of suggesting the जुगुप्सा, and hence it is वैदग्ध्यभंगीभणिति ।. This type of Vakrata has a number of varieties. Such as उपचारवकता, विशेषणवक्रता, and संवृतिवक्रता. वृत्तवक्रता, लिंगवक्रता, क्रियावक्रता, etc. A poet having genuine poetic fancy will be able to select appropriate synonyms, number, gender, etc. These selections embellish the beauty of expressions.

Pratyayavakrata

It has got the following varieties:

1. संख्यावैचित्रवाकरता 2. कारकावैचित्र्यवक्रता 3. वचनवैचित्र्यवक्रता ।

Apt usage of singular or plural in some contexts enhances the beauty of expressions. This is called as वचनवैचित्र्यवक्रता। Kuntaka suggests an example from Kālidasa: व्यपारायमास विलोचननि. Here in this example, विलोचनानि is plural, which gives some unexplainable beauty to that expression.

Vākyavakrata :

According to Kuntaka all Alankaras can be included in Vakyavakrata - वाक्यस्य वक्रभावोन्यो भिद्यते य: सहस्रधा यात्रालंकारावगोसौ सर्वोप्यन्तर्भविष्यति। This type of Vakrata is different from the previous because the picture sequence of sentence composition is done by

interspersing Alankaras, and such sentences possess a collective beauty. This भंगीभणिति वैचित्र्यं is pervading all over in the sentences. This can be divided in many ways because there are a multitude of Alankaras.

Prakaraṇavakrata :

The poets have complete freedom in the creation of literary work. They can mold the character of the hero or heroine as their own view. Similarly, when they accepted themes and plots from puranas or ancient classical works, they made necessary changes to enhance the beauty of the work. Such changes make the work more beautiful and enjoyable, and that can be called प्रकरणवक्रता. The changes should be appropriate and should not be felt as harmful for the charm of the story to be narrated. In accordance with the nature of the concept of the changes, the poet makes genuine ideas that are necessary. For example, the story of Śakuntala is taken from Mahābhārata, and Kālidāsa has made several changes. He has introduced the अभिज्ञान and the curse of Durvasa. It creates the dramatic beauty. These modifications have made the drama very beautiful. Hence, such changes can be called Prakaranavakrata. When poets make Rama the hero of their dramas, some avoid certain incidents that are determined by the concept of Dhīrodātta. Some poets avoid the killing of Bali. These kinds of modifications enhance the beauty of the play. Kuntaka says that unnecessary elements should be avoided. And it beautifies the entire literature and is of valuable benefit. A poet should not always stick to the traditional concepts about the framework of dramas. Mahakavyas, etc. If the literary work will be beautiful by avoiding certain factors in the framework, the poet should do so. Dandi says, "न्यूनमप्यत्र यैःकैश्चिदंकैः: काव्यं न दुष्यति। यद्युपात्तेषु संपत्तिरराधयति तद्विधः[iv]। Kuntaka also follows this opinion of Dandi. If the poet feels something is unnecessary, he avoids that by introducing new characters and incidents. So, by these new techniques, the literary works become more charming. In these features of literary work, the fancy of the poet has an important role.

Prabhandhavakrata :

By prabandhavakrata, Kuntaka means the total beauty of the works as well as the message that is being conveyed by the work. What is meant by kavyaprayocana can be said to be Prabhandhavakrata. Kuntaka says that Prabhandhavakrata can be made by employing the

previous five types of Vakrata. A work of art or literature is relishable to the reader, and he should enjoy it. Through this enjoyment his mind should be refined. He should understand that - 'रामदिवत् वर्तितव्यम् न रावणादिवत् इति।' A work of art should have a message, and it should be helpful in reforming the reader. His cultural level should be increased. His mind should be refined. He should be made enlightened and become happy by reading the work. He should have an opportunity to enjoy the blissful pleasure of literature by reading the work. A work that possesses all these qualities can be said to have Prabhandhavakrata.

Conclusion :

Like other aesthetic theories, Vakrokti plays a major role along with Rasa and Dvani. These three theories are accepted by all writers. His types of Vakrata are seen in all writing. So, his Vakroktijivita is considered a milestone in aesthetic thinking. There is no denying the uniqueness and freshness of his perspective, his literary savvy, and his critical thinking, regardless of the merits of his somewhat radical thesis of vakrokti as the essence of poetry, as well as his peculiar classification and nomenclature.

References :

1. Barnett, L. D. "12. The Vakrokti-jivita. A Treatise on Sanskrit Poetics by Rajanaka Kuntala, With His Own Commentary. Chapters I and II. Edited With Critical Notes and Introduction by Sushil Kumar De, M.A., D.Lit. Calcutta Oriental Series, No. 8. 8½×5¼, Xlvii+120 Pp." Journal of the Royal Asiatic Society of Great Britain & Ireland, vol. 56, no. 2, Apr. 1924, p. 296. https://doi.org/10.1017/s0035869x00064443.
2. Chaudhury, Pravas Jivan. "Indian Poetics." Journal of Aesthetics and Art Criticism, vol. 19, no. 3, Jan. 1961, p. 289. https://doi.org/10.2307/428071.
3. Unithiri NVP,Samskrithasahityavimarsam, University of Calicut.
4. Dr.Bhaskaran T,Bharathiya Kavyasastram,Kerala Bhasha Institute2019

lathapalolli@gmail.com

[i] Vakroktijivitha I-7
[ii] Ibid I.19-12
[iii] Kumarasambava V-71
[iv] Kavyadarsa I- 20

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 26-34

गुरू जम्भेश्वर जी : जीवन-वृत्त तथा शिक्षाएँ

बबीता
शोधार्थी, गुरु जंभेश्वर धार्मिक अध्ययन संस्थान, गुरु जंभेश्वर विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, हिसार।

शोध सार :-

इस विश्व धरातल पर अनेक संतों व दार्शनिकों ने जन्म लिया है। उन्होंने अपने शील गुणों तथा उपदेशों द्वारा इस भूमि को पावन किया है। उनके द्वारा दिए गए अविस्मरणीय योगदान के लिए सम्पूर्ण मानव जाति आभारी रहेगी। ऐसे ही समाज सुधारक एवं परम्परा में गुरु जम्भेश्वर का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। उन्होंने ऐसे समय पर जनता का उद्धार किया जब सम्पूर्ण विश्व अज्ञानता तथा अंधकार के गर्त में समा रहा था तब उन्होंने समाज को एक नई दिशा की ओर अग्रसर किया। उन्होंने मनुष्य को सत्य और अहिंसा के मार्ग पर चलने का उपदेश दिया है उन्होनें अपनी सबदवाणी द्वारा मानव जाति को एक नई राह दिखाई है। भौतिकवादी युग में उनकी सबदवाणी एक जड़ी–बूटी के समान है। उन्होंने मानव कल्याण के लिए उन्नत्तीस नियमों का प्रतिपादन किया जो मोक्ष को प्राप्त करने का द्वार है। ये जनमानस में स्फूर्ति का संचार करते हैं। ये उन्नत्तीस नियम आज के भौतिकवादी युग में अमूल्य खजाना है। वे पर्यावरण के प्रति भी सजग पहरेदार थे। उन्होनें हरे वृक्ष को काटना एक अपराध माना है। पर्यावरण की रक्षा करना मनुष्य का धर्म है। हमें अधिक से अधिक पेड़ लगाने चाहिए क्योंकि पेड़ मानव तथा मानवेतर प्राणी के जीवन का सहारा है।

मुख्य शब्द :- उन्मूलन, आध्यात्मिक, भौतिकतावाद, प्रादुर्भाव, युक्तिपूर्वक।

प्रस्तावना :-

संत समाज का अभिन्न अंग होते हैं। समाज में फैली विषमताओं, बाह्य आडम्बरों तथा अन्तर्विरोध को प्रतिबिम्बित कर समाज से उनका उन्मूलन करना उनका मुख्य ध्येय होता है। 'सन्त' शब्द का अर्थ अपने आप में बहुत व्यापक है। यह शब्द उन महान् पुरुषों तथा आध्यात्मिक व्यक्तित्व की तरफ इशारा करता है जिन्होंने अपना पूरा जीवन युगकल्याण में लगा दिया। 'सन्त' शब्द सत् शब्द के कर्ताकारक का बहुवचन है, जिसका अर्थ है साधु, सन्यासी, सज्जन, त्यागी पुरुष। जो सत्य आचरण करता है तथा जिनका जीवन आध्यात्मिकता से ओतप्रोत है वह सन्त है। संत जन के लिए धर्मशास्त्र में चार कसौटी बताई जाती है यथा –

1. सत्य 2. अलोभ 3. क्षमा 4. दया

1. सत्य :-

सत्य सच का पर्यायवाची है। धर्मशास्त्र के अनुसार यह संत तथा महान् पुरुषों के सदाचरण का पहला गुण है। संत की शब्दवाणी ऐसी हो कि श्रोताओं को उनमें जीवन का सार नजर आए। संत का आचरण तथा

व्यवहार समाज को सच्चाई के रास्ते से अवगत कराती हैं।

2. अलोभ :-

किसी भी प्रकार के लोभ लालच से दूर रहना अलोभ की श्रेणी में आता है। बिना लालसा के धर्म–कर्म करना एक संत का अहम् गुण माना गया है। लोभ आचरण को दोषी बनाता है। निष्काम तथा निर्लोभ स्वभाव संत को महान बनाता है।

3. क्षमा :-

क्षमाशीलता तथा सहनशीलता संत का परम् धरम है। दूसरों की गलतियों को क्षमा करके उन्हें उचित मार्गदर्शन प्रदान करना संत के जीवन का ध्येय होता है।

4. दया :-

दया का सम्बन्ध भावना से होता है। मनुष्य में दया एक ऐसा गुण है जो मनुष्य के जीवन को स्वार्थ से ऊपर उठाकर निस्वार्थ भाव से जीने की प्रेरणा प्रदान करती है।

भारत एक धर्म प्रधान देश है। भारतीय धर्म साधना के इतिहास में अनेक महान् विचारकों तथा सन्तों का प्रादुर्भाव हुआ है। जिन्होंने अपनी प्रभावकारी विचारों तथा पवित्र शब्दवाणी से इस जगत को आविर्भूत किया है। उन्होंने समाज कल्याण की भावना से इस जगत में फैली कुरीतियों तथा बाह्य आडम्बरों का विरोध किया है। तथा समाज को एक नए पथ पर अग्रसर होने का संदेश दिया है। उन महापुरूषों के विचार आज के इस भौतिकतावादी युग में उतने ही प्रासंगिक है जितने उस समय थे। भारत की पवित्र भूमि पर अनेक संतों तथा महापुरूषों का प्रादुर्भाव हुआ है जिनमें संत कबीर, रामानुजाचार्य, रामानंद, निम्बार्काचार्य, रहीम, रैदास का नाम उल्लेखनीय है। इन्हीं महापुरूषों तथा सन्त परम्परा आधुनिक युग के पथ प्रदर्शक भगवान गुरु जम्भेश्वर का नाम बड़े आदर तथा सम्मान के साथ लिया जाता है। वे अपने युग के जागरूक प्रहरी थे। उन्होंने समाज में फैली कुरीतियों को पहचाना तथा अपनी शब्दवाणी से उन्हें दूर करने में महत्वपूर्ण योगदान।

गुरु जम्भेश्वर को विष्णु भगवान का अवतार माना जाता है। उनका जन्म राजस्थान राज्य के नागौर जिले के पींपासर नामक ग्राम में भाद्रपद कृष्ण अष्टमी संवत् 1508 में अर्धरात्रि के समय सोमवार को हुआ था। उनकी माता का नाम हांसा देवी तथा पिता का नाम लोहट जी था। दूणपुर के जंगलों में भगवान विष्णु ने हरि के रूप में लोहटजी को दर्शन दिए थे तथा उन्हें अवतार धारण करने का वचन दिया था। अपने दिए वचन के अनुसार उन्होंने लोटतजी के घर पुत्ररत्न के रूप में जन्म लिया तथा भगवान गुरुजम्भेश्वर के नाम से इस विश्व में प्रसिद्ध हुए। उन्होंने बताया कि इस भूमि पर अज्ञान को मिटाने तथा ज्ञान का दीपक प्रज्वलित करने के लिए मैनें अवतार लिया है **'म्हे ऊंडे नीर अवतार लिया'**[1]**।**

इनको भगवान जाम्भोजी नाम से सम्बोधित किया जाता है। जाम्भोजी ने अपने जन्म के बाद अपनी माँ का दूध नहीं पिया था। जन्म के बाद 7 वर्ष तक ये मौन रहे थे। जाम्भोजी सादा जीवन व्यतीत करने में विश्वास रखते थे। वे काफी प्रतिभाशाली थे तथा संत प्रवृति के कारण एकान्त में रहना पसन्द करते थे।

34 वर्ष की आयु में समराथल धोरा नामक स्थान से इन्होंने अपनी अमृतवाणी से जनता को उपदेश देना शुरू किया। वे हमेशा समाज कल्याण की भावना रखते थे। उनके द्वारा दिए गए उपदेश इस जगत में शब्दवाणी के नाम से जाने जाते हैं यदि मनुष्य पर की कृपा हो जावे तो वह इस संसार रूपी भंवर से पार उतर जाता

है। जिस प्रकार काष्ठ के साथ लोहा भी जल से पार उतर जाता है उसी प्रकार संतजनों की संगति से मनुष्य भी संसार से पार उतर जायेगा। गुरु के ज्ञान से मोह–माया का परित्याग कर अनेक विकारों पर काबू पाया जा सकता है।

ज्ञानी के हिरदे प्रमोद आवत अज्ञानी लागत डासूं। [2]

गुरु जम्भेश्वर जी ने जाति–पाति, मूर्ति पूजा व बाह्य आडम्बरों का डटकर विरोध किया है। गुरु जम्भेश्वर जी ने पूरे विश्व का भ्रमण किया। तथा विश्व को युक्तिपूर्वक जीवन जीने तथा मोक्ष प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त किया। जाम्भोजी ने उस समय जनता को सम्भाला जब जनता में गहरी उदासी छाई हुई थी। हिन्दु, मुस्लिम सभी जातियों की स्वतन्त्रता मायूस लग रही थी। तब गुरु जम्भेश्वर ने अपने वचनामृत से सबको भाव–विभोर कर दिया। उन्होंने सबको विष्णु नाम के जप का संदेश दिया। 'विसन विसन तूं भण अजर सखीजै, यह जीवन का मूलं गुरु जम्भेश्वर का मुख्य रूप से कार्यक्षेत्र मरू प्रदेश रहा है सम्वत् 1542 के आस–पास यरू क्षेत्र में भयंकर अकाल पड़ा था। अकाल के कारण मरू प्रदेश में भयंकर अकाल पड़ा था। अकाल के कारण मरू प्रदेश की जनता अपने निवास स्थान को छोड़कर अपने पशुओं के साथ मालवे की ओर जाने लग गये। अकाल की इन परिस्थितियों को देखकर जाम्भोजी को बड़ी चिन्ता हुई। उन्होंने अपनी आलौकिक शक्ति के द्वारा मरू प्रदेश की जनता की सहायता की। लोगों ने संभराथल को ही अपना निवास स्थान बना लिया। ऐसी विकट परिस्थिति में जाम्भोजी ने न केवल शारीरिक बल्कि उनकी मानसिक तथा आध्यात्मिक पिपासा को भी शान्त किया। इसी तरह गुरु जम्भेश्वर जी ने विश्व कल्याण के उद्देश्य से एक पंथ की स्थापना करने का निश्चय किया। अपने निश्चय के अनुसार सम्वत् 1542 में कार्तिक सुदी अष्टमी को कलश की स्थापना करके बिश्नोई समाज की नींव रखी।

'बिश्नोई' दो शब्दों के योग से बना है, बीस नौ अर्थात् जो गुरु जी द्वारा प्रतिपादित 29 नियमों का पालन करता है वह बिश्नोई कहलाता है। ये 29 नियम ने केवल बिश्नोई समाज के लिए अपितु पूरे विश्व को मानवता, भाईचारे तथा उच्च आचरण पर चलने का दिव्य मार्ग बतलाते हैं। इन नियमों का पालन करके कोई भी मनुष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। पद्य में प्रस्तुत उन्नत्तीस नियम इस प्रकार है :–

तीस दिन सूतक, पाँच ऋतुवन्ती न्यारो।
सेरा करो स्नान, शील, सन्तोष प्यारो।।
द्विकाल संध्या करो, सांझ आरती गुण गावौ।
होम हित चित प्रीत सूं होय, वास बैकुंठे पावो।।
पाणी, बांणी, ईन्धाणी दूध इतना लीजै छाण।
क्षमा दया हिरदै धरो, गुरु बतायो जाण।।
चोरी, निदा, झूठ बरजियो, वाद न करणो कोय।
अमावस्या व्रत राखणो, भजन विष्णु बतायो जोय।
जीव दया पालणी, रुंख लीला नहिं घावै।
अजर जरै, जीवत मरै, वे वास बैकुण्ठा पावै।।
करे इसाई हाथ सूं, आन सूं पला न लावै।
अमर रखावै थाट, बैल बधिया न करावै।।

अमल, तमाखू, यांग, मद–मांस सूं दूर ही भागै।
लील न लावै अंग, देखत दूर ही त्यागै।।[3]

ये नियम इस प्रकार है :–

1. तीस दिन सूतक रखना :-

बच्चे के जन्म के पश्चात् बिश्नोई समाज के लोग तीस दिनों तक सूतक रखें। जच्चा के कपड़े तथा बर्तन को अलग रखे। उससे घर का कोई काम न करवायें। तीस दिन तक माँ–बच्चे की पूरी सेवा करें।

2. पाँच दिन का रजस्वला रखना :-

जब स्त्री के मासिक धर्म चक्र परिवर्तन चल रहा हो तब स्त्री को रसोई घर के कामों से दूर रहें। उसे धर्म सम्बन्धी किसी भी कार्य में भाग नहीं लेना चाहिए। उसे सादा भोजन करना चाहिए।

3. प्रातः काल स्नान करें :-

सभी को शौच आदि से निवृत होकर सूर्य उदय होने से पहले स्नान करना चाहिए। स्नान करने के पश्चात स्त्री को रसोईघर में काम करना चाहिए।

4. शील का पालन करें :-

शील का पर्याय आचरण से है। मनुष्य का आचरण श्रेष्ठ होना चाहिए। श्रेष्ठ मनुष्य श्रेष्ठ समाज का निर्माण करता है। गुरु जम्भेश्वर जी ने अपने वचनामृत से मानवीय गुणों का समर्थन किया है तथा उनके दुर्गुण को दूर करने का भरसक प्रयास किया।

5. सन्तोष धारण करें :-

सन्तोष मनुष्य का सबसे बड़ा गुण है। जिस मनुष्य में अपने जीवन में सन्तोष को धारण कर लिया उस मनुष्य ने सभी विकारों पर विजय प्राप्त कर ली। असन्तोष मनुष्य को आध्यात्मिक तथा मानसिक कष्ट प्रदान करता है जबकि सन्तोष मनुष्य को शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक सुख प्रदान करता है।

6. आन्तरिक तथा बाह्य स्वच्छता बनाए रखें :-

ईश्वर ने हमें मानव जन्म रूपी अनमोल रत्न दिया है। गुरु जी ने कहा कि हमें न केवल बाहरी स्वच्छता बल्कि आन्तरिक स्वच्छता को भी बनाए रखना चाहिए। आन्तरिक स्वच्छता से उनका अभिप्राय पवित्रता से है। पवित्रता मनुष्य को काम, क्रोध, मोह, झूठ आदि बुराइयों से बचाती है तथा मनुष्य को सत्यता के मार्ग पर ले जाती है।

7. प्रातः सांय सन्ध्या वंदना करें :-

गुरु जी कहते हैं कि मनुष्य को सुबह तथा शाम ईश वन्दना करनी चाहिए। उन्होंने मन की एकाग्रता को बनाए रखने के लिए विष्णु भगवान के नाम का जप करना चाहिए।

'हिरदै नांव विसन का जंपो, हाथ करो तबाई'।[4]

8. सन्ध्या को आरती एवं हरि गुणगान करें :-

गुरु जम्भेश्वर जी ने सांयकाल की आरती एवं हरिगुणगान को बहुत जरूरी माना है। हरि भजन से मनुष्य का पीवन सार्थक बन जाता है।

9. नित्य हवन करें :-

होम करीलो दिन ठाउविलो सहंस रचीलो।[5]

पर्यावरण को शुद्ध रखना अत्यन्त आवश्यक हैं। पर्यावरण शुद्ध रखने तथा मनुष्य के मन की शान्ति के लिए नित्य–प्रति हवन करें। बिश्नोई पंथ की मान्यता है कि हवन करने से जम्भेश्वर भगवान के दर्शन होते हैं।

10. पानी, वाणी, ईंधन एवं दूध छानकर प्रयोग करें :-

शुद्ध जल मानव जाति को अनेक रोगों से बचाते हैं इसलिए जल को छान कर पीना चाहिए।

जब भी मनुष्य अपनी वाणी का प्रयोग करें उसे बहुत सोच समझकर बोलना चाहिए।

ईंधन का प्रयोग जब भी करें उसे अच्छी तरह झाड़कर करना चाहिए क्योंकि ईंधन में अनेक जीवाणु फंसे होते हैं। गुरु जाम्भोजी कहते हैं कि दूध को प्रयोग करने से पहले छानकर पीना चाहिए क्योंकि दूध में भी कई तरह के जीवाणु होते हैं।

गुरु जी कहते हैं कि हमें अहिंसा के धर्म को अपनाना चाहिए।

11. क्षमावान तथा दयावान रहें :-

मनुष्य हमेशा क्षमावान रहना चाहिए। क्षमा की शक्ति असीम होती है। क्षमाशील व्यक्ति समाज में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करता है। मनुष्य को जीवों के प्रति दयाभावना रखनी चाहिए। हृदय में दयाभावना मनुष्य को अहिंसा का मार्ग प्रशस्त करती है।

12. चोरी न करें :-

चोरी मनुष्य का सबसे बड़ा अवगुण है, चोरी मनुष्य में अनेक विकारों को जन्म देती है। चोरी करने वाला व्यक्ति अपराधी तथा लालची होता है। मानव जाति के उन्नति के रास्ते में गुरु जम्भेश्वर जी चोरी को बहुत बड़ी बाधा मानते हैं।

13. निदां न करें :-

दूसरों में दोषों को ढुंढकर उसकी बुराई करना निंदा की श्रेणी में आता है। निंदा करने वाला व्यक्ति छिन्द्रान्वेषी होती है क्योंकि निंदा के मूल में द्वेष भी भावना छिपी रहती है। इसलिए भगवान जाम्भोजी ने निंदा न करने का नियम बनाया था।

14. झूठ न बोलें :-

झूठ मनुष्य के चरित्र को गिराती है। झूठ किसी अपराध से कम नहीं होता। झूठ न केवल मनुष्य के स्वयं के जीवन में अपितु अन्य जीवों के जीवन में भी असन्तोष उत्पन्न करता है। इसलिए गुरु जम्भेश्वर जी ने झूठ न बोलने पर बल दिया है।

15. वाद-विवाद न करें :-

वाद–विवाद शत्रुता को जन्म देती है। वाद–विवाद आपसी कलह को जन्म देता है। इसलिए गुरु जम्भेश्वर जी ने वाद–विवाद न करने के नियम का दृढ़तापूर्वक पालन करने पर बल दिया है।

16. अमावस्या का व्रत रखें :-

गुरु जम्भेश्वर जी अमावस्या के दिन को पवित्र दिन मानते थे। उन्होंने कहा कि बच्चों तथा रोगियों को छोड़ कर बिश्नोई समाज के लोगों को यह व्रत करना चाहिए। इस व्रत को करने से मनुष्य का तन व मन पवित्र

होता है।

17. विष्णु का जप करें :-

मोक्ष को प्रापत करने का सबसे सरल मार्ग गुरु जम्भेश्वर जी ने विष्णु भगवान के नाम का जाप करना बतलाया है। विष्णु का नित्य प्रति भजन कीर्तन से मनुष्य को आत्मिक शान्ति प्राप्त होती है।

18. प्राणी मात्र पर दया करें :-

गुरु जी कहते हैं कि मनुष्य को समस्त मनुष्य जाति तथा पृथ्वी के सभी जीवों पर दया भावना रखनी चाहिए। दया भावना के कारण ही इस संसार में जीवन संभव है।

19. हरा वृक्ष न काटें :-

गुरु जम्भेश्वर पर्यावरण संरक्षक के मसीहा है। पर्यावरण सन्तुलन को वे जीवन का आवश्यक अंग मानते हैं। वृक्ष सभी जीव जन्तुओं के जीवन का सहारा है। वृक्ष पर्यावरण को शुद्ध रखते है। इसलिए गुरु जी ने वृक्ष न काटने का उपदेश दिया है।

हरा वृक्ष नहीं काटना, यह सबका मन्तव्य।
रक्षा में तत्पर रहें, जान यहीं कर्तव्य।।[6]

20. अजर को जरना :-

जीवन में पाँच अजर हैं :— 1. काम 2. क्रोध 3. लोभ 4. मद 5. मोह।

मनुष्य को इनको वश में रखना चाहिए। जिस मनुष्य ने इन पांचों अजर को वश में रखना चाहिए। जिस मनुष्य ने इन पाँचों अजर को वश में कर लिया उसको मोक्ष प्राप्ति का मार्ग प्राप्त हो जाता है।

21. रसोई अपने हाथ से बनावें :-

आन सूं पलो न लावै का अर्थ है भोजन पकाते समय मलीन व्यक्ति से दूर रहें। रसोई अपने हाथों से बनाने का उनका अर्थ मनुष्य इस नियम का पालन करते समय पवित्र होना चाहिए।

22. थाट को अमर रखना :-

थाट को अमर बनाए रखने का अर्थ है जीवों को अप्रत्यक्ष रूप से होने वाली हत्या पर प्रतिबन्ध लगाना थाट में रहने वाले पशुओं की देखभाल करना।

23. बैल बधिया न करावें :-

बैल बधिया कराने का अर्थ है गुरु जम्भेश्वर बैल बधिया करने को बैल को अर्थात् बछड़े को नपुंसक बनाना। अपराध मानते थे क्योंकि अपने कार्य तथा स्वार्थ सिद्धी के लिए बेसहारा जीवों को पीड़ा पहुंचाना किसी बहुत बड़े पाप से कम नहीं।

24. अमल न खावें :-

गुरु जम्भेश्वर ने अफीम, पोक्त न खाने का उपदेश दिया है क्योंकि नशा नरक का द्वार है। इससे मनुष्य अनेक विकारों से घिर जाता है।

25. तम्बाकू का प्रयोग न करें :-

नशा मनुष्य के जीवन को बर्बाद कर देता है। इसके कारण मानव में अनेक बीमारियां उत्पन्न हो जाती है। दमा, टी.बी. जैसी घातक बीमारी तम्बाकू के कारण ही होती है। इसलिए गुरु जी ने तम्बाकू न प्रयोग करने

का नियम बनाया है।

26. भाँग न पीवें :–

भाँग, तम्बाकू, अफीम ये सभी पदार्थ नशीले है। नशा व्यक्ति को चरित्रहीन बनाता है। इसलिए मनुष्य को हर तरह के सेवन से बचना चाहिए।

27. माँस न खावें :–

गुरु जम्भेश्वर जी ने अहिंसा के मार्ग को अपनाने पर बल दिया है। अहिंसा के नियम का पालन तभी हो सकता है जब मनुष्य माँस न खावें। माँस का प्रत्यक्ष सम्बन्ध जीवों की हत्या करने से है। अतः बिश्नोई समाज के लोग माँस का प्रयोग न करें।

28. मदिरा न पीवें :–

मदिरा के कारण मनुष्य को आत्मिक सुख प्राप्त नहीं होता। मदिरा के कारण मनुष्य में अनेक बुराईयां आ जाती हैं अपने आदर्श चरित्र के लिए मनुष्य मदिरा का त्याग करें।

29. नील व नीले वस्त्र का प्रयोग न करें :–

नील व नीले वस्त्र का प्रयोग गुरु जम्भेश्वर जी अशुद्ध मानते थे :–

'नील न लावै अंग, देखत दूर ही त्यागै।'[7]

गुरु जम्भेश्वर द्वारा प्रतिपादित उपरोक्त उनतीस नियमों में जीवन का सार छुपा हुआ है। ये नियम प्रत्येक प्राणी के जीवन को सुखमय बनाने की जड़ी–बुटी है। ये बिश्नोई पंथ की आचार संहिता है। इन नियमों का महत्व आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना उस समय था। विश्व को भ्रष्टाचार, हिंसा तथा नशा खोरी से मुक्ति देने के लिए उन्होंने इन नियमों की स्थापना की। ये नियम किसी जाति विशेष को घोतक न होकर सम्पूर्ण जाति के कल्याण का प्रतिनिधित्व करते थे। इन नियमों का पालन करके मनुष्य को मानसिक, शारीरिक व आध्यात्मिक सुख की प्राप्ति होती है। ये नरक से मुक्ति तथा स्वर्ग का द्वार है।

मानव, पेड़–पौधे तथा मानवेतर प्राणी के पर्यावरण के तीन महत्वपूर्ण घटक है। पर्यावरण की रक्षा करना हमारा परम धर्म है। गुरु जम्भेश्वर ने पर्यावरण की रक्षा के लिए अनेक उपदेश दिए हैं। वे प्रकृति प्रेमी तथा पर्यावरण के हितकारी थे। उन्होंने 'हरे पेड़ नहीं काटना' नियम भी प्रतिपादित किया।

'सोम अमावस आदितकी, कांय काटी बणरायो।'8

प्रकृति की शुद्धता को बनाए रखने के लिए उन्होंने मृत शरीर को न जलाने का उपदेश दिया था। वे मानते थे कि मृत शरीर जलने से पर्यावरण प्रदूषित होता है इसलिए वे कहते हैं **'ले काया वासैंदर धेमो, दोष लगेलो भारी।'**[9]

बिश्नोई समाज में आज भी शव को दबाने की परम्परा है। वे प्रकृति की रक्षा करते हैं तथा उसकी रक्षा के लिए अपने प्राणों का बलिदान भी समय–समय पर करते रहे हैं। खेजड़ली बलिदान वृक्षों की रक्षा के लिए बिश्नोई समाज द्वारा दिया गया बहुत बड़ा बलिदान है। बिश्नोई समाज के लोग खेजड़ी के पेड़ में गुरु जम्भेश्वर का निवास स्थान मानते हैं।

पर्यावरण की रक्षा करना न केवल बिश्नोई समाज का अपितु पूरी विश्व जाति का परम धर्म है। वृक्षों की अंधाधुंध कटाई से सम्पूर्ण विश्व को भयंकर समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। वृक्षों की कटाई के कारण

मनुष्य ने अनेक जीवों के आश्रय को छीन लिया है। आज पर्यावरण प्रदूषण के कारण अनेक रोगों के जन्म ले लिया है। पर्यावरण प्रदूषण से ग्लोबल वार्मिंग की समस्या दिन ब दिन बढ़ती जा रही है। मनुष्य अपने स्वार्थ पूर्ति के लिए दिन–प्रतिदिन वृक्षों का दोहन करता जा रहा है। भौतिकवादी के इस युग में मनुष्य ने प्राकृति के सन्तुलन को बिगाड़ दिया है।

कालान्तर में लोगों द्वारा दिए गए बलिदान का सम्मान करते हुए हमें प्राकृति की रक्षा करनी चाहिए तथा गुरु जम्भेश्वर द्वारा सुझाए गए मार्ग पर चलना चाहिए।

वे कहते थे :–

'मोरै धरती ध्यान वणासपति वासौ'।[10]

गुरु जम्भेश्वर जी ने ताउम्र जनता की सेवा की तथा उन्हें सन्मार्ग पर लाने का प्रयास किया। उन्होंने पूरे विश्व का भ्रमण किया है। भ्रमण करके सम्पूर्ण मनुष्य जाति को अपनी सबदवाणी से अनुगृहीत किया है। उनकी शब्दवाणी जन्मवाणी नाम से भी जानी जाती है। उनके द्वारा दिए गए 120 सबद ही उपलब्ध है उन्होंने बारह करोड़ जीवों का उद्धार किया। उन्होंने अपने सबद में सौराष्ट्र, दिल्ली, कोंकण, लंका, कश्मीर, कच्छ आदि स्थानों के भ्रमण का वर्णन किया है। उन्होंने अपने सबदवाणी रूपी अमृत से लोगों आत्म ज्ञान को जगाया है तथा सम्पूर्ण मानव जाति को मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करवाया है।

'जुग जागो जुग जाग पिराणी, कायं जांगता सोवो।'[11]

अर्थात् गुरु जम्भेश्वर कहते हैं कि हे जग के प्राणी जागो, उठो। तुम जागते होते हुए भी क्यों सोते रहते हो। इस प्रकार गुरु जम्भेश्वर ने अपनी सबदवाणी से मानव जाति को जीवन जीने का सही रास्ता दिखलाया है।

सग्यराथल भगवान जम्भेश्वर का निवास स्थान रहा था। 85 साल तक मानव जाति का उद्धार करने के बाद उन्होंने इस भौतिक शरीर को त्यागने का निश्चय किया। इसके बाद वे लालासर गाँव के समीप जंगल में स्थित कंकेडी के पास आकर विराजमान हो गयी। सम्वत् 1593 में उन्होंने मार्गशीर्ष नवमी के दिन अपने नश्वर शरीर का त्याग कर दिया। गुरु जम्भेश्वर के साथ उनके अनेक अनुयायियों ने भी अपना भौतिक शरीर छोड़ा था। गुरु जम्भेश्वर जी के अनुयायियों ने एकादशी के दिन उनके भौतिक शरीर को तालवा गाँव के नजदीक समाधिरच कर दिया। अब उनका क्षेत्र मुकाम नाम से प्रसिद्ध है। बिश्नोई समाज के लोग मुकाम में हर वर्ष यात्रा करते हैं।

निष्कर्ष :-

गुरु जम्भेश्वर जी महान् संत, समाज सुधारक तथा सम्पूर्ण मनुष्य जाति के मसीहा थे। उन्होंने अपने वचनामृत विचारधारा द्वारा समाज को एक नई दिशा प्रदान की है। उन्होंने जाति–पाति, बाह्यआडम्बर, हिंसा, शोषण तथा धर्म के नाम पर झगड़ा करने वाले को डांट–फटकार लगाई है। गुरु जम्भेश्वर जी ने भेदभाव रहित समाज की स्थापना के लिए सत्य, शील, दया, अहिंसा, परोपकार, आध्यात्मिक शुद्धता जैसे नैतिक नियमों की स्थापना पर बल दिया है। उन्होंने मनुष्य के लौकिक ज्ञान पर बल दिया है। 'अडसठ तीर्थ हिरदां भीतर, बाहर लोकाचारू अर्थात् सभी तीर्थ मनुष्य के हृदय में ही विराजमान है। इसलिए उन्हें तीर्थों पर ढोंग रचने की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने पर्यावरण के संरक्षण तथा प्रकृति की शुद्धता पर बल दिया है। उनके द्वारा प्रतिपादित

उनतीस नियम मनुष्य के मोक्ष का द्वार है। जो मनुष्य इन नियमों का नित्य पालन करता है उसको स्वर्ग की प्राप्ति होती है। इस प्रकार गुरु जम्भेश्वर ने समाज को जो नई दिशा प्रदान की है। उसके लिए सम्पूर्ण मानव जाति उनकी हमेशा ऋणी रहेगी। उनका अविस्मरणीय योगदान हमेशा मानव जाति का कल्याण करती रहेगी।

सन्दर्भ :-

1. अमर ज्योति मासिक पत्रिका, अंक 8–9, पृष्ठ संख्या 18
2. अमर ज्योति मासिक पत्रिका, अंक 8–9, पृष्ठ संख्या 20
3. अमर ज्योति मासिक पत्रिका, अंक 8–9, पृष्ठ संख्या 48
4. बिश्नोई पंथ और साहित्य, पृष्ठ संख्या 16
5. अमर ज्योति मासिक पत्रिका, अंक 8–9, पृष्ठ संख्या 48
6. अमर ज्योति मासिक पत्रिका, अंक 8–9, पृष्ठ संख्या 9
7. बिश्नोई पंथ और साहित्य, पृष्ठ संख्या 25
8. बिश्नोई पंथ और साहित्य, पृष्ठ संख्या 28
9. अमर ज्योति मासिक पत्रिका, अंक 6, पृष्ठ संख्या 9
10. हीरालाल माहेश्वर, सबद 27, पृ० 87, श्री गुरु जम्भेश्वर साहित्य सभा अबोहर, प्र. स. 2011
11. सबदवाणी, सबद – 86

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 35–45

Health Impact Pathways in Indian Green Buildings: A Conceptual Framework

Astha Singh,
Anupam Kumar Gautam
Department of Environmental Engineering Maharishi Institute of Information Technology, India

Abstract :

Green buildings do not just guarantee smaller environmental impacts but also occupant health through better indoor environments and biophilic features. This article critically explores how six major green building strategies—high-efficiency filtration, passive thermal design, daylight optimization, indoor greenery, and water-quality management—are translated into quantifiable health outcomes in the Indian context. Based on Indian studies published in the literature, government documents, and industry surveys, we correlate design attributes to health Impact (respiratory, cardiovascular, circadian, mental, gastrointestinal, acoustic, and neurological) and determine synergies and trade-offs. We next examine policy and practice interventions—health-oriented rating credits, guidelines, occupant outreach, and monitoring—to bring health to the mainstream of green-building approaches. We conclude by summarizing research holes in longitudinal occupant surveys and sensor-based assessments and outlining directions for future research.

Keywords : Green Building, Indoor Air Quality, Thermal Comfort, Biophilic Design, Water Quality, Acoustic Comfort, Occupant Health and Well-Being

1. Introduction :

Accelerating urbanization in India has led to a deluge of high-density constructions, often sacrificing indoor environmental quality and the well-being of occupants. As a counter measure, voluntary rating schemes like the Indian Green Building Council (IGBC) and GRIHA have abounded, requiring measures that also yield health co-benefits[1]. However, in spite of hearsay reports of improved well-being, there are sparse, comprehensive appraisals of health Impact in Indian green buildings. This paper synthesizes current evidence to respond: How do green-building elements affect physical, mental, and social health aspects in Indian contexts? We continue by:

1. Establishing core health dimensions applicable to built environments;
2. Mapping these dimensions to common green-building strategies;
3. Interpreting Indian case-study results on health indicators
4. Offering policy and practice solutions to incorporate health into green-building agendas.

2. Literature Review :

2.1 Health Dimensions in Buildings

Occupant health in buildings spans three interrelated domains :

a) **Physical Health** : Respiratory, cardiovascular, gastrointestinal Impact related to air, thermal, water, and acoustic quality.
b) **Mental Health:** Stress, mood, cognitive functioning affected by daylight, green space, and environmental noise.
c) **Social Well-Being:** Feeling of community and norms of behaviour created through the common green space and water-harvesting culture[2].

2.2 Green-Building Strategies :

IGBC and GRIHA reward: natural ventilation and high-MERV filtration, shading and thermal mass, daylight-optimized glazing, low-emitting materials, indoor landscaping, rainwater harvesting, and point-of-use water treatment. Each strategy has potential health pathways.

2.3 Indian Evidence on Health Impact :

a) A Delhi office TERI study revealed improved filtration lowered PM□.□ by 60 %, associating with the decline of 20 % of asthma symptoms[3].

b) CSE's Pune pilot showed that shading and cool-roof coatings kept indoor temperatures within ASHRAE comfort ranges, enhancing elderly occupants' cardiovascular comfort scores[4].

c) Bengaluru's GRIHA-rated school reported decreased absenteeism and increased attention spans following indoor planting and daylight retrofits[5].

d) Hyderabad housing clusters with RO plus UV-based point-of-use systems had zero waterborne diarrhea cases post-installation[6].

3. Methodology :

This meta-analysis reports the peer-reviewed articles published in Indian journals, IGBC/GRIHA annual reports, and government reports (MoEFCC, BEE). The selection criteria were:

a) Relevance : Research specifically quantifying health measures in green buildings.

b) Geographic Diversity : Cities from Delhi to Chennai.

c) Building Typology : Offices, schools, clinics, and residential complexes.

Metrics derived: PM□.□ and VOC levels (µg/m³), indoor temperature fluctuation (°C), lighting (lux), waterborne microbial counts (cfu/ml), noise (dB), and subjective stress/productivity scores. We assigned each measure to related green-building attributes employing an analytical scheme that connects physical interventions to body and mind reactions.

4. Conceptual Framework

4.1 Health Impact Pathways :

Strong knowledge of how design aspects of green buildings translate into health Impact involves correlating specific design strategies with physiological and psychological response mechanisms. Each pathway is explained below in relation to main Indian standards and studies.

1. Air Quality → Respiratory Impact :

Interior loads of particulate matter (PM□.□), carbon dioxide, and volatile organic compounds (VOCs) are instrumental in their effects on respiratory well-being. Combinations of high-efficiency filtration (for

example, MERV-13 or HEPA filtration) along with demand-controlled mechanical ventilation are shown to abate interior PM□.□ by as much as 60 %, resulting in a concomitant measureable reduction of asthma attacks and symptoms of allergies for occupants[7].

Natural ventilation techniques—when outside air quality is up to national standards—also dilute indoor pollutants, but need to be supplemented with filtration during periods of extreme pollution to prevent back-drafting of dirty air. Indian structures to CPCB's National Ambient Air Quality Standards show that keeping indoor PM□.□ levels below 35 µg/m³ substantially reduces hospital admissions for bronchial illness. In practice, integrating real-time air-quality sensors with building automation systems allows for dynamic control of ventilation rates, maintaining respiratory comfort without compromising energy efficiency.

2. Thermal Environment → Cardiovascular Stress

Overheating indoors can place cardiovascular stress on occupants, presenting as heart rates, blood pressure, and discomfort, especially among the most vulnerable groups (the elderly, those with pre-existing health conditions). Passive thermal strategies, including thermal mass walls, reflective roofs, and optimized shading, stabilize indoor temperatures within a 3 °C band of outdoor mean, reducing markers of heat stress by around 15 %[8]. During the 2023 Delhi heatwave, structures that used cool-roof coatings in conjunction with cross-ventilation designs experienced fewer cases of heat-related fatigue and dizziness among occupants, consistent with NDMA's heat-action guidelines. Furthermore, keeping operative temperatures within the ASHRAE comfort range (23–26 °C) using combined passive and low-intensity active cooling decreases the incidence of heat-related cardiac events, as per local hospital records. The incorporation of phase-change materials within ceilings and walls provides a further protection layer, which during day-time peak loads absorbs excessive heat and then dissipates it upon low temperature times, thereby levelizing diurnal temperature fluctuations.

3. Daylight Exposure → Circadian Regulation

Exposure to sufficient natural light intensities (300–500 lux at the eye) is critical in coordinating circadian rhythms, controlling melatonin release, and consequently enhancing sleep quality and daytime alertness[9]. Indian homes and workplaces that use daylight-maximized glazing, light shelves, and atrium spaces experience a 20–30 % reduction in occupants' sleep latency and

an increase of 10 % in subjective daytime alertness ratings. Field studies conducted at IIT Madras showed that employees in daylight-sufficient environments went to bed 30 minutes earlier on average and had fewer mid-sleep awakenings. Beyond slumber, accurate daylight distribution further improves cognitive functions, lowering rates of errors on tasks that call for prolonged attention. In counterbalancing glare and thermal gain, double-glazed low-emissivity glass with exterior devices for shading assures visual comfort at the expense of neither daylight penetration nor circadian health, along with energy efficiency.

4. Indoor Greenery → Mental Well-Being :

Biophilic design—incorporating plants, green walls, and indoor gardens—elicits psychological benefits by lowering cortisol levels, decreasing blood pressure, and improving mood and concentration[10]. In a Bengaluru school retrofit, the addition of vertical garden panels in classrooms resulted in a 22 % decrease in student stress markers (assessed through salivary cortisol) and a 12 % increase in standardized attention tests. Similar Impact were noted in hospital waiting rooms in Mumbai, where patients saw a 25 % reduction in anxiety when they sat close to indoor planters. Greenery creates restorative settings that neutralize mental exhaustion, promoting emotional resilience. Low-maintenance plants like Dracaena and Sansevieria offer year-round leaves with few resource requirements. To ensure maximum advantages, green placements must be no more than 3 m from occupants and occupy at least 10 % of wall space where possible, providing unbroken visual linkage to nature.

5. Water Quality → Gastrointestinal Health :

Clean water supply is crucial to the avoidance of waterborne disease. On-site treatment systems—integrating sedimentation, ultrafiltration, UV disinfection, and activated carbon—reliably attain $\geqslant$99.9 % elimination of bacterial pathogens, essentially preventing diarrheal occurrence[11]. One Hyderabad housing complex utilizing point-of-use RO/UV units had zero acute gastrointestinal illnesses over a 12-month monitoring period, relative to significant case rates in nearby traditional communities. Meeting MHFW's microbial standards ($\leq$0 cfu/100 mL for coliform) guarantees national regulations. Rainwater harvesting systems including first-flush diverters and rooftop filtration may augment potable supply during supply shortages, but need to have effective disinfection to protect against microbial contamination.

Preventative system care—every-quarter replacement of the lamp, membrane cleaning—is critical to maintain function and guard digestive well-being.

6. Acoustic Control → Stress Reduction :

Prolonged noise increases stress hormones, lowers attention span, and impedes communication. Sound-absorbing ceiling panels, carpeted floorings, and zone sound masking have been shown to minimize background noise by 15–20 dB(A), placing it below the recommended 50 dB(A) threshold by CPWD for use in offices[12]. In Chennai IT parks with retrofitted acoustic enclosures surrounding mechanical equipment, workers self-reported a 14 % decrease in perceived stress and a 9 % increase in task accuracy. Strategic layout design—locating quiet areas remote from high-traffic corridors—and staggered break times further reduce noise exposure. The integration of physical barriers and behavioral interventions (e.g., noise-sensitive signs) maximizes overall acoustic comfort, promoting mental well-being and productivity.

7. Low-Emission Materials → Neurological Effects :

Interior finishes with low VOC emissions (formaldehyde $\leq$0.1 ppm, total VOCs $\leq$50 $\mu g/m^3$) meet BIS indoor-air requirements and are associated with lower reporting of headaches, dizziness, and decreased cognitive function[13]. Kolkata residents who used GreenPro-certified paints and adhesives reported a 30 % decrease in occupant complaints of headaches and a 12 % increase in self-rated concentration levels during concentrated tasks. Chamber testing for emission per BIS guidelines guarantees that the products pass health-based standards. When choosing finishes, project teams should first look for third-party certification and ascertain emission rates under the local tropical climate where heat and humidity can enhance off-gassing. Synergizing low-VOC materials with improved ventilation further disperses residual emissions, protecting neurological health.

4.2 Mapping Features to Health Dimensions

Feature	Respiratory	Cardiovascular	Circadian	Mental	Gastrointestinal	Acoustic	Neurological
High-MERV Filtration	✓						
Natural	✓	✓	✓				

Feature	Respiratory	Cardiovascular	Circadian	Mental	Gastrointestinal	Acoustic	Neurological
Ventilation							
Thermal Mass & Shading		✓					
Daylight-Optimized Glazing			✓				
Indoor Planting & Green Walls				✓			
Low-VOC Materials							✓
Rainwater Harvest + RO/UV					✓		
Acoustic Panels & Layout						✓	

5. Analysis of Health Impact

5.1 Indoor Air Quality and Respiratory Health :

A six-month pre- and post-measurement multi-office study in Delhi monitored PM□.□ levels after installing MERV-13 filters and CO□-demand-controlled ventilation. Mean PM□.□ reduced from 85 µg/m³ to 34 µg/m³, and the reported incidence of bronchial irritation among workers decreased by 18%[14]. Comparable Impact were documented in Mumbai hospitals, where Infection Control Boards observed a 12 % decline in hospital-acquired pneumonia occurrences following the transition to UV-assisted mechanical ventilation[15].

5.2 Thermal Comfort and Cardiovascular Impact :

CSE's Pune project compared two clinics—one retrofitted with cool roofs and shading, the other without modification. Around-the-clock indoor temperature and heart-rate variability (HRV) monitoring of elderly patients

revealed that the green-retrofit clinic had 24-hr average indoor temps at 27 °C compared to 31 °C in the control, which was associated with a 15 % improvement in HRV indices (lower levels of stress)[16].

5.3 Day lighting and Circadian Synchronization :

IIT-Madras research associated daylight-optimized atrium buildings with better quality sleep. Actigraphy recordings of 50 subjects indicated a 35-minute advance sleep onset and 12 % sleep efficiency increase due to mean indoor illuminance increases from 150 to 350 lux between daytimes[17].

5.4 Biophilic Elements and Mental Health :

In a Bengaluru school, the use of indoor green walls and outdoor learning courtyards resulted in a 22 % decrease in student reported stress scores and a 10 % improvement in attention task performance, as measured through standardized Stroop tests[18].

5.5 Water Quality and Gastrointestinal Safety :

A Hyderabad residential complex had a two-stage RO/UV point-of-use system under their GRIHA requirement. During 12 months, municipal health records reported no acute diarrheal disease among 500 residents, compared to 4.5 per 1,000 population in control areas[19].

5.6 Acoustic Control and Stress Reduction :

Chennai office building studies with acoustic ceiling tiles and sound masking zonal installations reported average reductions in background noise of 65 to 48 dB(A) levels, with 14 % reductions in reported stress levels from occupant surveys[20].

5.7 Low-VOC Materials and Neurological Health :

A comparative study of a household survey in Kolkata revealed that consumers using GreenPro-certified paints ($\leq$50 $\mu g/m^3$ total VOC) reported 30 % less complaint rates for headache and difficulty concentrating within a period of six months[21].

6. Discussion :

The data reveals that green building measures can contribute significant health co-benefits in India. Filtration and ventilation can effectively prevent respiratory risks in unhealthy cities; passive thermal design moderates cardiovascular demands during heat storms; daylighting and biophilia

improve circadian regulation and mood; whereas on-site water purification eliminates diarrhoeal disease exposure almost completely. Yet, synergies and trade-offs arise: increased glazing for daylighting can overload cooling without adequate shading, and efficient HVAC can be at odds with natural ventilation objectives. Contextual variables—occupant behavior, maintenance strategies, and local climate—mediate Impact, emphasizing the requirement for integrated, climate-responsive design strategies.

7. Policy and Practice Implications :

1. **Health-Focused Rating Credits** : IGBC/GRIHA must include compulsory health credits for important parameters—e.g., IAQ levels (PM□.□ < 35 μg/m³), minimum daylight factors (2 %), and indoor plant coverage (≥1 m² per occupant)[22].
2. **Design Guidelines** : Create practitioner checklists that order IAQ, thermal, daylight, and acoustics considerations to provide balanced performance and not individual optimizations.
3. **Occupant Engagement** : Instill training and feedback loops—computer dashboards with real-time air and thermal data presented to occupants—so as to maintain healthy habits (e.g., window opening schedules).
4. **Monitoring and Evaluation :** Require post-occupancy surveys at 6- and 12-month intervals, reporting standardised health measures to rating organisations, thus cstablishing an cvidcncc fccdback loop for ongoing improvement.

8. Limitations and Future Research :

The majority of the studies are cross-sectional with small numbers; there are few longitudinal cohort studies that follow occupants across several seasons. Real-time sensor networks are restricted to pilot initiatives, limiting evidence on temporal variability. Future research should implement city-scale sensor grids combined with wearable health monitors, carry out randomized controlled trials of retrofit interventions, and simulate health Impact under predicted climate stress scenarios to improve resilience strategies.

9. Conclusion :

Within India's urbanizing environment, green buildings provide an influential lever to safeguard and enhance occupant health on respiratory,

cardiovascular, circadian, mental, gastrointestinal, acoustic, and neurological levels. Unlocking such potential involves transparent health integration into rating systems, design guidance striking a balance of co-benefits and trade-offs, engaged occupant participation, and thorough performance monitoring. By integrating health into the nucleus of sustainable design, India has the potential to construct healthier, more resilient communities amidst increasing environmental pressures.

References

1. Indian Green Building Council. (2023). Green Built India Survey 2023. IGBC.
2. GRIHA Council. (2022). GRIHA Rating Manual Version 4.
3. Bureau of Energy Efficiency. (2021). ECBC Resilience Extensions. BEE.
4. TERI. (2020). Indoor air quality improvements in Delhi offices. TERI Journal of Environmental Health, 2(1), 45–58.
5. Centre for Science and Environment. (2023). Heatwave Resilience in Urban Buildings: Pune Pilot Study. CSE Reports.
6. School Infrastructure Development Authority, Karnataka. (2021). Impact of Biophilic Retrofits on Student Well-Being. SIDAK Publication.
7. Hyderabad Metropolitan Development Authority. (2023). Water Quality Management in Residential Complexes. HMDA Report.
8. Central Pollution Control Board. (2022). National Ambient Air Quality Standards.
9. National Disaster Management Authority. (2023). Heat Action Plan Implementation: Delhi.
10. IIT Madras. (2021). Daylighting and Sleep Quality in Residential Buildings.
11. Laskar, A., & Sharma, R. (2022). Biophilic design and stress reduction in schools. Indian Journal of Environmental Psychology, 5(2), 64–79.
12. Ministry of Health and Family Welfare. (2022). National Guidelines for Waterborne Disease Control.
13. Central Public Works Department. (2021). Acoustic Standards for Office Buildings.
14. Bureau of Indian Standards. (2020). Indoor Air Quality—VOC Limits.Kumar, S., & Narayan, J. (2022).
15. MERV-13 filtration and respiratory health in Delhi offices. Journal of Occupational Health, 64(4), e12345.
16. Patel, D., & Reddy, V. (2023). Hospital ventilation upgrades and infection control: Mumbai case study. Indian Journal of Public Health, 67(1), 12–19.
17. Sharma, P., & Mehta, S. (2023). Thermal comfort and HRV in elderly patients: Pune clinic study. International Journal of Gerontology and Geriatric Care, 9(3), 101–115.

18. Raj, P., & Menon, T. (2021). Daylight exposure and sleep patterns: Evidence from Chennai residences. Sleep Science in South Asia, 3(1), 22–34.
19. Srinivas, K., & Bhat, A. (2022). Biophilic retrofits and student performance: Bengaluru school pilot. Education and Environment Journal, 4(2), 50–66.
20. Reddy, H., & Kumar, N. (2023). Point-of-use water treatment and diarrheal disease: Hyderabad housing study. Water and Health Journal, 12(4), 210–222.
21. Iyer, L., & Sundar, R. (2021). Acoustics and stress in Chennai offices. Indian Journal of Acoustics, 6(2), 88–99.
22. Banerjee, S., & Gupta, R. (2022). VOC exposure and neurological symptoms in Kolkata homes. Journal of Indoor Air Quality and Health, 8(1), 31–46.
23. Ministry of Housing and Urban Affairs. (2023). Model Building Bylaws: Health and Safety Criteria. MHUA Publication.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 46-48

कृषिविज्ञानविषयकमन्त्राणाम् अन्वेषणं महत्वञ्च

गणेश चन्द्र पण्डा
शोधार्थी, श्रीवेङ्कटेश्वरवैदिकविश्वविद्यालयः तिरुपतिः।

प्रस्तावना –

चराचरसृष्ट्यर्णवेऽस्मिन् विद्यमानजीवानां जीवनस्याधारभूता वर्तते कृषिः। संसारेऽस्मिन् कृषिविषये विस्तृततया वर्णनं वेदेषु प्राप्यते। ऋग्यजुस्सामार्थवभेदात्मकाश्चत्वारो वेदाः। एते वेदाः ब्राह्मण–आरण्यक–उपनिषत् –षडङ्गादिसहितबहुविस्तृतया प्राप्यन्ते। विद् ज्ञाने धातोः घञ् प्रत्ययकृते वेदशब्दस्य निष्पत्तिर्भवति। वैदिक–संस्कृतसाहित्ये वर्णनं प्राप्यते सर्वज्ञानमयो वेदः। अनेन ज्ञायते वेदेषु समस्तज्ञानविज्ञानस्य वर्णनमुपलभ्यते। संसारस्य कृषिकल्पनाविषये वेदेषु वर्णनं प्राप्यते यत् ओषधीभ्योन्नं अनात् पुरुषः सञ्जातः। अद्भ्यः पृथिवी। पृथिव्या ओषधयः। ओषधीभ्योऽन्नम्। अन्नात् पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः। अन्नं वै ब्रह्म अन्नं वै रसः या ओषधीपूर्वा जाता देवेभ्यस्यस्त्रियुगं पुरा। मनै नु बब्रूणामहं शतं धामानि सप्त च। ओषधयः सर्वविधकल्याणकारकाः भवन्तीति वर्णनं प्राप्यते उपर्युक्तमन्त्रेषु। ऋग्वेदेषु प्राप्तकृषिसम्बन्धिमन्त्रान्वेषणम् –

उतो हि वां दात्रा सन्ति पूर्वा या पुरूभ्यसदस्युर्नितोशे।
क्षेत्रासां ददथुरूर्वरासां धनं दस्युभ्यो अभिभूतिमुग्रम्।।

हे द्यावापृथिव्यौ युवाभ्यां सकासात् दात्रा त्रसदस्यु राजा यानि धनानि क्षेत्राणि च प्राप्तवान् तानि सर्वाणि धनानि भूमिश्च याचकान् मनुष्यान् अददत्। युवाम् अश्व पुत्रः च तं ददथुः, दस्युनां हननार्थमायुधमपि ददथुः।।[१] क्षेत्रस्य पतिना वयं हितेने वजयामसि। गामश्वं पोषयित्वा सनो मृळातीदृशे।।

वयं यजमानाः बन्धु सदृश क्षेत्रस्य पतिना देवेन सह क्षेत्रं जयामः।
सः देवः अस्माकं गवाम् अश्वं पोषणं प्रददातु,
उत सः देवः अस्मान् उक्तप्रकारेण दातव्य धनं दत्वा सुखी करोतु।।[२]
शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम्। शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रा मुदिङ्गयः।।

बलीवर्दाः सुखं यथा भवति तथा वहन्तु। मनुष्याः सुखेन कृषिकार्यं कुर्वन्तु। तथा लाङ्गलमपि सुखेन कृषतु

प्रग्रहाः सुखेन बध्यन्ताम्। प्रतोदं सुखेन प्रेरय।।[३]
अर्वाची सुभगे भव सीते वन्दामहे त्वा। यथा नः सुभगाससि यथा न सुफलाससि।।

हे सौभाग्यवती सीते, त्वम् अभिमुखी भव वयं त्वां वन्दामहे। यथा अस्मभ्यं शोभन धनाभवसि यथा अस्मभ्यं सुफलाससि तथा त्वां वन्दामहे।।[४]

इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषानुयच्छतु। सा नः पयस्वती दुहा मुत्तरामुत्तरां समाम्। इन्द्रदेवः सीताधार

काष्ठां निगृह्णातु, तां सीतां पूषादेवि नियमयतु, सा उदकवती द्यौः संवत्सरस्य उत्तर संवत्सरे दुहां दुह्यात्।।[५]

शुनं नः फाला वि कृषन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अभियन्तु वाहैः।

शुनं पर्जन्यो मधुना पयोभि शुनासीरा शुनमस्मासु धत्तम्।।

फालाः (भूमिविदारकाष्ठाः) सुखं यथा भवति तथा विकृषन्तु। बलीवर्द रक्षकाः बलीवर्दैः सह अभिगच्छन्तु। सुखं यथा भवति तथा पर्जन्यः मधुरैः उदकैः सिञ्चतु। हे इन्द्रवायु वाय्वादि दित्यौ वा सुखम् अस्मासु धारयतम्।।[६]

त्वं नः सोम सुक्रतुर्वयो धेयाय जागृहि।

क्षेत्र वित्तरो मनुषो विवोमदे द्रुहो नः पाह्यंहसो विवक्षसे।।

हे सोम! तव कार्य शोभन प्रज्ञः, क्षेत्रस्थातिशयेन लंभकः, त्वम् अस्माकम् अन्नदानाय जागृहि। किंच दोग्धुः मनुष्याच्छत्रोः सकाशात् अस्मान् रक्ष, पापाश्च अस्मान् रक्ष, त्वं महान् भवसि।।[७]

अक्षैर्मा दिव्यः कृषिमित् कृषस्व वित्ते रमस्वबहु मन्यमानः।

तत्र गावः कितव यत्र जाया तन्वे विचष्टे सवितायमर्यः।।

बहु मद्वचने विश्वासं कुर्वन् त्वम् द्यूतं मा कुरु। कृषिमेव कुरू। वित्ते कृष्या संपादिते धने रतिं कुरू। कृषिकार्येण स्त्रीं प्राप्नोसि अपिच गावः प्राप्नोसि अयं धर्मरहस्यं स्मृतिकर्ता सवितादेवः ईश्वरः मह्यं विविधमाख्यातम्।।[८]

आपो न सिन्धुमभि यत् समक्षरन्त्सोमास इन्द्रं कुल्या इव ह्रदम्।

बर्धन्ति विप्रा महोअस्य सादने यवं नवृष्टिर्दिव्येन दानुना।।

यथा आपः नदीम् अभिगच्छन्ति, लघु लघु कुल्याः ह्रदमभिगच्छन्ति तथा सोमरसाः इन्द्रमभि गच्छन्ति। तादानीमस्येन्द्रस्य महत्वं यज्ञे मेधाविना बर्धयन्ति, यथा यवसस्यं वर्षिता पर्जन्यः दिविभवेन दानेन वर्धयति।।[९]

दैव्या होतारा प्रथमा पुरोहित ऋतस्य पन्था मन्वेमि साधुया।

क्षेत्रस्य पतिं प्रतिवेशमीमहे विश्वान् देवाँ अमृताँ अप्रयुच्छतः।।

हे प्रथमौ मुख्यौ वा पुरोहितौ देवसंबन्धिनौ होतारौ, एतन्नामानौ अग्न्यादित्यौ हविर्भिः अनुगच्छामि। ततः यज्ञस्य पन्थानं कल्याणं विघ्नराहित्येन अनुगच्छामि। अनन्तरं समीपे वर्तमानं क्षेत्रस्य पालयितारम् एतन्नामानम् मरण धर्मरहितान् अप्रमाद्यतः सर्वान् देवान् च धनं याचामहे।।[१०]

नैकमन्त्रेषु एतादृशं महत्वपूर्णं कृषिसम्बन्धिसमस्तज्ञानविषये चिन्तनम् अस्माकमृषिभिः संसारस्य सम्यक्तया सञ्चालनाय तथा समस्तजीवाजीवानां सुखतया संरक्षण–संवर्धनाय च कृतम्।

उपसंहारः –

वयं सर्वे जानीमः अन्नं विना जगतः कल्पना दुष्करा वर्तते। यज्ञादिश्रेष्ठतमकार्याणि अन्नेन सम्पाद्यते। अन्ननिमित्तं सुयोग्यकृषिभूमिज्ञानस्याावश्यकता वर्तते। श्रेष्ठतमबहुधान्योत्पादनाय तथा च कृषिज्ञानविषये सुबोधाय वेदेषु बहुवर्णनं प्राप्यते। अतः मया स्वल्पमत्या कृषिमन्त्राणां विषये अवबोधाय चिन्तनाय च कृषिविज्ञानविषयकमन्त्राणाम् अन्वेषणं महत्वञ्चेति विषयमवलम्ब्य किञ्चित्प्रयास आचरितः। अनेन शोधपत्रमाध्यमेन वैदिकानां शोधार्थीनां च कृते सहायता भविष्यतीति मम विश्वासः।

।।इति शम्।।

सन्दर्भग्रन्थसूचिः –

1. ऋग्वेदसंहिता।
2. यजुर्वेदसंहिता।
3. तैत्तिरीयोपनिषत्।
4. वैदिकसाहित्य का इतिहास।
5. विकिस्रोतः।
6. शतपथब्राह्मणम्।
7. अथर्ववेदसंहिता।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 49–53

The Impact of Political Culture on Policy Making : A Cross-National Study

Banita
Assit. Prof. Pol. Science, M.M.J.K, Charkhi Dadri.

Abstract :-

Political culture profoundly shapes the frameworks, priorities, and processes of policymaking. This cross-national study explores the impact of different political cultures on policy formation and implementation, focusing on liberal democracies, authoritarian regimes, and hybrid systems. Using comparative case studies from the United States, Sweden, China, and India, this paper analyzes how deeply embedded cultural norms, values, and institutional legacies influence political behavior and policy outputs. The findings demonstrate that while institutional structures matter, political culture is a critical and often underestimated factor in shaping national policies, public trust, and governance outcomes.

Keywords :- institution, political culture, liberal democracies, implementation strategies.

1. Introduction :-

Public policy is the product of complex political, economic, and social processes. However, behind institutional mechanisms lies a more subtle yet powerful influence — political culture. Political culture refers to the deeply held norms, values, beliefs, and attitudes that shape the behavior of citizens and political actors. These cultural elements dictate not only how policies are made but also what policies are made and how they are perceived by the public.

In this paper, we explore how political culture influences policymaking across diverse national contexts. By comparing democratic and authoritarian systems and analyzing case studies from the United States, Sweden, China, and India, we aim to uncover how cultural differences manifest in policy priorities, decision-making processes, and implementation strategies.

2. Conceptual Framework :-

2.1 Defining Political Culture :-

Gabriel Almond and Sidney Verba's seminal work *The Civic Culture* (1963) categorized

political cultures into three types :

- **Parochial** : Citizens are mostly uninformed and uninvolved.
- **Subject** : Citizens are aware of the central government but are mostly passive.
- **Participant** : Citizens are active in civic affairs.

These types often coexist in varying proportions in modern societies, influencing policy environments.

2.2 Theoretical Lens :-

This paper draws on the following theoretical approaches :

- **Institutionalism** : Institutions shape political behavior, but institutions themselves are shaped by cultural norms.
- **Constructivism** : Political actors' understanding of norms and values affects their policy decisions.
- **Path Dependence** : Historical legacies influence current policy preferences and capacities.

3. Objectives :-

- To analyze how political culture shapes policymaking processes across different national contexts.
- To examine the influence of cultural values on policy priorities and governance styles.
- To compare the role of political culture in democratic and authoritarian regimes.
- To investigate the relationship between public trust and political culture in policy implementation.
- To identify cultural factors that enhance or hinder effective policymaking in varied systems.

4. Methodology :-

This is a qualitative cross-national comparative study using secondary data, scholarly literature, government reports, and policy analysis. Countries were selected to represent a range of political cultures :

- **United States** – Liberal democracy with individualist culture.
- **Sweden** – Social democracy with collectivist culture.
- **China** – Authoritarian regime with Confucian collectivism.
- **India** – Pluralistic democracy with a hybrid political culture.

5. Political Culture and Policymaking: A Comparative Overview :-

5.1 United States: Individualism and Policy Fragmentation :-

The U.S. political culture emphasizes individual freedom, limited government, and capitalism. These values shape :

- **Policy Priorities** : Emphasis on deregulation, private enterprise, and limited welfare.
- **Policymaking Process** : Strong checks and balances lead to policy gridlock, especially during partisan divisions.
- **Public Participation** : High engagement in electoral politics but declining trust in institutions.

Case Example: The Affordable Care Act (Obamacare) reflected cultural conflict between individualism (opposing mandates) and collectivism (expanding coverage). Its passage revealed deep cultural divides and legislative polarization.

5.2 Sweden: Consensus Culture and Welfare State :-

Sweden's political culture emphasizes egalitarianism, social solidarity, and consensus-building. These values shape :

- **Policy Priorities** : Universal healthcare, social security, education.
- **Process** : Policy negotiated across party lines with public input through corporatist institutions.
- **Public Trust** : High trust in institutions enables policy continuity.

Case Example: Sweden's COVID-19 response — based on expert advice, public trust, and minimal restrictions — reflects its rational, high-trust political culture.

5.3 China: Authoritarian Collectivism and Technocratic Policy :-

Chinese political culture is shaped by Confucian values emphasizing hierarchy, order, and state paternalism. The one-party system promotes :

- **Policy Priorities** : Economic growth, social stability, and national unity.
- **Process** : Technocratic decision-making with limited public participation.
- **Implementation** : Swift and top-down, with strong enforcement.

Case Example: The Belt and Road Initiative (BRI) illustrates China's strategic policy driven by long-term planning and state coordination, aligned with its hierarchical and nationalist culture.

5.4 India : Pluralism, Patronage, and Policy Complexity :-

India's political culture is diverse, blending democratic values with caste, religion, and regional identities. It exhibits:

- **Policy Priorities** : Populism, social welfare, economic reform — often driven by electoral considerations.
- **Process**: Democratic but fragmented, with coalition politics influencing outcomes.
- **Public Engagement**: Vibrant democracy with high participation, but also public cynicism.

Case Example : The implementation of GST (Goods and Services Tax) faced delays and resistance, showing the challenges of consensus in a pluralistic, federal setup.

6. Cross-National Analysis :-

Dimension	United States	Sweden	China	India
Political System	Presidential Democracy	Parliamentary Democracy	One-Party Authoritarian	Parliamentary Democracy
Dominant Culture	Individualist	Collectivist	Hierarchical-Collectivist	Pluralist-Patronage
Policy Style	Conflictual, Legalistic	Consensus-Oriented	Technocratic, Top-Down	Negotiative, Electoral
Trust Institutions	Moderate Low	High	Moderate	Mixed (varies by group)
Implementation Capacity	Fragmented	Strong	Centralized	Uneven

7. Findings and Discussion :-

7.1 Culture as a Filter :-

Political culture filters how institutional tools are used. For example, federalism in the U.S. and India functions very differently due to cultural expectations — autonomy versus negotiation.

7.2 Culture and Policy Legitimacy :-

Public acceptance of policy is deeply tied to cultural norms. In China, public obedience often follows from respect for authority. In Sweden, trust ensures voluntary compliance. In India and the U.S., contestation is more frequent due to cultural pluralism or polarization.

7.3 Cultural Lag and Reform :-

Policy reforms often face cultural resistance. For instance, welfare expansion in the U.S. clashes with its individualistic ethos. Conversely, in China, attempts to introduce participatory mechanisms are limited by the absence of a democratic political culture.

7.4 Culture and Crisis Response :-

During crises (e.g., pandemics), political culture determines whether citizens comply or resist. Sweden's culture allowed soft measures; China enforced strict lockdowns; the U.S. saw political division; India combined both strategies with regional variation.

8. Policy Implications :-

- **Tailoring Reform to Culture** : Policies that align with cultural values are more likely to succeed.

- **Enhancing Legitimacy** : Policymakers must engage with cultural narratives to build trust.
- **Institutional Design** : Reforms in institutions must consider cultural adaptability and historical legacies.
- **Global Governance** : International policies (e.g., climate treaties) must respect cultural contexts to ensure compliance.

9. Conclusion :-

Political culture is not a peripheral variable but a central force shaping policymaking across the world. It influences not only what governments do but how they justify and implement decisions. While institutions provide structure, culture provides the meaning, legitimacy, and direction. As the global order becomes more interconnected, understanding cultural foundations is essential for cooperative policymaking and sustainable governance.

10. References :-

1. Almond, G. A., & Verba, S. (1963). *The civic culture: Political attitudes and democracy in five nations*. Princeton University Press.
2. Chandra, K. (2004). *Why ethnic parties succeed: Patronage and ethnic head counts in India*. Cambridge University Press.
3. Fukuyama, F. (2014). *Political order and political decay: From the industrial revolution to the globalization of democracy*. Farrar, Straus and Giroux.
4. Inglehart, R. (1997). *Modernization and postmodernization: Cultural, economic, and political change in 43 societies*. Princeton University Press.
5. Levi, M. (1998). *Consent, dissent, and patriotism*. Cambridge University Press.
6. Lijphart, A. (2012). *Patterns of democracy: Government forms and performance in thirty-six countries* (2nd ed.). Yale University Press.
7. Mitra, S. K. (2001). *Politics in India: Structure, process and policy*. Routledge.
8. OECD. (2023). *Policy brief: Trust in government and citizen engagement*. Organisation for Economic Co-operation and Development. https://www.oecd.org
9. Putnam, R. D. (1993). *Making democracy work: Civic traditions in modern Italy*. Princeton University Press.
10. Tang, W. (2005). Public opinion and political change in China. *Comparative Politics, 37*(2), 191–208. https://doi.org/10.2307/20072889
11. World Bank. (2022). *World development report 2022: Finance for an equitable recovery*. World Bank Group. https://www.worldbank.org

Mail Id – kumaribanita9090@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 54–56

भाषा बहता नीर

सविता अधाना
सहायक–प्रोफेसर, हिंदी विभाग, भाहीद स्मारक राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, तिगाँव, फरीदाबाद।

भूमिका :–

भाशा को हम लोग एक ऐसी परम्परा के मूर्त रूप में देख सकते हैं जो सदियों से बही चली आ रही है। यह भाशा रूपी धारा अनेक युगों की विशेशताओं, परिवर्तनों और अपने समर्पण को लेकर निरन्तर बह रही है। भाशा को बहते हुए पानी की धारा से जोड़ने के पीछे यहीं कारण है कि जिस प्रकार एक विशाल वेगवती जलधारा अपने रास्ते की सभी कठिनाईयों और बाधाओं को तोड़ती हुई आगे बढ़ जाती है उसी प्रकार भाशा भी भाव व भावनाओं को मूर्त रूप देकर, युगों–युगों से आगे ही बढती जा रही है। समय की परतों में हो सकता है कि कुछ हल्के स्वर दब भी गये हों। लेकिन विकास और उसकी उपयोगिता के कवच ने इसे अमर बन दिया है। भाशा ने ही वानर को मानव बना दिया यह कहना असंगत नहीं होगा। क्योंकि उस प्राचीन समय व सभ्यता को अगर समझे तो जान पड़ता है कि किस प्रकार मनुश्य ने अपने हाव–भाव और अपने बुद्धि कौ ाल से मन में उठने वाली अनेक जिज्ञासाओं, कौतूहल व विचलन को धीरे–धीरे अपने मुख से अनेक प्रकार की ध्वनियाँ निकाल कर अपने हर्श, विशाद, उल्लास, क्रोध, प्रेम, भूख, प्यास आदि के लिए प्रयोग किया होगा।

भाशा उत्पत्ति की खोज और उसके विकास के विशय में हमारे पास अनेक सिद्धान्त व साक्ष्य माने जाते हैं जैसे– दैवी सिद्धान्त के अन्तर्गत जिसमें भाशा को वैदिक धर्मावलम्बी वेद को अनादि और ई वर निर्मित मानकर इसे नित्य कहते है,

"दैवी वाचमजनयन्त देवाः
ता विश्वरूपा पशवो वदान्ति।"[1]

इसके साथ–साथ ही संकेत सिद्धान्त, धातु सिद्धान्त, आवेग सिद्धान्त, यो–हे–हो सिद्धान्त, अनुकरण सिद्धान्त, इंगित सिद्धान्त, सम्पर्क सिद्धान्त, संगीत सिद्धान्त, समन्वय सिद्धान्त आदि कितने ही भाशा उत्पति के सिद्धान्त अपने विवेक ील व तर्क भाक्ति से भाशा उत्पत्ति के प्रमाण देने के लिए प्रयास करते नजर आए। इस प्रकार अन्त में यहीं निश्कर्श निकला कि ध्वनियों का आधार पा कर भाशा, भाब्द, पद, वाक्य और अर्थ अभिव्यक्ति के रूप में हमें प्राप्त हो गई। भाशा का हमारे विकास के लिए बहुत महत्व है। यह बात कोई नहीं नकार सकता कि यदि भाशा न होती तो हम ि ाश्ट मानव कैसे बन पाते? और मन, बुद्धि की हलचल व भावों को महसूस कर किसी के सामने कैसे व्यक्त कर पाते? भाशा ने ही भावों को अभिव्यक्ति प्रदान की है यथा– "मनुश्य और मनुश्य के बीच वस्तुओं के विशय में अपनी इच्छा और मति का आदान–प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि संकेतों का

जो व्यवहार होता है उसे भाशा कहते है।"[2]

वि व में लगभग 3000 भाशाएँ मानी जाती है। ये भाशाएँ मुख्य रूप से तीन प्रकार के रूप में स्वीकृत है। पहला है भाशा का मौखिक या वाचिक रूप और दूसरा है सांकेतिक रूप व तीसरा भाशा को स्थायीत्व और मानवीकृत व परिनिश्ठ करने वाला रूप है लिखित। मूल रूप से भाशा को केवल मुखोच्चरित ही माना जाता हैं। आगे के दोनों भाशा रूप मुखोच्चरित भाशा के सहायक के रूप में काम करते हैं यथा– डॉ० भोलानाथ तिवारी के अनुसार, "भाशा निि चत प्रयत्न के फलस्वरूप मनुश्य के मुख से निःसृत वह सार्थक ध्वनि समश्टि है जिसका वि लेशण और अध्ययन हो सके।"[3]

भाशा के विशय में बात करते समय हमें इसके मूल तत्व के रूप में भाव को समझना चाहिए क्योंकि भाशा के उच्चारण– श्रवण पक्ष को वाक् कहते हैं तो बोध पक्ष को भाशा। भाशा का स्वरूप सूक्ष्म और भावनात्मक है तो भाशा में अन्तर्निहित वाक् का स्वरूप स्थूल और भौतिक है। अमर को ा में भाशा को वाणी का पर्याय बताते हुए कहा गया है – 'ब्रह्म तु भारती भाशा गीर् वाक् वाणी सरस्वतरी।"[4]

भाशा का मूल कार्य सम्प्रेशण है। यह वह क्रिया है जो भावों की संवाहिका का कार्य करती है। सम्प्रेशण में एक वक्ता और श्रोता के विचारों के आदान–प्रदान का माध्यम भाशा माध्यम के रूप में करती है। सम्प्रेशण तभी सफल माना जाता है जब वक्ता व श्रोता के बोध का साधन वह भाशा होनी चाहिए जो दोनों को समझ आए यथा– रोमन याको सन के अनुसार, 'वक्ता, श्रोता के लिए जो कोड, देगा वह संदर्भमूलक होगा क्योंकि सम्प्रेशण सन्दर्भ के बना असम्भव हैं।"[5]

संसार में अनेक भाशाएँ बोली जाती है क्योंकि जैसे–जैसे वह भौगोलिक व सांस्कृतिक परिवे ाों में आगे बढ़ती है और स्थान वि ोश की आव यकताओं अनुरूप अपने आप को ढाल लेती है तभी तो कहा भी गया है 'चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर वाणी।'

परिवार के आधार पर संसार की समस्त भाशाओं को 12 भाशा परिवारों में बांटा गया है। परन्तु कुछ विद्वान इस बात से सहमति नहीं रखते है। डॉ० भोलानाथ तिवारी व जर्मन विद्वान विटहेल्य फॉन हम्बोल्डट ने इस बात पर विस्तार से विचार करके संसार में कुल 13 परिवार माने थे।"[6] ये परिवार निम्नलिखित है :–

1. द्रविड़ भाशा परिवार।
2. चीनी अथवा एकाक्षरी परिवार।
3. सैमेटिक–हैमेटिक (सामी–हामी परिवार)
4. यूराल–अल्टाइक परिवार।
5. काकेि ायस परिवार।
6. जापानी–कोरियाई परिवार।
7. मलय–पॉलिनेय ा परिवार।
8. आस्ट्रो–एि ियाई परिवार।
9. बु ामैन परिवार।
10. बांटू परिवार।
11. सूडान परिवार।

12. अमरीकी परिवार।

13. भारोपीय परिवार आदि।

भाशा के आकृति–मूलक वर्गीकरण को भी बहुत प्रसिद्धि प्राप्त हुई। यह वर्गीकरण को भी वर्गीकरण, रूपात्मक, व्याकरणिक, वाक्यात्मक, पदात्मक, पदाश्रित के नाम से भी जाना जाता है। "वि व की भाशाओं का आकृतिमूलक वर्गीकरण सर्वप्रथम प्रो० भलेगल ने किया था।"[7]

वि व की अनेक भाशाएँ अपने–अपने संरचनात्मक रूप में भिन्नताएँ लिए हुए है। भाशिक संरचना में भाशा में अनेक स्तर आते हैं। जैसे हिन्दी भाशा में ध्वनि स्तर, भाब्द स्तर, रूप स्तर, वाक्य स्तर होता है। भाशित संरचना में विभिन्न स्तर के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। "हॉकिट पांच स्तर मानते हैं – 1. व्याकरणिक, 2. स्वनिमिक, 3. रूपस्वनिमिक, 4. आर्थी, 5. स्वनिक।"[8]

वहीं डा० भोलानाथ तिवारी जी अपने निजी मत से भाशिक संरचना के मूलतः चार स्तर स्वीकार करते हैं। भाशा के साथ अर्थ का सम्बन्ध ऐसा है जैसा कि भारीर के साथ आत्मा का, भाशा से यदि अर्थ की प्राप्ति ही नहीं होगी तो भाशा का अस्तित्व ही नहीं रहेगा। भाशा के दो आधार माने जाते हैं। एक मानसिक (Psychological aspect) और दूसरा (Physical aspect)। इन दोनों के मिलने से भाशा बनती हैं। इनको ही बाह्य भाशा (Outer speech) तथा आन्तरिक भाशा को (Inner speech) भी कहा जाता है।

निष्कर्ष :-

भाशा की अनेक वि ोशताएँ और प्रकृति है जैसे– भाशा एक अर्जित सम्पत्ति है अर्थात् भाशा को हम प्रयत्न करके सीखते है। भाशा की एक अन्य महत्वपूर्ण वि ोशता है। भाशा की अनुकरण से बहुत घनिश्ठता है। भाशा अनुकरण करते–करते स्वयं ही पीछे–पीछे आ जाती है। इसके अतिरिक्त भाशा की अन्य वि ोशता है भाशा संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर जाती है।

संदर्भ :-

1. डॉ० नरे ा मिश्र, भाशा विज्ञान और मानक हिन्दी, पृ०–40, (ऋग्वेद 8–1000–11)
2. डॉ० गोविंद पाण्डेय, हिन्दी भाशा एवं साहित्य का वस्तुनिश्ठ इतिहास, पृ०–1
3. वहीं, पृ०–1
4. डॉ० नरे ा मिश्र, भाशा विज्ञान और हिन्दी भाशा, पृ०–19
5. वहीं, पृ०–5
6. डॉ० भोलानाथ तिवारी, भाशा विज्ञान, पृ०–108
7. डॉ० गोविंद पाण्डेय, हिन्दी भाशा एवं साहित्य का वस्तुनिश्ठ इतिहास, पृ०–3
8. डॉ० भोलानाथ तिवारी, भाशा विज्ञान, पृ०–16

7404472870

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 57–63

सुप्रसिद्ध अमृतलाल नागर रचित 'मानस का हंस' उपन्यास में वस्तु विधान

डॉ. नेहा भाकुनी
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभागाध्यक्ष, पं0 बद्रीदत्त पाण्डे परिसर, बागे वर, उत्तराखण्ड।

सार :–
वस्तु उपन्यास का एक महत्वपूर्ण तत्व है। उपन्यास के शेष तत्व, पात्र, वातावरण, संवाद, भाषा शैली तथा उद्देश्य सभी मिलकर वस्तु को एक निश्चित रूप प्रदान करते हैं। मात्र वस्तु के शिल्प रूप में प्रयोग नहीं हुए है। चरित्र–चित्रण, वातावरण तथा उद्देश्य में भी प्रयोग हुए हैं। और इन्हीं सब प्रयोगों ने वस्तु की सीमा रेखा को नवीन रूपाकार दिया है। नये विषय, नये शिल्प की माँग करते हैं। वस्तु के शिल्प रूप के अन्तर्गत होने वाले प्रयोग इसी का परिणाम है। वस्तु के शिल्प रूप में होने वाले प्रयोगों का विभिन्न स्थितियों में देखा जा सकता है, इन्हीं स्थितियों में उपन्यासकार या तो परम्परा का निर्वाह करता है या नवीन अन्वेषण करता है।

बीज भाब्द – समन्वयात्मक, इतिवृत्तात्मकता, औपन्यासिक।

प्रस्तावना :–

वस्तु के विभिन्न रूप– वस्तु को शिल्प रूप प्रदान करने के लिये जो प्रयोग किये जाते हैं उन्हें ही अनेक रूपों में देखा जा सकता है। नागर जी ने अपने उपन्यासों में वस्तु के इन विभिन्न रूपों को सामाजिक, ऐतिहासिक, पौराणिक और सांस्कृतिक तथा जीवनी आदि विभिन्न स्थितियों में चित्रित किया है। नागरजी के उपन्यास में इन्ही रूपों को लेकर उनकी वस्तुगत चेतना के विकास का अनुशीलन करेंगे – (क) प्रस्तुतीकरण – नागर जी अपने भिन्न–भिन्न उपन्यासों में वस्तु का प्रस्तुतीकरण भिन्न–भिन्न प्रकार से किया है। कहीं वे वस्तु का प्रस्तुतीकरण वस्तु की प्रकृति के अनुसार संभावित घटना की भूमिका के रूप में करते हैं। जैसे –'मानस का हंस' और 'खंजन नयन' उदाहरण था ''वृन्दावन से लगभग दो कोस पहले ही पानी गाँव के पास वाले किनारे पर खड़े चार–छः लोगों ने सुरीर से आती हुई नाव को हाथ हिला–2 कर अपने पास बुला लिया।'' मथुरामती जइहौ। आज खून की मल्हारै गाई जा रही हैं बाँपे।'' सुनकर नाव पर बैठी सवारियाँ सन्न रह गयी, उन्नीस–बीस जने थे, तीन को वृन्दावन उतरना था, बाकी सभी मथुरा जा रहे है। सभी के होश हवास सूली पर टंग गये।'' आखिर बात का हुई भैयन''। .....नाव से करीब–करीब सभी लोग बातें सुनने के लिये किनारे पर आ गये थे केवल एक अंधा नवयुवक और दो बुढ़ियाँ ही बैठी रही।[01] यहाँ अंधे नवयुवक शब्द से 'सूर' की उपस्थिति दिखलाने का प्रयत्न है। यहीं पर 'सूर' के जन्मान्ध होने की बात को भी प्रस्तुतीकरण द्वारा ही चित्रित किया गया

है।

प्रारम्भ, विकास और चरमसीमा :-

नागर जी के उपन्यासों में प्रारम्भ बड़े ही रोचक एवं उत्सुकता पूर्ण वातावरण में होता है। कुछ उपन्यासों में कथानक वर्तमान में अन्त से प्रारम्भ होकर अतीत में जाकर पूर्ण होता है। 'मानस का हंस' कहीं–2 कथानक का प्रारम्भ वातावरण या घटना को लेकर और कहीं किसी पात्र के परिचय द्वारा होता है। नागर जी ने अपने उपन्यासों की वस्तु को विभिन्न भौलियों में विकसित किया हैं।

'मानस का हंस' प्रख्यात लेखक अमृतलाल नागर का प्रतिष्ठित वृहद उपन्यास है। इसमें पहली बार 'रामचरितमानस' के लोकप्रिय लेखक गोस्वामी तुलसीदास के जीवन को आधार बनाकर कथा रची गई है, जो विलक्षण रूप से प्रेरक, ज्ञानवर्धक और पठनीय हैं। इस उपन्यास में तुलसीदास का जो स्वरूप चित्रित किया गया है, वह एक सहज मानव का रूप है। यही कारण है कि 'मानस का हंस' हिन्दी उपन्यासों में महत्वपूर्ण सम्मान पा चुका है और हिन्दी साहित्य की अमूल निधि माना जाता है।

कथाकार अमृतलाल नागर ने वस्तुतः 'मानस का हंस' और 'खंजन नयन' ी कि से लिखे अपने दो उपन्यासों से हिन्दी जगत को दो 'कालजयी' महाकवियों के जीवन से परिचित कराया है जो क्रमशः महाकवि तुलसीदास और महाकवि सूरदास है। सभी समीक्षकों ने एक स्वर से अमृतलाल नागर के इन दोनों उपन्यासों को 'हिन्दी साहित्य' की बेजोड़ निधि कहा है। स्वयं अमृतलाल नागर ने 'मानस का हंस' के 'आमुख' मे लिखा है – यह सच है कि गोसाई जी की सही जीवन–कथा नही मिलती। यों कहने को तो रघुवरदास, वेणी माधव दास, कृष्णदत्त मिश्र, अविनाश रे और संत तुलसी साहब के लिखे गोसाई जी के पाँच जीवन चरित है। किन्तु विद्वानों के मतानुसार व प्रामाणिक नहीं माने जा सकते। रघुवर दास अपने आपको गोस्वामी जी का शिष्य बतलाते हैं, लेकिन उनके द्वारा प्रणीत 'तुलसी चरित' की बातें स्वयं गोस्वामी जी की आत्मकथा–परक कविताओं से मेल नहीं खाती।

इस उपन्यास को लिखने से पहले मैंने कवितावली और विनयपत्रिका को खासतौर से पढ़ा। विनयपत्रिका में तुलसी के अन्तः संघर्ष के ऐसे अनमोल क्षण संजोए हुए हैं कि उसके अनुसार ही तुलसी के मनोव्यक्तित्व का ढांचा खड़ा करना मुझे श्रेयस्कर लगा। 'रामचरितमानस' की पृष्ठभूमि में मनस्कार की मनोछवि निहारने में भी मुझे 'पत्रिका' के तुलसी से ही सहायता मिली। 'कवितावाली' और 'हनुमान बाहुक' में खासतौर से दोहावली तथा गीतावली में कहीं–कहीं तुलसी की जीवन–झांकी मिलती है। कथाकार का उपन्यास लिखने के लिए जो प्रयास करने पडे, उनका विवरण पढ़कर विद्वान और सुधी पाठकगण सहज ही यह अनुमान लगा सकते हैं कि चार सौ वर्षों से भी अधिक की अवधि है जिस महाकवि तुलसी ने भारत के जन्म को 'राम–कथा' का अमृतपान कराया है, उसके जीवन को आधार बनाकर अमृत लाल नागर ने कितना परिश्रम करके इस कालजयी रचना का प्रणयन किया है। उन्होंने अपने आमुख में लिखा है– यह उपन्यास 4 जून, सन् 1971 ई. को तुलसी स्मारक भवन, अयोध्या में लिखना आरम्भ करके 23 मार्च, 1972, रामनवमी के दिन लखनऊ में पूरा किया।

'मानस का हंस' में तुलसी बाबा के जीवन चरित्रों, किंवदतियो, तथा तुलसी की स्वयं की रचनाओं के प्रस्तुत विचारों के आधार पर लिखा है। जिस प्रकार तुलसी बाबा ने अपने साहित्य में समन्वयात्मक दृष्टिकोण को अपनाया उसी प्रकार नागर जी ने तुलसी के व्यक्तित्व का समन्वयात्मक पहलू पाठकों के सम्मुख रखने का

प्रयास किया है। समग्र उपन्यास में लेखक तुलसी के जीवन वृत्त से घिरे विवादों से परे कहीं समन्वयात्मक तो कहीं भावात्मक दृश्टिकोण को प्रश्रय देता है। ''प्रस्तुत उपन्यास में तुलसी के जीवन वृत्त और उनकी भावुकता, जो उत्तम काव्य सृजन के लिए परमावश्यक है – के समन्वय का सुन्दर प्रयास है। न तो इसमें इतिहास की भ्राुश्क इतिवृत्तात्मकता है – और न तुलसी के काव्य की आलोचक की भाँति विवेचना ही है।''(02)

प्रस्तुत कृति तुलसी के जीवन से संबंधित अवश्य है– परन्तु इसमें जीवन के साथ–2 औपन्यासिक तत्वों का समावे ा अत्यधिक कु ालता के साथ किया गया है। जीवनी और उपन्यास में अन्तर स्पष्ट करते हुए कहा गया है– ''उपन्यासकार मानव जीवन की मीमांसा करता है।. वह मानव मन के अन्तस्तल में प्रविष्ट होकर उनकी आन्तरिक अनुभूतियों का विश्ले ाण करना है। उपन्यासकार अपने उपन्यास में व्यक्ति के विकास में सहायक, संपूर्ण वातावरण, समाज और देशकाल का चित्रण करता है। जीवनीकार का उद्देश्य भी व्यक्तित्व का विश्लेषण करता है। किन्तु उपन्यास में काव्यत्व होता है, कल्पना द्वारा उपन्यास में सत्य तथा सुन्दर जीवन के दार्शनिक तत्वों को रोचक ढंग से उपस्थित किया जाता है, जबकि जीवनी में वास्तविक जीवन के अनुरूप तथ्य निरुपण की प्रवृत्ति रहती है।'' इस दृष्टि से भी प्रस्तुत उपन्यास अपने औपन्यासिक तत्वों के साथ एक जीवन कृति है। तुलसी बाबा की जीवनी कुछ कल्पना तथा कुछ किंवदन्तियों के आधार पर गढ़ी गई हैं। तुलसीकृत रचनाओं से उदाहरण लेकर उसके आधार पर तथ्य निरूपण किया गया है। कहीं तुलसी स्वयं अपनी अतीत–गुहाओं से यवनिका हटाते प्रतीत होते है, कहीं लेखक तुलसी का कार्य भार हल्का करने के लिए स्वयं बाबा की जीवन गाथा कहतें हैं।(03)

उपन्यास का प्रारम्भ तुलसी की पत्नी रत्नावली की मृत्यु–घटना के साथ होता है। उस समय गोस्वामी तुलसीदास जी वृद्धावस्था को प्राप्त हो चुके थे। उनसठ वर्ष की दीर्घ कालावधि के पश्चात् गोस्वामी जी ने अपने गाँव राजापुर आकर रत्नावली का दाह–संस्कार किया। उनके साथ राजा भगत, संत बेनीमाधव, कैलाशनाथ, पंडित रामू आदि भी राजापुर आये थे। बेनी माधव जी को पहली बार गुरु की जन्म–भूमि में आने का सुयोग अवसर मिला था। इसलिए उन्हें गुरु के ऐहिक जीवन के वि ाय में सहज उत्सुकता हुई। उन्होंने गोस्वामी जी के समुख अपनी जिज्ञासा को रखते हुए उनसे अपने जीवन व्रत पर प्रकाश डालने के लिए निवेदन किया। पहले तो गोस्वामी जी ने उक्त विषय में बताने से आनाकानी की किन्तु बेनी माधव जी के आग्रह करने पर इन्होंने अपने अतीत जीवन के रहस्यों पर धीरे–2 प्रकाश डालना शुरू किया। गोस्वामी जी ने कभी अपने प्रारम्भिक जीवन के साथ राजा भगत, बकरीदी काका और कैलाशनाथ के माध्यम से अपने जीवन वृत्त और उस काल की परिस्थितियों पर प्रकाश डलवाया, कभी स्वयं एक–एक घटना का वृत्त प्रस्तुत किया और कभी अतीत की स्मृतियों में डूबकर पूर्व दीप्ति (Flash back) के रूप में आत्मकथा प्रस्तुत की। उपन्यास का अधिकांश इसी रूप में है।

जिस समय गोस्वामी जी पैदा हुए, वह सम्राट हुमायूँ का काल था। राजनीतिक दृष्टि से देश में अनिश्चितता का वातारण था। हुमाँयू और शेरशाह सूरी के संघर्ष का आतंक चतुर्दिक व्याप्त था। लूट–पाट और खून–खराबे के कारण सामान्य जन घर छोड़कर प्राण–रक्षार्थ इधर–उधर भाग रहे थे। देश पर अकाल की काली छाया पड़ रही थी। ऐसे ही समय में विक्रमपुर के पंडित आत्माराम दुबे के घर एक बालक का जन्म हुआ, जो प्रारम्भ में 'रामबोला' और बाद में 'तुलसीदास' नाम से लोक–विख्यात हुआ। आत्माराम ने ज्योतिष गणना के आधार पर नवजात शिशु को अभुक्त मूल नक्षत्र में जन्मा हुआ ठहराया और माता–पिता के लिए काल–सदृश बताया। दुर्योग ले बालक के जन्म वाली रात में ही उसकी माँ हुलसी का निधन हो गया। दुःखावेश के कारण

विक्षुब्ध आत्माराम बच्चे को दासी मुनियों के यहाँ छोड़कर स्वयं घर से निकल पड़े।

तुलसी के संघर्षमय जीवन का प्रारंभ भी संघर्षमय वातावरण में होता है। अभुक्त मूल नक्षत्र में जन्मे शिशु 'राम बोला' माता–पिता के लिए काल रूप सिद्ध होते हैं। स्वयं पिता आत्माराम मुनिया दासी को कहते है कि इस अभागे को मेरी आँखों से दूर कर दो और मुनिया कहारिन उन्हें नदी पार अपनी भिक्षुणी सास के घर छोड़ जाती है। समाज से त्यक्त लोगों में पालित–पोषित तुलसी बाल्यावस्था से राम–नाम का सहारा लेकर बचपन के प्रांगण को छोड़ किशोरावस्था की ओर प्रस्थान करते हैं। तुलसी के बचपन का नाम 'रामबोला' था, इसी से उनके हृदय में राम नाम का बीजारोपण हो जाता है। भिखारी 'रामबोला' तरह–2 से भिक्षा मांगने का प्रयत्न करता है और अपनी एक मात्र सहारा पार्वती माँ के प्रति असीम श्रद्धा का परिचय देता है। बालक रामबोला आँधी–पानी से अपनी झोपड़ी एवं पार्वती अम्मा को बचाने का प्रयास करता है और जब हार जाता है, तो हनुमान जी को गुहार लगाता है –''तब हम अब का करी ? हमारे पेट भुख है। हम नन्हें से तो हैं हनुमान स्वामी। अब हम थक गए भाई। अब हम अपनी पार्वती अम्मा के लगे जाँय के पौढ़ेंगे। दैव बरसै तो बरसा करै। हम का करै बजरंग बली? तुम्ही बताओ। तुमसे बनै तो भाई राम जी के दरबार में हमारी गुहार लगाय आओ, और न बनै तो तुम्हूँ अपनी अम्मा के लगे जाय के पौढ़ौ।''(04)

अध्याय छः के आरम्भ में बालक रामबोला जो चित्र प्रस्तुत किया गया है, वह बहुत ही सजीव बन पड़ा है। जिससे प्रभावित हो डॉ0 रामविलास शर्मा ने भी लिखा है– ''तुमने तुलसीदास के बालक जीवन का ऐसा जानदार वर्णन किया है कि इच्छा होती है – तुमसे कहूँ एक उपन्यास ऐसा लिखों जिसमे सारे प्रमुख पात्र चौदह साल से कम उम्र वाले बच्चे ही हो।'' अभागे का करम खाता क्या कभी सरलता से चुकता है? रामबोला की एक मात्र स्नेह दीप पार्वती अम्मा भी चल बसी। माता–पिता से उपेक्षित परित्यक्त रामबोला का शैशव लेखक की कुशल लेखनी से सप्राण दृष्टिगोचर होने लगता है। स्पष्ट है कि तुलसी को राम नाम घुट्टी के रूप में ही पार्वती अम्मा द्वारा पिलाया गया था। आगे चलकर यही भाव तुलसी के जीवन की धुरी बना। प्रस्तुत प्रसंग द्वारा लेखक इस तथ्य की पुष्टि कर देता है कि तुलसी अपने माता–पिता द्वारा त्याग दिए गये थे और इस तथ्य की पुष्टि स्वयं तुलसी भी अपनी रचनाओं में कर देते हैं।

पार्वती अम्मा का सहारा न रहने के पश्चात् रामबोला का गाँव में रहना कठिन हो जाता है। हताश रामबोला घाघरा और सरयू के पावन स्थल पर बने महावीर जी के मन्दिर में शरण लेता है। यहीं पर लेखक बाबा नरहरि से रामबोला की भेंट का चित्रण करता है।

तुलसी को रामकथा का आस्वादन भी सोरों में प्राप्त हुआ। सोरों उनके रोम–रोम में बसी हुई थी। सोरों उनकी जन्म–भूमि न होते हुए भी दिशा दायिनी नगरी थीं। नरहरि से भेंट के पश्चात् तुलसीदास के जीवन को नवीन दिशा मिलती है। उनके व्यक्तित्व को निखार का अवसर मिलता है। राम बोला बाबा नरहरि से प्रश्न करता है – ''अच्छा बाबा। रामजी कैसे हैं?.....बडे सुन्दर होगें।'' परन्तु सुन्दर की परिभाषा तुलसी कहाँ से जाने? यहाँ से तुलसी के मन में राम की साक्षात् छवि को निहारने की महत्वाकाँक्षा जागृत होती है। नरहरि बाबा सगुण भक्ति की महत्ता का प्रतिपादन करते है –''सौंदर्य व्यक्त भी है और अव्यक्त भी। साकार की सीढ़ियों पर चढ़कर तुम निराकर सौन्दर्य को निहार सकोगे।''(05)

महाकवि तुलसी बाबा नरहरि द्वारा ही संस्कारित होते है और उनको शिष्य रूप में स्वीकार कर लिया

जाता है। रामबोला जब भगवान राम उनके मस्तक को साष्टांग प्रणाम कर रहा था तो तुलसी की एक पत्ती झरकर उनके मस्तक पर पड़ी। उसी समय नरहरि ने रामबोला का नाम करण किया। ''आज से इनका नाम ''तुलसीदास'' हुआ।[06]

प्रस्तुत उपन्यास में तुलसी जी के स्मृति पटल पर अपने बचपन का एक दृश्य उभरता है। बाबा उसमें खो जाते हैं। परन्तु कुछ ही समय में वर्तमान सजग हो उठता है। हृदय में रामनाम की गूंज निनादित होती है। नब्बे वर्षीय तुलसी ध्यान मग्न हो आत्म–विस्मृति अवस्था में पहुँच जाते है। यहाँ लेखक तुलसी की मनोदशा का एक सजीव चित्र खींच देता है। कुछ पृष्ठों में बाबा की यही आत्म–विस्मृति अवस्था छाई रहती है। तीन बार उन्हें गहन मूर्च्छा आती है। राम का स्वरूप स्पष्ट है परन्तु मन–मयूर मोहमाया से अभी भी कहाँ विलग हो पाया। मन चाहता है कि पार्वती अम्मा के दर्शन करना और इस विचार भाव से स्वप्न भंग हो जाती है। तुलसी तड़प उठते हैं–''यह क्या हुआ राम?'' सारी देह कांपने लगती है, पसीना–पसीना हो गई विगलित स्वर फूटा हीन बंधु दूरि को न दूसरी सरन, आपको भले है सब आपने को कोऊ कहूँ सबको भलो है राम रावरो चरना।''[07]

प्रस्तुत उपन्यास में अमृतलाल नागर ने 'हनुमान चालीसा' नामक काव्य रचना तुलसी दास कृत सिद्ध की है। इसके लिए एक रोचक प्रसंग की एक झाँकी प्रस्तुत की है। कैलास, गंगाराम, बेनीमाधव आदि आपस में वार्ता करते हैं। कैलास को गर्व है कि तुलसीदास को बचपन में तुलसिया, रामबोला आदि कहकर संबोधित करने का सबसे पहले उसे ही सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इसी के साथ अतीत का एक चित्र और स्प ट होता है। स्वयं कैलाश ही कहता है बारह–तेरह वर्ष की आयु से हम दोनों साथ–साथ पढ़े हैं। राम भक्ति तो मानों इनकी घुट्टी में ही पड़ी है।[08]

बचपन में गुरू भोश सनातन के आश्रम में तुलसी एक बार बीरेश्वर के पिता बटेश्वर नाथ द्वारा बहुत सताए गये थे। उसी प्रसंग की चर्चा करते हुए गंगा राम जी कहते है– कि कैसे बटेश्वर ने शमशान में जाकर शिवालय में शंख बजाने का प्रस्ताव रखा और कैसे तुलसी ने अपनी प्रतिज्ञा पूरी की। तुलसी राम के अनन्य भक्त थे परंतु फिर श्री किशोरावस्था का भोलापन भूत की कल्पना कर ही लेता है। तुलसीराम का नाम जपते हुए मनः शक्ति करते थे। ऐसी ही अवस्था में ''मध्यरात्रि तक हनुमान चालीसा पूरी की। तुलसी ने अब तक के जीवन में यह पहला लंबा काव्य रचा था।[09]

'भूत पिशाच निकट नहि आवें, महावीर जब नाम सुनावे।' राम नाम की शक्ति के आगे भूत भी कुछ नहीं कर सकते। जब आई से आज्ञा पाने के लिए तुलसी पूछते हैं कि, ''क्या भूत सचमुच होते हैं तो 'आई' यही उत्तर देती हैं–''तुमने भूत को नहीं देखा और राम जी को भी नहीं देखा। जिस पर चाहों विश्वास कर लो। मन माने की बात हैं।''और तुलसी राम पर विश्वास कर शमसान में जाकर आधी रात में शिव मन्दिर में शंख बजा ही आते हैं।

'मानस का हंस' तुलसी की प्रांसगिकता आन्तरिक और बाहरी दोनो रूपों में है। संघर्ष और तनाव, व्यक्ति और समाज दोनों स्तरों पर आज का यथार्थ है। व्यक्ति के स्तर पर वह मानसिक संघर्ष है अन्तर्द्वन्द्व है, यानी अपने से अपनी ही लड़ाई है और सामाजिक स्तर पर जड़ समाज से प्रबुद्ध व्यक्ति की, एक वर्ग की दूसरे वर्ग से परम्परा की प्रगति से, असत्य से सत्य की लड़ाई है। यह लड़ाई कही तो सक्रिय रूप धारण कर लेती है और कही विक्षोभ अस्वीकृति और घृणा के रूप में ही तैरती रहती है।

'मानस का हंस' में तुलसी के मन में चलने वाला राग और काम का द्वन्द्व तुलसी के व्यक्तित्व को अधिक मानवीय एवं प्रासंगिक बनाता है। दूसरी और उनके जीवन का आर्थिक अभाव, अपमान पूर्ण स्थितियों, छोटी जाति की पार्वती द्वारा उनका पालन–पोषण, सतत् भटकाव, धर्म और समाज की विकृत और वास्तविकताओं का साक्षात्कार, सामाजिक और साम्प्रदायिक सदियों तथा विडंबनाओं का देश और टकराहट आदि ऐसी परिवेशगत सच्चाइयाँ हैं, जो आज भी व्याप्त है और जिनका हम साक्षात्कार करते रहते है।[10]

वास्तव में 'तुलसी इन वास्तविकताओं की प्रक्रियाओं से गुजरते हुए भी उनसे पराभूत नहीं होते। लेखक आज की संघर्ष एवं तनावपूर्ण मानसिक और परिवेशगत सच्चाईयों का निर्वाह करता हुआ भी 'तुलसी' के व्यक्तित्व की मूल ऊर्जा की उपेक्षा नहीं करता, कर भी नहीं सकता। इसलिए तुलसी काम के देश से पीड़ित तो होते हैं किन्तु 'राम' तक पहुँचने के लिए उनका विवेक बराबर संघर्ष करता रहता है, वह लक्ष्य को पहचानता है। तुलसी के संबंध में प्रसिद्ध किवदत्तियों तथा उनकी कुछ कविताओं से इस बात के संकेत मिलते है कि 'तुलसी कभी काम के शिकार हुए थे किन्तु, वे किसी वेश्या के चक्कर में पड़े थे, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। वैसे काम मनुष्य की बहुत बुनियादी वृत्ति है। 'तुलसी' के भीतर 'काम' और 'राम' के बहुत ही मार्मिक संघर्ष को दिखाकर 'काम' और 'राम' दोनों की संवेदना को बड़ा जटिल और संक्रान्त रूप दिया गया है, किन्तु यह संघर्ष 'रत्नावली' मात्र के संदर्भ में दिखाया जा सकता था, वेश्या का सन्दर्भ ले आना इतिहास और रचना दोनों दृष्टियों से अपरिहार्य नहीं कहा जा सकता।[11]

बाबा नरहरि दास का स्वर्गवास हो जाने के उपरान्त गुरुपाद शेष सनातन महाराज तुलसी के अभिभावक हो गये। उन्हीं की स्नेह छाया में उनके साहित्यिक जीवन का सूत्रपात हुआ। उस समय तुलसी दास की अवस्था तेईस–चौबीस वर्ष के लगभग थी। वे पाठशाला के आचार्य पद पर सुशोभित थे। विद्वता और व्यक्तित्व की जुता मे तुलसी को काशी के जन का मानस में पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित कर दिया। एक दिन काशी के एक सेठ द्वारा आयोजित भोज का निमंत्रण पाकर तुलसी पाठशाला के कुछ विद्यार्थी वहाँ गये। रामभक्ति–विहवल मेघा भगत रह–रह कर मूर्छित हो जाते थे और अश्रुपात करने लगते थे। उनकी मनः शान्ति हेतु तरुणी गायिका मोहिनी ने मीराबाई का एक भजन गाया– ''सुनीरी मैंने हरिआवन का आवाज।'' गायिका ने ज्यों ही विराम लिया, तुलसी ने गाना प्रारम्भ कर दिया– 'मीरा के प्रभु गिरधर नागर, बेगि मिला महाराजा।' मेघा भगत और सभी उपस्थित भक्तगण भजन की स्वर लहरी में भाव विभोर हो उठे। किन्तु, तुलसी तो मोहिनी के सौंदर्य एवं उसकी गायन–कला पर मुग्ध होकर अपना आपा खो बैठे थे। तुलसी के अन्तस राम और काम का इन्द्र छिड़ गया था। तुलसी के मानस में कभी–कभी लोक लज्जा का भाव जाग उठता था। लगभग एक मास पश्चात तुलसी के अन्तर संघर्षमय जीवन की हलचल शान्त हुई। फिर भी कभी–कभी मोहिनी से उनका मिलन हो जाया करता था। अन्ततः मोहिनी की संरक्षिका बाई की कठोर फटकार तुलसी के प्रेम–दर्पण को चकनाचूर कर दिया। तुलसी को राम–काम के अन्तर्दन्द्व में जीवन के यथार्थ का बोध हो गया। मोहिनी से अन्तिम विदा लेकर तीर्थाटन पर चल पडें।

इस प्रकार 'मानस का हंस' में वस्तु विधान महत्वपूर्ण है। 'मानस का हंस' व हद उपन्यास जीवनीपरक उपन्यास है। नागर जी ने 'तुलसी' के जीवन तथा चरित्र के साथ जुड़ी हुई अलौकिक घटनाओं रूप देने का प्रयास किया है। मरणासन्न को लौकिक और मानवीय रत्नावली के पास 'तुलसी' का लौटकर आना बड़ा ही

मार्मिक चित्रण है बचपन का रामबोला तुलसी बनकर (रामचरित मानस, विनय पत्रिका) जैसे धार्मिक ग्रन्थों को लिखकर लोकनायक नाम से प्रसिद्ध हो चुका है। ऐसे महान पुरूश के जीवन चरित्र को पढ़ने के बाद नागर जी की दिव्य दृश्टि मालूम पड़ती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. खजन नयन–अमृत लाल नागर, पृ0–09
2. अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना, डा0 (श्रीमती) भाोभा पालीवाल, पृ0–89
3. उपन्यासकार अमृतलाल नागर, डा0 दामोदर वा ि ाश्ट, पृ0–09
4. मानस का हंस– अमृत लाल नागर, पृ0–63
5. मानस का हंस– अमृत लाल नागर, पृ0–82
6. मानस का हंस– अमृत लाल नागर, पृ0–84
7. मानस का हंस– अमृत लाल नागर, पृ0–84–85
8. मानस का हंस– अमृत लाल नागर, पृ0–84–85
9. मानस का हंस– अमृत लाल नागर, पृ0–84–85
10. हिन्दी उपन्यास एक अनतयात्रा, रामद ा मिश्र, पृ0–38
11. मानस का हंस – अमृतलालनागर, पृ0– 85

मेल आईडी drnehapalni2014@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 64-66

काला शुक्रवार कहानी में अभिव्यक्त सांप्रदायिकता की समस्या

भूमिका कपूर
शोधार्थी, श्रीमती नाथीबाई दामोदर ठाकरसी महिला विश्वविद्यालय, मुंबई।

भारतीय साहित्य में सामाजिक यथार्थ को उजागर करने की परंपरा लंबे समय से चली आ रही है। विशेषतः हिन्दी साहित्य में लेखकों ने समय–समय पर सामाजिक, राजनीतिक और सांप्रदायिक समस्याओं को अपनी रचनाओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। सुधा अरोड़ा हिन्दी की एक सशक्त कथाकार हैं, जिनकी कहानियाँ न केवल नारी जीवन के विविध पहलुओं को उजागर करती हैं, बल्कि सामाजिक विडंबनाओं को भी प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती हैं।

सुधा अरोड़ा की कहानी 'काला शुक्रवार' 12 मार्च 1993 के मुंबई बम विस्फोट की पृष्ठभूमि पर आधारित है, जो भारतीय इतिहास में एक काला दिन था। इस कहानी में सांप्रदायिकता की समस्या को उजागर किया गया है, जो उस समय के सामाजिक और राजनीतिक परिदृश्य को विकृत कर रही थी। इस शोध पत्र में, हम 'काला शुक्रवार' कहानी में अभिव्यक्त सांप्रदायिकता की समस्या का विश्लेषण करेंगे और इसके विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करेंगे।

सांप्रदायिकता एक ऐसी समस्या है जो समाज को विभाजित करती है और लोगों को उनके धर्म, जाति, और नस्ल के आधार पर अलग–अलग समूहों में बाँटती है। यह समस्या तब और भी गंभीर हो जाती है जब राजनीतिक और धार्मिक हितों के कारण लोगों को भड़काया जाता है और उन्हें एक दूसरे के खिलाफ किया जाता है। इससे समाज में तनाव और हिंसा बढ़ती है और लोगों का जीवन त्रासद बन जाता है। इस कहानी में उन्होंने सांप्रदायिकता की समस्या को बहुत ही प्रभावी ढंग से दर्शाया है।

उनकी कहानी 'काला शुक्रवार' मुम्बई शहर में हुए बम धमाकों पर आधारित है, सांप्रदायिकता की त्रासदी, भय, असुरक्षा और आतंकवाद की मानसिकता को बेहद संवेदनशीलता से सामने लाती है। यह कहानी न केवल एक भयानक दुर्घटना का वृत्तांत है, बल्कि उसके सामाजिक और सांप्रदायिक प्रभावों की पड़ताल भी करती है। प्रस्तुत शोध–पत्र में इस कहानी में चित्रित सांप्रदायिकता की समस्या का गहराई से विश्लेषण किया गया है।

'काला शुक्रवार' कहानी में हुए बम धमाकों ने पूरे देश को झकझोर कर रख दिया था। यह कहानी एक महिला पात्र की दृष्टि से लिखी गई है, जो एक सामान्य नागरिक की तरह उस समय की भयावहता और असुरक्षा को महसूस करती है। यह कहानी व्यक्तिगत अनुभवों के माध्यम से एक व्यापक सामाजिक समस्या और

सांप्रदायिकता पर सवाल उठाती है।

भारत जैसे बहुधार्मिक और बहुसांस्कृतिक देश में सांप्रदायिकता एक संवेदनशील और जटिल समस्या रही है। धर्म के नाम पर हिंसा, नफरत और विभाजन भारतीय समाज को कई बार लहूलुहान कर चुका है। 1992 में बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद जो सांप्रदायिक तनाव फैला, वह 1993 के मुम्बई बम धमाकों का प्रमुख कारण बना। 'काला शुक्रवार' कहानी इस ऐतिहासिक घटनाक्रम को एक साधारण परिवार की निगाह से देखती है और यह दिखाती है कि कैसे सांप्रदायिकता का जहर आम नागरिकों की मानसिकता में गहराई तक घुल जाता है। कहानी में जब बम धमाके होते हैं, तो लोगों की प्रतिक्रिया में धार्मिक पहचान और सबसे पहले सरकार पर आती है। उन्होंने अपनी कहानी में यह लिखा भी है। जब लेखिका की गाड़ी सिग्नल पर खड़ी थी तब साथवाली कतार से एक चश्मेवाले बूढ़े ड्राइवर ने शीशा खोलकर सिर बाहर निकालकर कहा "हमारी सरकार निकम्मी हो चुकी है। तीन महीनों में तीन बार साबित हो चुका है। ऐसी तबाही हमने अपनी अब तक की जिंदगी में नहीं देखी, अब बुढ़ौती में क्या मालूम, क्या कुछ देखना बदा है। खुदा से पूछने को दिल करता है" आतंकियों की पहचान होते ही लोग संप्रदाय के आधार पर अपने–अपने पक्ष तय करने लगते हैं। सामान्य नागरिक भी बिना जांच या पुष्टि के एक पूरे समुदाय को दोषी ठहराने लगते हैं। यह मानसिकता दर्शाती है कि सांप्रदायिकता किस प्रकार हमारी चेतना में रची–बसी है। उनके सामने हो रही घटनाओं को देख कर उन्हें बरबस याद आया कि लाहौर में सन सैंतालीस के दंगों में बहुत सी घटनाएँ उनके दादा अक्सर बताया करते थे। शहर में जैसे ही दंगे छिड़ते हैं, आदमी अंधा हो जाता है। वह अपने यार–दोस्त, पड़ोसी, सबको भूल जाता है। मजहब उसे पागल कर देता है। इंसान ही इंसान के खून का प्यासा हो उठता है।

इस कहानी में नायिका के परिवार में भी एक असहजता उत्पन्न होती है। आस–पास के माहौल का असर घरेलू संबंधों पर भी दिखता है। उन्हें अपने घर की एक घटना भी याद आती है जिसमें उनके दादाजी को लगा की उनका बचपन लाहौर की गलियों में बीता है तो उन्हें कोई कुछ नहीं करेगा और इसीलिए वे रोज की तरह ही अपनी लाठी लेकर निकाल पड़े और फिर दुबारा कभी भी नहीं लौटे। यहाँ तक की उनकी लाश भी नहीं मिली।

इसी तरह उनकी कहानी में एक और भयावह घटना का जिक्र है जहाँ लेखिका के दादा जी के बहनोई बड़े बेफिक्र होकर अनारकली बाजार से दूध लेने गए, यह कहकर कि उन्हें वहाँ का बच्चा–बच्चा पहचानता है। लेकिन वे गलत थे और उसी बाजार में वे छुरे का शिकार हो गए। इस कहानी में हम यह भी देखते हैं कि जैसे–जैसे बाहर अफवाहें और भय फैलता है, वैसे–वैसे घर के भीतर का माहौल भी डर और संदेह से भर जाता है। यह दर्शाता है कि सांप्रदायिकता केवल सड़कों पर हिंसा तक सीमित नहीं रहती, वह हमारे निजी संबंधों को भी प्रभावित करती है। जैसे हमने इस कहानी में पढ़ा कि शहर में बम फटने की खबर सुनके मिराज की बीवी मुमताज ने रो–रोकर अपनी आँखें लाल कर ली थी और उसका बेटा जो बुखार में तप रहा था उसके घर पहुँचने पर उससे ऐसे लिपटे जैसे मानो वह जंग जीत कर आया हो।

सुधा अरोड़ा की लेखनी में स्त्री संवेदना और सामाजिक यथार्थ का अनूठा मेल देखने को मिलता है। 'काला शुक्रवार' कहानी में लेखिका किसी एक समुदाय के प्रति पूर्वाग्रह नहीं रखतीं, बल्कि वह इस बात पर बल देती हैं कि सांप्रदायिकता की आग में आम लोग फिर चाहे वे किसी भी धर्म के हों..... सबसे अधिक झुलसते हैं।

इतना ही नहीं हम इस कहानी में यह भी देखते हैं कि मीराज किस तरह अपना रोज़ा खोलने के बाद अपने दूसरे साथियों के साथ हिंदूजा अस्पताल में खून देने चला गया। वहाँ सभी धर्म, जाति के लोग लंबी कतार में खून देने खड़े थे। काफी देर तक खड़े रहने के बाद उसका नंबर आया और यह देख कर मीराज की इंसान में आस्था लौट आई थी। लेखिका ने बेहद संवेदनशील भाषा और प्रतीकों का प्रयोग करते हुए कहानी को एक दस्तावेज की तरह प्रस्तुत किया है।

इस कहानी में एक स्त्री की मानसिक यात्रा के माध्यम से यह दिखाया गया है कि किस प्रकार एक आम महिला अपनी, अपने परिवार की और उसके साथ–साथ अपने आसपास के लोगों की सुरक्षा को लेकर चिंतित है। वह स्वयं के लिए कहती है कि, "मुझे अब भी भरोसा नहीं होता कि मैं बचकर वापिस आ गई हूँ" कहीं ना कहीं नायिका के मन में बम फूटने वाली घटना घर कर जाती है। जब नायिका को एक के बाद एक बुरी खबरें मिलती है जैसे – सेंचुरी बाजार में ब्लास्ट में शर्मा जी का मारा जाना और उनकी जली हुई कार शिनाख्त होना और उसके साथ अहमद का ऑफिस में देर से आकर यह बताना कि मीराज के बेटे अली नवाज की डेथ हो गई। नायिका के दिल पर हथौड़ा सा पड़ गया। उनका दिमाग सुन्न हो गया था। सुधा अरोड़ा की यह कहानी एक महत्वपूर्ण प्रश्न खड़ा करती है .....क्या किसी भी धर्म से बड़ा इंसान नहीं होता? जब बम धमाकों में निर्दोष मारे जाते हैं, तब धर्म, जाति, संप्रदाय सब व्यर्थ हो जाते हैं। कहानी का अंत मानवीयता की ओर संकेत करता है, जहाँ लेखिका यह संदेश देती हैं कि घृणा के इस चक्र को केवल करुणा, संवाद और सह–अस्तित्व से ही तोड़ा जा सकता है।

भले ही यह कहानी 1993 की घटना पर आधारित है, लेकिन इसकी प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है। वर्तमान भारत में भी समय–समय पर सांप्रदायिक तनाव और धार्मिक कट्टरता के उदाहरण सामने आते रहते हैं। जैसे '2025 का भारत–पाक युद्ध' ऐसे में यह कहानी हमें आगाह करती है कि यदि हम समय रहते नहीं चेते, तो सामाजिक ताने–बाने को बचा पाना कठिन हो जाएगा। अंततः हम कह सकते हैं कि 'काला शुक्रवार' केवल एक कहानी नहीं, एक चेतावनी है। यह हमें बताती है कि आतंकवाद, सांप्रदायिकता और नफरत के इस दौर में सबसे आवश्यक है– संवेदना, विवेक और मानवीय दृष्टिकोण। सुधा अरोड़ा ने एक साधारण पात्र के माध्यम से एक असाधारण सामाजिक समस्या को अत्यंत गहराई से उजागर किया है। यह शोध–पत्र इस बात पर बल देता है कि साहित्य केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना का वाहक भी होता है और यह कहानी इसीका सशक्त उदाहरण है जो पाठकों को सोचने, समझने और शायद थोड़ा बदलने के लिए भी प्रेरित करती है।

संदर्भ सूची :-

1. अरोड़ा, सुधा, काला शुक्रवार, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली–2004

bhumika98kapoor@gmail.com
What*s app: 8806216796
Mobile: 8928074467

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 67-71

महाराजा जगतसिंहस्य प्रेयसी रसकपूरस्य संदर्भे : शृंगारः करूणरसश्च

चेतनः पुरी
भाोधार्थी, संस्कृतं, द ार्शनं एवं च वैदिकोऽध्ययन–विभागः, बनस्थली विद्यापीठम्, निवाई
डॉ. अंजना शर्मा (सह आचार्या) भाोध–निर्दे ाका
संस्कृतं, द ार्शनं एवं च वैदिकोऽध्ययन–विभागः, बनस्थली विद्यापीठम्, निवाई।

शोधसारांशः –

पं. मोहनलालपाण्डेयस्य अनुवादिता कृतिः ''रसकपूरम्''[1] एकोनविं ातिशताब्द्याः दरबार्याः रसकपूरस्य जीवने आधारिता अस्ति तथा च महाराजा जगतसिंहेन सह तस्याः प्रेमप्रसंगे केन्द्रितः अस्ति। अस्मिन् पत्रे अस्य कार्यस्य माध्यमेन शृंगारस्य करुणरसस्य च जटिलपरस्परसम्बन्धानां विश्लेषणं कृतम् अस्ति। श्रृंगाररसेन परिपूर्णः रसकपूरस्य जगतसिंहस्य च प्रेम सामाजिकबाधायाः परिस्थितेः च कारणेन करुणरसरूपेण परिणमति। अस्मिन् शोधपत्रे पं. मोहनलालपाण्डेय इत्यनेन उमेशशास्त्री इत्यस्य 'रसकपूर' इति ग्रन्थस्य संस्कृतानुवादस्य समये न केवलं प्रेमस्य तीव्रतां दर्शयितुं वर्णितरूपेण एतेषां रसानां प्रयोगः कृतः, अपितु समकालीनसमाजस्य विडम्बनाः, स्त्रियाः असहायता, सत्तायाः दुरुपयोगः च प्रकाशिताः।

परिचयः –

पं. मोहनलालपाण्डेयः संस्कृतसाहित्ये सामाजिकचेतनायाः, संवेदनशीललेखनस्य च कृते प्रसिद्धः अस्ति। तेन हिन्दीलेखकः उमेशशास्त्री इत्यस्य 'रसकपूर' इति ग्रन्थस्य ''रसकपूरम्'' इति नाम्ना संस्कृतभाषायाम् अनुवादः कृतः। यद्यपि ऐतिहासिकपृष्ठभूमिना आधारितम् अस्ति तथापि एतत् ग्रन्थं मानवीयभावनानां सामाजिकवास्तविकतानां च गभीरं चित्रणं करोति। रसकपूरस्य महाराजजगतसिंहस्य च सम्बन्धः उपन्यासस्य महत्त्वपूर्णः भागः अस्ति, यस्मिन् प्रेमस्य माधुर्यं विरहस्य पीडा च द्वयोः अपि अनुभवः भवति। अस्मिन् शोधपत्रे अस्य सम्बन्धस्य सन्दर्भे शृंगारस्य करुणरसस्य च तत्त्वानां विश्लेषणं कृतम् अस्ति। अस्माकं उद्देश्यं अस्ति यत् पण्डितपाण्डेयेन अनुवादे एतयोः विरोधाभासप्रतीतयोः रसयोः कथं प्रयोगः कृतः येन पाठस्य आत्मानं जीवितं कृत्वा प्रेमस्य गभीरता तस्य दुःखदः अन्तः च प्रभावीरूपेण प्रस्तुतं शक्यते।

रसस्य लक्षणं भेदश्च– भरतमुनिः प्रथमं रससिद्धान्तं प्रस्तावयन् ''न हि रसादृते कं चदर्थः प्रवर्तते।''[2] इति वदति, अर्थात् रसं विना काव्ये कोऽपि अर्थः विकसितो न भवति। तेषु विभावानुभावव्याभिचारीभावयोः संयोगेन रसः (रसः) जायते। तत्र ''विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिश्पतिः''[3] इति रससूत्रम्।

रस शब्दस्य व्युत्पत्तिः- "रस्यते इति रसः"[4] इति व्युत्पत्तियोगाद् भावतदाभासादयोऽपि गृह्यन्ते। यदास्वाद्यते स रसं इत्यर्थः। अत्र रसशब्दार्थः। रसः भावः रसाभासः भवाभासः।

रसस्य लक्षणम् – स्थायी भावः एकः सुप्तः आभासः भवति यः संवेदनशीलस्य मनसि निरन्तरं निवसति, यः अनुकूलसमर्थनं प्रेरकसामग्री च प्राप्य अभिव्यक्तः भवति तथा च संवेदनशीलस्य जनस्य अद्वितीयं आनन्दं जनयति, अस्य स्थायिभावस्य व्यञ्जनं रसशब्देन गम्यते रसयुक्तत्वात्। अत एव मम्मटाचार्येन उक्तं यत्, **"व्यक्तः स तैर्विभावाद्यैः स्थायी भावो रस स्मृतः"**[5] इत्यादयः। आचार्यविश्वनाथस्य मते संवेदनशीलजनानाम् हृदये स्थिताः स्थायिभावाः आलम्बनस्य उद्दीपनविभवस्य च कारणरूपस्य माध्यमेन अभिव्यक्ताः भूत्वा संभाववस्य सहकारिरूपस्य. .. संचारिभावरूपेण, रसरूपं प्राप्नुहि।

विभावेनानुभावेन व्यक्तः संचारिणा तथा।
रसतामेति रत्यादिः स्थयिभावः सचेतसाम्।।[6]

रसप्रकाराः – आचार्यः मम्मटमते रससंख्या ६ इति मन्यते।

शृंगारहास्यकरूणरौद्रवीरभयानकाः।
वीभत्साद्भुत्संज्ञौ नाट्ये रसाः स्मृताः।।
निर्वेदस्थायिभावोऽस्ति शान्तोऽपि नवमो रसः।।[7]

रसानां स्थायी भावाः – प्रत्येकं रसस्य स्थायी भावः भवति। अतः स्थायिभावानां संख्यापि ६ वर्तते। शृंगारस्य रतिः, हास्यस्य हासः, करुणस्य भ्ाोकः, रौद्रस्य क्रोधः, वीरस्य उत्साहः, भयानकस्य भयम्, वीभत्सस्य जुगुप्सा, अद्भुतस्य विस्मयः एवं भ्ाान्तरसस्य निर्वेदः च स्थायी भावाः मुख्याः भावाः सन्ति।

रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहौ भयं तथा।
जुगुप्सा विस्मयश्चेति स्थायिभावाः प्रकीर्तिता।।[8]

(क) शृंगार-रस :

शृंगाररसस्य स्वरूपम्– कामदेवस्य अङ्कुरणं 'शृंगः' इति कथ्यते। श्रृङ्गस्य उत्पत्तिकारणं, अधिकतया उत्तमप्रकृतियुक्तः रसः 'शृंगार' इति कथ्यते। परपत्न्याः अप्रियवेश्याश्च विहाय दक्षिणादीनां नायिकाः नायकाः च अस्य रसस्य समर्थकविभवाः इति मन्यन्ते। चन्द्रचन्दनभृङ्गादिकं तस्य उत्तेजकप्रभावाः सन्ति। हिंसामृत्युः आलस्यं वितृष्णां च विहाय अन्ये निर्वेदाः इत्यादयः अस्य क्षणिकभावनाः सन्ति। अस्य स्थायी भावः 'रतिः' अस्ति। शृंगाररसः संभोगः विप्रलम्भश्च द्विविधः।

शृंगं हि मन्मथेद्भेदस्तदागमनहेतुकः।
उत्तमप्रकृतिप्रायो रसः श्रृंगार इश्यते।।
परोढां वर्जयित्वा तु वेश्यां चाननुरागिणीम्।
आलम्बनं नायिकाः स्युर्दक्षिणाद्याश्च नायकाः।।
चन्द्रचन्दनरोलम्बरूताद्युद्दीपनं मतम्।
भ्रूविक्षेपकटाक्षादिरनुभावः प्रकीर्तितः।।
त्यक्त्वौग्र्यमरणालस्यजुगुप्सा व्यभिचारिणः।
स्थायिभावो रतिः श्यामवर्णोऽयं विष्णुदैवतः।। [9]

''रसकपूरम्'' उपन्यासे सम्भोगशृंगाररसस्य चित्रणम् – ''रसकपूरम्'' इत्यत्र महाराजा जगतसिंह–रसकपूरयोः प्रारम्भिकसम्बन्धे शृंगाररसस्य प्रधानता दृश्यते। रसकपूरबाला महाराजं स्वसौन्दर्येन, कलाभिः, आकर्षणेन च मोहयति, महाराजः अपि तस्याः प्रति गहनं स्नेहं प्रकटयति। तेषां मिलनस्य, प्रेमपूर्णस्य संभाषणस्य, परस्परं प्रति आकर्षणस्य च लौकिकं वर्णनं ग्रन्थे दत्तम् अस्ति।

रसकपूरस्य सौन्दर्यस्य वर्णनं कुर्वन् अनुवादकः तस्याः रूपं, अनुग्रहं, कलात्मकप्रतिभां च प्रकाशयति, येन महाराजः तस्याः समीपं आकर्षयति। रसकपूरबालाऽपि महाराजस्य प्रेम्णि भक्तः अस्ति, तस्य सह व्यतीतानां क्षणानाम् आनन्देन, सुखेन च पूरयति। तयोः शारीरिकः भावनात्मकः च सम्बन्धः शृंगाररसस्य उत्कृष्टतां प्रतिबिम्बयति। श्रृङ्गाररसस्य शिखरं एतासु पंक्तिशु अस्ति। यथा– ''अहमासम्महाराजांकसमासीना, कण्ठहारोपमौ संजातौ दोलयन्तौ मे भुजौ। तदीयतप्ताधरो बिम्बाधरे में स्वीयपदमवाप्तवान्। मदीयकोमलकायलता विचित्रनीरवताभरितास्खलिता संजाता, तस्मिन् क्षणे समर्पिता स्वीया स्वता मया''[10]।

महाराजा जगतसिंहस्य रसकपूरस्य प्रेम्णः केवलं कामवासनाधारितो नास्ति, अपितु अस्मिन् आदरस्य, प्रशंसायाः च भावः अपि अस्ति। सः रसकपूरस्य बुद्धिमत्तायाः प्रज्ञायाः च आदरं करोति। प्रेम्णा सह तेषां वार्तालापेषु गहनम् आत्मीयताम् अपि प्रतिबिम्बितम् अस्ति। शृंगाररसस्य संयोगपक्षस्य एतत् सुन्दरम् उदाहरणम् अस्ति, यत्र प्रेमिणः परस्परं सङ्गतिं कुर्वन्ति।

(ख) करूण–रसः–

इष्टस्य नाशात् अशुभस्य च उत्पद्यते करुणरसः। अस्मिन् स्थायिभावः शोकः। दैवनिन्दा, भूमौ पतनं, रोदनं, प्रक्षालनं, निःश्वासः, उच्छवासः, स्तब्धता, प्रलापः च अस्मिन् रसे अनुभावः भावाः भवन्ति। तथा निर्वेदः, आसक्तिः, अपचः, रोगः, अपराधबोधः, स्मृतिः, श्रमः, दुःखं, जडता, उन्मादः, चिन्ता च इत्यादयः तस्य व्यभिचारिणः भावाः सन्ति।

इष्टनाशदनिष्टाप्तेः करूणाख्यो रसो भवेत्।
धीरैः कपोतवर्णोऽयं कथितो यमदैवतः।।
शोकोऽत्र स्थायिभावः स्याच्छोच्यमालम्बनं मतम्।
तस्य दाहादिकावस्था भवेदुद्दीपनं पुनः।।
अनुभावा दैवनिन्दाभूपातक्रन्दितादयः।
वेवर्ण्योच्छ्वासनिःश्वासस्तम्भप्रलपनानि च।।
निर्वेदमोहापस्मारव्याधिग्लानिस्मृतिश्रमाः।
विशादजडतोन्मादचिन्ताद्या व्यभिचारिणः।।[11]

करूणरसं प्रति संक्रमणम् – महाराजा जगतसिंहस्य रसकपूरस्य च प्रेमप्रसङ्गे करुणरसः तदा प्रवेशं करोति यदा तयोः मध्ये सामाजिकराजनैतिकपरिस्थितयः बाधकाः भवितुम् आरभन्ते। रसकपूरबाला एका वाराङ्गना अस्ति यः समाजे सम्माननीयं स्थानं न प्राप्नोति, महाराजः तु राजपरिवारस्य अस्ति। तेषां प्रेमं समाजेन न स्वीकृतं भवति, तेषां समक्षं बहवः आव्हानाः सन्ति। रसकपूर–मिश्रयोः संवादे करुणरसः उत्पद्यते। यथा– ''मया दारुणव्यथया सीत्कृतम्। न भाक्तः कोऽपि जनकः स्वीयसुतां निर्मातुं वारवनिताम्, परमहंजनक जाताऽप्यासमवैधानिका पुत्री, यस्याः कृत नानिवार्या पीडा।'' अन्यत्राऽपि च ''मानसविदारकमासीत्तस्याट्टहास गर्जनम्, श्रुतं स्यात्तसर्वैः परम्महाराजकर्णकुहरं यावन्न गतम्भवेदन्यथा स स्वीयप्रेयसीं रसकपूरबालामित्थम्''।[12]

महाराजा जगतसिंहं रसकपूरेण सह सम्बन्धं समाप्तुं स्वपरिवारस्य राजदरबारस्य च निपीडः भवति। तस्य प्रतिष्ठायाः, राज्यस्य हितस्य च पालनं कर्तव्यं भवति, येन सः रसकपूरात् दूरं गन्तुं बाध्यः भवति। रसकपूरबाला परिस्थित्या दुःखिता निराशा च अस्ति, यतः सा महाराजं यथार्थतया प्रेम्णा पश्यति, तस्य विना स्वजीवनस्य कल्पनां कर्तुं न शक्नोति।

अस्मिन् अनूदितग्रन्थे रसकपूरस्य वेदनाविरहयोः मार्मिकं चित्रणं कृतम् अस्ति। सा स्वभाग्यं शापयति, यः समाजः तां अस्मिन् परिस्थितौ धक्कायति स्म, तस्य विषये प्रश्नं करोति च। महाराजविरहदुःखं तस्याः हृदयं विदारयति, तस्याः नेत्रेभ्यः प्रवहन्तः अश्रुपाताः च करुणरसस्य गभीरतां प्रतिबिम्बयन्ति।

शृंगारसस्य करूणरसस्य च परस्परसम्बन्धः – ''रसकपूरम्'' इत्यत्र शृंगारस्य करुणरसस्य च परस्परसम्बन्धः अतीव सूक्ष्मतया प्रभावीरूपेण च चित्रितः अस्ति। प्रेमस्य माधुर्यं विरहदुःखं च एकस्यैव मुद्रायाः द्वौ पक्षौ इति अनुवादकेन दर्शितम्। प्रेम यथा गभीरा भवति तथा विरहदुःखं महती भवति।

विप्रलम्भशृंगारस्य करूणरसस्य च भेदः – यदि शृंगाररसः "रति" तः उत्पन्नः अस्ति तर्हि तस्मिन् करुणरसस्य आश्रिताः भावनाः किमर्थं सन्ति? अतः शृंगाररसः द्विविधः इति पूर्वमेव उक्तम् अस्ति। अतः करुणरसः प्रियस्य शापदुःखात् महिमावधबन्धनादिनाशात् उत्पद्यते निरपेक्षस्वभावः। विप्रलम्भे जिज्ञासाचिन्ताभ्यां उत्पद्यमानः सापेक्षभावः भवति। एवं प्रकारेण करुणरसः भिन्नः विप्रलम्भश्रृङ्गारः भिन्नः। ''यद्ययं रतिप्रभवः शृंगारः कथमस्य करुणाश्रयिणो भावा भवन्ति। करुणस्तु भाापक्ले ाविनिपतितेश्टजनविभवना ावधबन्धसमुत्थो निरेपेक्षभावः। औत्सुक्यचिन्तासमुत्थः सापेक्षभावो विप्रलम्भकृतः। एवमन्यः करुणोऽन्य च विप्रलम्भ इति। एवमेश सर्वभावसंयुक्तः शृंगारो भवति''।[13]

महाराज जगतसिंहस्य रसकपूरस्य च प्रेम सामाजिकनिपीडानां कारणात् करुणरसरूपेण परिणमति। तयोः प्रेमस्य दुःखदः अन्तः पाठकस्य मनसि करुणा–सहानुभूति–भावनाः उद्दीपयति। एतयोः भावयोः व्यवस्थितरूपेण प्रयोगं कृत्वा पाण्डेयः प्रेम्णः तीव्रताम् अपि च तस्य दुःखदं परिणामं च प्रभावीरूपेण प्रस्तुतवान्। करुणरसः केवलं विरहस्य दुःखे एव सीमितः नास्ति, अपितु रसकपूरस्य असहायतां, समाजस्य अन्यायस्य, सत्तायाः दुरुपयोगस्य च चित्रणं करोति रसकपूरस्य त्रासदी न केवलं व्यक्तिगतं, अपितु केषाञ्चन विशेषाधिकारं ददाति, अन्येषां वंचितं च सामाजिकव्यवस्थायाः परिणामः अपि अस्ति।

सामाजिकविडम्बनाः स्त्रियाः असहायता च– ''रसकपूरम्'' इत्यत्र तत्कालीनसमाजस्य विडम्बनाः स्त्रियाः असहायता च प्रेमकरुणाभावानां माध्यमेन प्रकाशिताः सन्ति। रसकपूरबाला प्रियः, सम्मानः च अर्हति, परन्तु तस्याः सामाजिकपदवी तस्याः एषः अधिकारः न ददाति। समाजः तां केवलं उपभोगवस्तुं मन्यते, तस्याः मानवीयभावनानां उपेक्षां च करोति।

महाराजा जगतसिंहः अपि सामाजिकबाधाभिः बाध्यः अस्ति, सः स्वप्रेमस्य मुक्ततया अभिव्यक्तिं कर्तुं असमर्थः अस्ति। तस्य सामाजिकप्रतिष्ठायाः, राजनैतिकहितस्य च पालनं कर्तव्यं भवति, यस्मात् कारणात् सः रसकपूरं परित्यक्तुं बाध्यः भवति। सत्ताधारिणः पुरुषाः अपि कदाचित् समाजनियमानाम् अपेक्षाणां च बन्दिनः भवन्ति इति दर्शयति। अनुवादितग्रन्थे रसकपूरस्य सामाजिकस्वीकृतिं न प्राप्य राज्ञी–महिलाः अपि तस्य प्रति ईर्ष्याम् अनुभवन्ति इति वेदना समाजस्य द्विगुणं मानकं प्रतिबिम्बयति। एतस्याम् पङ्क्तौ सिद्धयति यथा– ''एतदेव मयावगम्यते – यत्सा वर्धमानान्ते भाक्तिं सोढुन्न भाक्नुयात्''।[14] यस्याः स्त्रियाः कला, सौन्दर्यं च प्रशंसितं भवति, सा सामाजिकरूपेण

बहिष्कृता भवति इति विडम्बना।

निष्कर्षः –

अनुवादितग्रन्थे पं. मोहनलालपाण्डेय, "रसकपूरम्", महाराजा जगतसिंहस्य रसकपूरस्य च सन्दर्भे शृंगारस्य करुणरसस्य च चित्रणं बहु प्रभावशाली अस्ति। अनुवादकेन एतयोः भावयोः प्रयोगः न केवलं तेषां प्रेमस्य गभीरताम् तस्य दुःखदः अन्तः च दर्शयितुं, अपितु समकालीनसमाजस्य विडम्बनाः, स्त्रियाः असहायता, सत्तायाः दुरुपयोगः च प्रकाशितः। तेषां प्रारम्भिकप्रेमस्य माधुर्यं, आकर्षणं च शृंगाररसस्य माध्यमेन चित्रितं भवति, यदा तु करुणरसः तेषां विरहस्य पीडां सामाजिकबाधाजन्यदुःखं च व्यक्तं करोति। एतयोः रसयोः परस्परसम्बन्धः अस्य ग्रन्थस्य गहनं भावात्मकं गभीरताम् यच्छति, पाठकं च रसकपूरस्य प्रति सहानुभूति–करुणा च पूरयति। "रसकपूरम्" केवलं प्रेमकथा न अपितु सामाजिकभाष्यम् अपि अस्ति यत् अस्मान् तत्कालीनसमाजस्य जटिलतायाः अन्यायस्य च विषये चिन्तयितुं प्रेरयति। मोहनलालपाण्डेयेन शृंगार–करुणरसयोः प्रसिद्धशब्दावलीप्रयोगेन संस्कृतजगति अनुवादितं ग्रन्थं प्रस्तुतं यया मानवीयभावनानां गभीरता सामाजिकवास्तविकतानां कठोरता च द्वयमपि दर्शयति। अयं अनुवादितः ग्रन्थः अद्यत्वे अपि प्रासंगिकः अस्ति यतः अस्मान् प्रेम, समाजः, व्यक्तिगतस्वतन्त्रतायाः च विषये महत्त्वपूर्णाः प्रश्नाः पृच्छति।

सन्दर्भ–ग्रन्थ–सूची :–

1. रसकपूरम्, अनुवादकः मोहनलालपाण्डेयः, प्रका ाकः– व्यासबालाबक्षभाोध–संस्थानम्, जयपुरम्, पृ0 02
2. भरतमुनिप्रणीतं नाट्य ाास्त्रम्, व्याख्याकारः य ावंतकुमारः जो ाी, सुरभिः पब्लिके ानं, उदयपुरम्, पृ0 55
3. भरतमुनिप्रणीतं नाट्य ाास्त्रम्, व्याख्याकारः य ावंतकुमारः जो ाी, सुरभिः पब्लिके ानं, उदयपुरम्, पृ0 55
4. वि वनाथकृत् साहित्यदर्पणः, व्याख्याकारः– भाालिग्राम ाास्त्रि, मोतीलालः बनारसीदासः, पृ0 19
5. मम्मटविरचितं काव्यप्रका ाः, व्याख्याकारः– डॉ सत्यव्रतसिंहः, चौखम्बा विद्याभवनं, पृ0 65
6. वि वनाथकृत् साहित्यदर्पणः, व्याख्याकारः– भाालिग्राम ाास्त्रि, मोतीलालः बनारसीदासः, पृ0 43
7. मम्मटविरचितं काव्यप्रका ाः, व्याख्याकारः– डॉ सत्यव्रतसिंहः, चौखम्बा विद्याभवनं, पृ0 83
8. मम्मटविरचितं काव्यप्रका ाः, व्याख्याकारः– डॉ सत्यव्रतसिंहः, चौखम्बा विद्याभवनं, पृ0 93
9. मम्मटविरचितं काव्यप्रका ाः, व्याख्याकारः– डॉ सत्यव्रतसिंहः, चौखम्बा विद्याभवनं, पृ0 90
10. वि वनाथकृत् साहित्यदर्पणः, व्याख्याकारः– भाालिग्राम ाास्त्रि, मोतीलालः बनारसीदासः, पृ0 106
11. रसकपूरम्, अनुवादकः, मोहनलालपाण्डेयः, प्रका ाकः– व्यासबालाबक्षभाोधसंस्थानम्, जयपुरम्, पृ0 81
12. वि वनाथकृत् साहित्यदर्पणः, व्याख्याकारः– भाालिग्राम ाास्त्रि, मोतीलालः बनारसीदासः, पृ0 116
13. रसकपूरम्, अनुवादकः, मोहनलालपाण्डेयः, प्रका ाकः– व्यासबालाबक्षभाोध–संस्थानम्, जयपुरम्, पृ0 172
14. भरतमुनिप्रणीतं नाट्य ाास्त्रम्, व्याख्याकारः य ावंतकुमारः जो ाी, सुरभिः पब्लिके ानं, उदयपुरम्, पृ0 66
15. रसकपूरम्, अनुवादकः, मोहनलालपाण्डेयः, प्रका ाकः– व्यासबालाबक्षभाोध–संस्थानम्, जयपुरम्, पृ0 149

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 72-76

डिजिटल साहित्य और हिंदी

डॉ. शशि कांत शर्मा
बनारस रेल इंजन कारखाना, वाराणसी (उ. प्र.)

1. भूमिका :–

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से आरंभ हुई डिजिटल क्रांति ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है। साहित्य भी इस परिवर्तन से अछूता नहीं रहा। जैसे–जैसे संचार तकनीकों ने विकास किया, साहित्य के निर्माण, वितरण और उपभोग के रूपों में भी आमूल–चूल परिवर्तन आए। आज साहित्य केवल मुद्रित पुस्तकों तक सीमित नहीं है, बल्कि वेबसाइट, ब्लॉग, सोशल मीडिया, ई–बुक, ऑडियोबुक और पॉडकास्ट के रूप में डिजिटल स्वरूप में भी तेजी से फैल रहा है।

हिंदी साहित्य ने भी इस परिवर्तन को अपनाया है। डिजिटल माध्यमों ने हिंदी को एक नया मंच, नया पाठकवर्ग, और अभिव्यक्ति के नए आयाम प्रदान किए हैं। 'डिजिटल साहित्य' केवल एक तकनीकी संक्रमण नहीं, बल्कि साहित्यिक सृजन और संवाद का नया परिदृश्य है।

इक्कीसवीं सदी के आरंभिक वर्षों में तकनीक ने जिस गति से विकास किया, उसने साहित्य की दुनिया को भी अप्रत्याशित रूप से प्रभावित किया। डिजिटल माध्यम ने साहित्य को एक नया मंच प्रदान किया है, जिससे न केवल रचनात्मकता के नए आयाम खुले हैं, बल्कि पाठकों और लेखकों के बीच संवाद का एक सशक्त माध्यम भी विकसित हुआ है। हिंदी साहित्य, जो लंबे समय तक मुद्रित पुस्तकों और पत्रिकाओं तक सीमित था, अब डिजिटल स्वरूप में तेजी से फैल रहा है। ब्लॉग, ई–पुस्तकें, ऑनलाइन पत्रिकाएँ, सोशल मीडिया और पॉडकास्ट जैसे प्लेटफॉर्म ने हिंदी भाषा में रचनात्मक लेखन को नया जीवन दिया है। इससे न केवल युवा रचनाकारों को अवसर मिले हैं बल्कि वैश्विक स्तर पर हिंदी साहित्य की पहुँच भी विस्तृत हुई है। डिजिटल साहित्य ने साहित्यिक लोकतंत्र को भी सुदृढ़ किया है, जहाँ अब हर व्यक्ति लेखक और पाठक दोनों की भूमिका निभा सकता है।

2. डिजिटल साहित्य की अवधारणा :–

डिजिटल साहित्य वह साहित्य है जो कंप्यूटर या अन्य डिजिटल उपकरणों पर सृजित, प्रकाशित और प्रसारित होता है। इसमें केवल टेक्स्ट आधारित लेखन ही नहीं, बल्कि मल्टीमीडिया आधारित साहित्य भी शामिल होता है – जैसे वीडियो कविता, ऑडियो नाटक, इंटरैक्टिव फिक्शन, ब्लॉग साहित्य, ई–कविताएँ, ग्राफिक उपन्यास, आदि।

डिजिटल साहित्य के प्रमुख स्वरूप :–

- ई–बुक्स और ऑनलाइन पत्रिकाएँ।
- ब्लॉग और पर्सनल वेबसाइट्स।
- फेसबुक पोस्ट्स और इंस्टाग्राम कविताएँ।
- यूट्यूब चैनल पर कविता पाठ।
- पॉडकास्ट और ऑडियो साहित्य।
- मोबाइल एप्स पर लघुकथा संग्रह।
- व्हाट्सएप और टेलीग्राम ग्रुप में रचनात्मक संवाद।

3. हिंदी में डिजिटल साहित्य की यात्रा :–

हिंदी में डिजिटल साहित्य की शुरुआत इंटरनेट के साथ ही आरंभ हुई, परंतु 2000 के बाद इसमें तीव्र गति आई। शुरुआती दौर में कुछ ब्लॉग लेखकों और ऑनलाइन पत्रिकाओं ने डिजिटल मंच पर हिंदी को सक्रिय रूप से प्रस्तुत किया। धीरे–धीरे फेसबुक, यूट्यूब, और अन्य सोशल मीडिया मंचों ने इसे और गति दी।

प्रमुख पड़ाव :–

- **1990 :** कंप्यूटर पर हिंदी टाइपिंग की सुविधा सीमित थी।
- **2000 :** हिंदी ब्लॉगिंग की शुरुआत। जैसे – निरंतर, छींटें और बौछारें, भड़ास, अनुनाद, आदि।
- **2010 के बाद :** फेसबुक और यूट्यूब पर रचनात्मक सामग्री का विस्फोट। हिंदी कविता, कविता कोश, हिंदी समय, प्रतिलिपि जैसी वेबसाइटों का उदय।
- **2020 के बाद :** इंस्टाग्राम रील्स, लघु वीडियो कविताएँ, पॉडकास्ट और मोबाइल एप्स की बाढ़।

4. डिजिटल साहित्य में हिंदी के प्रमुख स्वर :–

(क) ब्लॉग साहित्य :

ब्लॉगिंग हिंदी डिजिटल साहित्य की नींव मानी जाती है। हिंदी ब्लॉग लेखकों ने गंभीर लेखन के साथ–साथ व्यंग्य, कविता, संस्मरण, लघुकथा, आलोचना आदि के लिए भी डिजिटल मंच का उपयोग किया। इनमें से कई लेखक आज भी सक्रिय हैं।

प्रमुख हिंदी ब्लॉग लेखक :–

- आलोक पुराणिक
- समीर लाल 'समीर'
- अनूप शुक्ला
- मिशेल भूषण
- अशोक पांडे (जनपथ)

(ख) ऑनलाइन पत्रिकाएँ और पोर्टल्स :–

डिजिटल माध्यम ने साहित्यिक पत्रिकाओं को नए रूप में प्रस्तुत किया। हिंदी समय, कविता कोश, अनुनाद, समालोचन, पाखी ऑनलाइन, आदि पोर्टल ने साहित्य के जतन और विस्तार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

खास बातें :

- नई प्रतिभाओं को मंच।
- पुरानी सामग्री का डिजिटलीकरण।
- अंतरराष्ट्रीय हिंदी पाठकों तक पहुँच।

(ग) सोशल मीडिया साहित्य :

सोशल मीडिया ने हिंदी साहित्य को अभूतपूर्व विस्तार दिया है। आज फेसबुक, इंस्टाग्राम, ट्विटर, और यूट्यूब पर हजारों साहित्य प्रेमी सक्रिय हैं।

फेसबुक साहित्य :

- सूक्ष्म कविताएँ, कहानी श्रृंखलाएँ, साहित्यिक समूह।
- लेखक–पाठक संवाद की सहजता।
- कई फेसबुक पोस्ट बाद में प्रकाशित पुस्तकों का हिस्सा बनीं।

यूट्यूब और इंस्टाग्राम :

- लाइव कविता पाठ (उदाहरण : द काव्यशाला, हिंदी कविता लाइव)
- काव्यात्मक रील्स, शायरी चैनल।
- ऑडियोबुक चैनल (जैसे : Storytel, Audible Hindi)

(घ) पॉडकास्ट और ऑडियो साहित्य :–

हिंदी में ऑडियो साहित्य तेजी से बढ़ रहा है। कहानी सुनने की परंपरा का यह आधुनिक संस्करण है, जिसमें कहानियों की दुकान, The Musafir Stories, Baal Kahaniyan जैसे पॉडकास्ट मशहूर हैं।

5. डिजिटल माध्यम में रचनात्मक स्वतंत्रता :–

डिजिटल मंचों ने रचनाकारों को बिना संपादक या प्रकाशक की शर्तों के लिखने की स्वतंत्रता दी है। यह लोकतांत्रिक मंच है जहाँ युवा, वरिष्ठ, महिला, ग्रामीण, नगरीय–हर वर्ग की रचनाएँ स्थान पा रही हैं।

मुख्य विशेषताएँ :–

- रचनात्मक लोकतंत्र।
- तत्काल प्रतिक्रिया।
- सीमा रहित प्रसार।
- आंचलिक भाषा और बोलियों का उपयोग (जैसे : बुंदेली में कविताएँ)।

6. चुनौतियाँ :–

जहाँ डिजिटल साहित्य ने अनेक संभावनाएँ खोलीं, वहीं कुछ चुनौतियाँ भी सामने आई हैं :

(क) गुणवत्ता का संकट :

क्योंकि यहाँ कोई औपचारिक संपादन नहीं है, अतः रचनाओं की गुणवत्ता में एकरूपता नहीं है।

(ख) चोरी और कॉपीराइट का उल्लंघन :

सोशल मीडिया पर साहित्यिक चोरी आम हो गई है। मूल रचनाकार का नाम हटाकर शेयर करना एक गंभीर समस्या है।

(ग) क्षणिकता और गहराई का अभाव :

रील्स और छोटे वीडियो के जमाने में गहन साहित्य को पढ़ने का धैर्य घट रहा है।

(घ) मूल्यांकन की कमी :

कोई स्थापित आलोचना पद्धति या मूल्यांकन तंत्र नहीं है जिससे डिजिटल साहित्य का मूल्यांकन हो सके।

7. संभावनाएँ और भविष्य :-

डिजिटल साहित्य हिंदी भाषा के लिए नई संभावनाएँ लेकर आया है :

(क) नए पाठकों तक पहुँचना :

युवा पीढ़ी, जो छपी हुई किताबों से दूर हो रही थी, अब इंस्टाग्राम या यूट्यूब पर साहित्य से जुड़ रही है।

(ख) क्षेत्रीय भाषाओं और बोलियों को मंच :

अवधी, भोजपुरी, मारवाड़ी जैसी भाषाओं में भी डिजिटल साहित्य लिखा और सुना जा रहा है।

(ग) डिजिटल प्रकाशन और स्व-प्रकाशन :

लेखक अब स्वयं अपनी किताबें ई–बुक या पीडीएफ स्वरूप में प्रकाशित कर सकते हैं। Amazon Kindle, Pratilipi, Matrubharti जैसे मंच इस काम में सहायक हैं।

(ग) बहुभाषिक अनुवाद की सुविधा :

Google Translate जैसे उपकरण हिंदी साहित्य को विश्व स्तर पर प्रस्तुत करने में मदद कर रहे हैं।

8. निष्कर्ष :-

डिजिटल साहित्य हिंदी साहित्य का एक नया और समृद्ध विस्तार है। यह परिवर्तन केवल माध्यम का नहीं, अभिव्यक्ति और पाठक वर्ग का भी है। इसमें हिंदी को नई आवाजें, नए रूप, और नया पाठक मिला है। हालाँकि इसकी चुनौतियाँ भी कम नहीं हैं, परंतु रचनात्मकता, सहभागिता और सहजता के कारण यह एक सशक्त साहित्यिक प्रवृत्ति बन चुकी है। भविष्य में यदि गुणवत्ता, संपादन, और मूल्यांकन के मानदंड विकसित किए जाएँ, तो डिजिटल साहित्य हिंदी के लिए एक स्वर्णिम अध्याय बन सकता है.

डिजिटल युग ने हिंदी साहित्य को एक नए मोड़ पर ला खड़ा किया है। आज साहित्य केवल छपाई तक सीमित नहीं रह गया है, बल्कि यह डिजिटल माध्यमों के जरिये अधिक सुलभ, विविध और संवादात्मक बन गया है। हालांकि इस बदलाव के साथ चुनौतियाँ भी आई हैं– मौलिकता की रक्षा, कॉपीराइट, और गुणवत्ता को बनाए रखना महत्वपूर्ण प्रश्न हैं– फिर भी डिजिटल साहित्य ने हिंदी भाषा को जीवंत और प्रासंगिक बनाए रखने में अहम योगदान दिया है। भविष्य में तकनीकी नवाचार और साहित्य के समागम से हिंदी साहित्य की पहुँच और प्रभाव और भी व्यापक होने की संभावना है। इस प्रकार, डिजिटल साहित्य हिंदी के लिए न केवल एक विकल्प है बल्कि समय की आवश्यकता भी बन चुका है।

9. संदर्भ सूची :-

1. त्रिपाठी, विद्या सागर. हिंदी साहित्य और तकनीक, भारतीय साहित्य परिषद, 2020

2. सिंह, नामवर. आलोचना की पहली किताब, राजकमल प्रकाशन।
3. हिंदी समय पोर्टल – www.hindisamay.com
4. प्रतिलिपि एप – www.pratilipi.com
5. दैनिक भास्कर (2021) : "डिजिटल युग में साहित्य का नया चेहरा"।
6. समालोचन ऑनलाइन पत्रिका – www.samalochan.blogspot.com
7. अनुनाद ब्लॉग – anunaad.blogspot.com
8. डॉ. प्रीति सिंह, "हिंदी ब्लॉगिंग : एक नया आंदोलन", हंस पत्रिका, विशेषांक।
9. कविता कोश – www.kavitakosh.org
10. Audible Hindi और Spotify India पॉडकास्ट।

मो 9695577110

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 77–82

भारत के संदर्भ में हनुमानगढ़ जिले का ऐतिहासिक योगदान का अध्ययन

(Study of the Historical Contribution of Hanumangarh District in the Context of India)

NITESH RINWA
COLLEGE LECTURER - HISTORY,
GOVT. GIRLS COLLEGE PILIBANGAN, HANUMANGARH, RAJASTHAN.

Abstract :-

हनुमानगढ़ जिला, जो वर्तमान में राजस्थान राज्य का एक महत्वपूर्ण भाग है, भारतीय इतिहास में एक समृद्ध और विविध सांस्कृतिक धरोहर का वाहक रहा है। यह क्षेत्र प्राचीन काल से ही मानव सभ्यता का केंद्र रहा है, जहाँ कालीबंगा जैसी सिंधु घाटी सभ्यता की महत्वपूर्ण स्थलियाँ स्थित हैं। यहाँ प्राप्त पुरातात्विक अवशेष, मिट्टी के बर्तन, मुद्राएँ और अन्य वस्तुएँ इस क्षेत्र की ऐतिहासिक महत्ता को प्रमाणित करती हैं। मौर्य, कुषाण, गुप्त, और राजपूत काल में हनुमानगढ़ एक प्रमुख राजनीतिक और व्यापारिक केंद्र रहा। इसके अतिरिक्त, स्वतंत्रता संग्राम में भी इस क्षेत्र के वीरों ने सक्रिय भागीदारी निभाई, जिससे यह भारतीय राष्ट्रवाद की भावना का एक महत्वपूर्ण केंद्र बना। यह अध्ययन हनुमानगढ़ के ऐतिहासिक विकास, सांस्कृतिक योगदान, पुरातात्विक महत्व और स्वतंत्रता संग्राम में भूमिका को रेखांकित करता है। हनुमानगढ़ का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य भारतीय इतिहास की गहराई और विविधता को समझने में सहायक सिद्ध होता है।

Keywords : हनुमानगढ़, राजस्थान, सिंधु घाटी सभ्यता, कालीबंगा, पुरातात्विक महत्व, ऐतिहासिक योगदान, मौर्य काल, गुप्त काल, राजपूत काल, सांस्कृतिक धरोहर, स्वतंत्रता संग्राम, भारत का इतिहास, हड़प्पा संस्कृति, ऐतिहासिक स्थल, भारतीय सभ्यता।

Article :

हनुमानगढ़ जिला, राजस्थान राज्य के उत्तर–पश्चिमी भाग में स्थित एक ऐतिहासिक स्थल है, जो प्राचीन सभ्यताओं, सांस्कृतिक विरासत और राजनीतिक आंदोलनों का साक्षी रहा है। यह क्षेत्र विशेष रूप से सिंधु घाटी सभ्यता के एक प्रमुख केंद्र "कालीबंगा" के कारण जाना जाता है, जहाँ पुरातात्विक खुदाईयों ने हजारों वर्ष पुरानी मानव सभ्यता के साक्ष्य प्रदान किए हैं। हनुमानगढ़ का इतिहास केवल प्राचीन काल तक ही सीमित नहीं रहा,

बल्कि यह मौर्य, गुप्त, कुषाण और राजपूत काल में भी एक महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में विकसित हुआ। इसके अतिरिक्त स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भी यह क्षेत्र राजनीतिक जागरूकता और राष्ट्रीय आंदोलनों में सक्रिय भागीदारी के लिए जाना गया। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य हनुमानगढ़ जिले के ऐतिहासिक विकास को समझना, उसके सांस्कृतिक, राजनीतिक और पुरातात्विक महत्व को उजागर करना तथा इसे भारतीय इतिहास की व्यापक परिपाटी में समाहित करना है। इस अध्ययन के माध्यम से यह जानना महत्वपूर्ण है कि कैसे हनुमानगढ़ जैसे सीमावर्ती क्षेत्र ने भारतीय सभ्यता और संस्कृति को समृद्ध करने में योगदान दिया। इसके साथ ही, यह शोध नई पीढ़ी को अपने इतिहास से परिचित कराने और ऐतिहासिक स्थलों के संरक्षण की भावना विकसित करने में भी सहायक सिद्ध हो सकता है। इस प्रकार, हनुमानगढ़ का अध्ययन केवल एक जिले की ऐतिहासिक पड़ताल नहीं, बल्कि भारत की सांस्कृतिक गहराइयों में उतरने का प्रयास है, जो हमें हमारी पहचान और विरासत को बेहतर ढंग से समझने का अवसर प्रदान करता है।

प्राचीन इतिहास और सिंधु घाटी सभ्यता :-

हनुमानगढ़ जिले का प्राचीन इतिहास अत्यंत समृद्ध और गौरवपूर्ण रहा है। यह क्षेत्र न केवल राजस्थान, बल्कि सम्पूर्ण भारतीय उपमहाद्वीप के प्राचीनतम नगरों में से एक रहा है। हनुमानगढ़ के अंतर्गत स्थित कालीबंगा नगर, सिंधु घाटी सभ्यता का एक प्रमुख स्थल माना जाता है, जिसकी खोज ने भारत के इतिहास में एक नई रोशनी डाली। कालीबंगा का शाब्दिक अर्थ है – "काले रंग की चूड़ियाँ", जो यहाँ की खुदाई में प्राप्त हुईं और जिससे इस स्थल का नाम पड़ा।

1950 और 1960 के दशक में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा की गई खुदाई में यहाँ से ईंटों से बने घर, पक्की नालियाँ, अनाज भंडारण केंद्र, अग्निकुंड और खेतों की जुताई के साक्ष्य प्राप्त हुए। यह पहला ऐसा पुरातात्विक स्थल है, जहाँ खेतों की जुताई के अवशेष मिले, जो उस काल में कृषि की विकसित तकनीकों का प्रमाण हैं। इसके साथ ही यहाँ से प्राप्त मुद्राएँ, मृदभांड (मिट्टी के बर्तन), आभूषण, औजार और खेल के सामान सिंधु सभ्यता की विकसित जीवनशैली का संकेत देते हैं। कालीबंगा की योजना, नगर निर्माण की शैली, और सामाजिक संरचना हड़प्पा और मोहनजोदड़ो जैसे स्थलों से मेल खाती है, जिससे यह सिद्ध होता है कि हनुमानगढ़ क्षेत्र प्राचीन भारत की एक महत्वपूर्ण सभ्यता का अंग था। यह भी माना जाता है कि यहाँ के लोग संगठित समाज में रहते थे और धार्मिक आस्थाओं, व्यापार, कृषि और कला में दक्ष थे।

इस प्रकार, हनुमानगढ़ न केवल एक ऐतिहासिक स्थल है, बल्कि यह उस गौरवशाली अतीत का प्रतीक भी है, जिसने भारतीय संस्कृति की नींव रखने में अहम भूमिका निभाई। कालीबंगा के माध्यम से हमें न केवल सिंधु घाटी सभ्यता की झलक मिलती है, बल्कि यह भी ज्ञात होता है कि भारत में सभ्यता और संस्कृति की परंपरा कितनी पुरानी और उन्नत रही है।

मौर्य, शुंग, कुषाण और गुप्त काल का प्रभाव :-

हनुमानगढ़ जिले का ऐतिहासिक महत्व केवल सिंधु घाटी सभ्यता तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह क्षेत्र भारत के विभिन्न शासकीय युगों – विशेष रूप से मौर्य, शुंग, कुषाण और गुप्त काल – में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। इन कालखंडों में यहाँ की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक स्थिति में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए, जिन्होंने इस क्षेत्र की पहचान को समृद्ध किया। मौर्य काल (322–185 ई.पू.) में, सम्राट

अशोक के शासनकाल के दौरान बौद्ध धर्म का प्रसार समस्त उत्तर भारत में हुआ। अशोक द्वारा स्थापित स्तंभ और शिलालेखों के प्रमाण राजस्थान के कई भागों में पाए गए हैं, जिससे अनुमान लगाया जा सकता है कि हनुमानगढ़ क्षेत्र भी मौर्य साम्राज्य के अधीन था। इस समय कृषि, व्यापार और प्रशासन में एक स्थायित्व देखा गया, जिससे क्षेत्र की आर्थिक संरचना मजबूत हुई। शुंग वंश (185–73 ई.पू.), जो मौर्यों के पतन के बाद सत्ता में आया, ने हिंदू धर्म और संस्कृत संस्कृति को पुनः प्रतिष्ठित किया। यद्यपि इस काल के बहुत कम प्रमाण हनुमानगढ़ क्षेत्र से प्राप्त हुए हैं, परंतु सांस्कृतिक दृष्टिकोण से यह काल भारत की धार्मिक विविधता और कलात्मक परंपरा के पुनरुत्थान का काल माना जाता है, जिसका प्रभाव इस क्षेत्र पर भी पड़ा।

कुषाण काल (प्रथम से तीसरी शताब्दी ई.) में यह क्षेत्र अंतरराष्ट्रीय व्यापार मार्गों से जुड़ गया था। कुषाण सम्राट कनिष्क ने बौद्ध धर्म का व्यापक प्रसार किया और गांधार कला का विकास किया। हनुमानगढ़ जैसे सीमावर्ती क्षेत्र, जो उत्तर–पश्चिम भारत से जुड़े थे, वे इस कला, धर्म और व्यापारिक समृद्धि से अप्रभावित नहीं रहे। यहाँ की खुदाई में कुषाणकालीन मुद्राएं और टेराकोटा की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं, जो इस काल के सांस्कृतिक प्रभाव की पुष्टि करती हैं। गुप्त काल (चौथी से छठी शताब्दी ई.) को भारत का "स्वर्ण युग" कहा जाता है। इस काल में साहित्य, विज्ञान, गणित और कला का असाधारण विकास हुआ। हनुमानगढ़ क्षेत्र भी इस काल के धार्मिक और सांस्कृतिक आंदोलन का हिस्सा रहा। हिंदू मंदिर निर्माण, संस्कृत साहित्य और सामाजिक समरसता इस समय की प्रमुख विशेषताएँ थीं। गुप्त राजाओं द्वारा स्थिर शासन ने इस क्षेत्र में शिक्षा और सांस्कृतिक गतिविधियों को बढ़ावा दिया। इन चार प्रमुख राजवंशों के शासनकाल में हनुमानगढ़ न केवल एक भूगोलिक क्षेत्र के रूप में उभरा, बल्कि यह भारतीय इतिहास के बहुविध आयामों से जुड़कर एक ऐतिहासिक पहचान में परिवर्तित हुआ। इन युगों की छाप आज भी इस क्षेत्र की संस्कृति, पुरातात्विक स्थलों और जनजीवन में देखी जा सकती है।

मध्यकालीन इतिहास :-

हनुमानगढ़ जिले का मध्यकालीन इतिहास भी अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। यह काल लगभग 8वीं शताब्दी से लेकर 18वीं शताब्दी तक फैला हुआ है, जिसमें इस क्षेत्र ने राजपूतों, मुस्लिम शासकों और मुग़लों के अधीन अनेक ऐतिहासिक बदलावों का अनुभव किया। इस दौरान हनुमानगढ़ न केवल एक रणनीतिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण स्थल बना, बल्कि यह राजनैतिक संघर्षों, सांस्कृतिक समागम और धार्मिक गतिविधियों का भी केंद्र रहा। प्रारंभिक मध्यकाल में यह क्षेत्र राजपूत वंशों, विशेषकर भाटी राजपूतों के प्रभाव में रहा, जिन्होंने इस क्षेत्र में दुर्गों और बस्तियों का निर्माण किया। हनुमानगढ़ में स्थित "भटनेर किला" (वर्तमान में हनुमानगढ़ किला) इसी काल की एक प्रमुख ऐतिहासिक धरोहर है, जिसका निर्माण लगभग 253 ईस्वी में राजा भूपत ने कराया था और जो समय के साथ कई शासकों के अधीन रहा। यह किला रणनीतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण था क्योंकि यह पंजाब, सिंध और दिल्ली के बीच स्थित होकर एक प्रमुख मार्ग पर था।

मध्यकालीन भारत में जब मुस्लिम आक्रमणकारी उत्तर–पश्चिम दिशा से भारत में प्रवेश करने लगे, तब हनुमानगढ़ की भौगोलिक स्थिति के कारण यह कई संघर्षों और सत्ता–परिवर्तनों का गवाह बना। दिल्ली सल्तनत और तुगलक वंश के समय में यह क्षेत्र अनेक बार विजित किया गया। बाद में मुगल सम्राटों, विशेषकर बाबर और अकबर के काल में इस क्षेत्र का सामरिक उपयोग हुआ। अकबर ने भटनेर दुर्ग को अपने अधीन कर लिया और इसे मुग़ल साम्राज्य में शामिल किया। इस काल में इस क्षेत्र में इस्लामी स्थापत्य शैली, स्थापत्य कला और संस्कृति

का समावेश भी हुआ, जिससे यहाँ की सांस्कृतिक संरचना और अधिक विविध बनी। राजपूत–मुगल संबंधों के कारण यहाँ की सामाजिक संरचना में भी मिश्रित स्वरूप उभरने लगा, जो धार्मिक सहिष्णुता और कलात्मक समन्वय का प्रतीक बना।

इस प्रकार हनुमानगढ़ का मध्यकालीन इतिहास सत्ता, संघर्ष और सांस्कृतिक समागम का प्रतीक रहा है। यह न केवल एक सैन्य केंद्र के रूप में प्रसिद्ध रहा, बल्कि धार्मिक, स्थापत्य और सांस्कृतिक दृष्टि से भी इसने राजस्थान और उत्तर भारत के इतिहास में अपनी गहरी छाप छोड़ी।

आधुनिक काल और स्वतंत्रता संग्राम :–

हनुमानगढ़ जिले का आधुनिक इतिहास भारत की राजनीतिक और सामाजिक चेतना के विकास का प्रतिबिंब है। 19वीं और 20वीं शताब्दी में जब देश में उपनिवेशवाद के विरुद्ध संघर्ष तेज हो रहा था, तब हनुमानगढ़ भी इस राष्ट्रीय आंदोलन का सक्रिय भागीदार बना। इस काल में यह क्षेत्र ब्रिटिश शासन के अंतर्गत बीकानेर रियासत का हिस्सा था, और यहाँ की जनता ने सामाजिक अन्याय, आर्थिक शोषण और विदेशी सत्ता के विरुद्ध आवाज़ उठाई। स्वदेशी आंदोलन, असहयोग आंदोलन, नमक सत्याग्रह और भारत छोड़ो आंदोलन जैसे प्रमुख आंदोलनों में हनुमानगढ़ के युवाओं, किसानों और शिक्षित वर्ग ने उल्लेखनीय भागीदारी निभाई। क्षेत्र में आर्य समाज और गांधीवादी विचारधारा का प्रभाव तेजी से फैल रहा था, जिससे सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ भी चेतना जागृत हुई। हनुमानगढ़ के ग्रामीण क्षेत्रों में भी जनजागरण अभियान, प्रचार यात्राएँ और सभाएँ आयोजित की गईं, जिससे ब्रिटिश शासन के खिलाफ व्यापक जनमत तैयार हुआ।

इस दौरान कई स्थानीय स्वतंत्रता सेनानियों ने भी नेतृत्व किया, जिनमें कुछ नाम इतिहास के पन्नों में भले ही कम चर्चित हों, परंतु उन्होंने धरातल पर आम जनता को संगठित करने और ब्रिटिश शासन की नीतियों का विरोध करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। किसानों के आंदोलनों, विशेषकर कर्जमाफी और लगान विरोधी आंदोलनों, ने हनुमानगढ़ को राजनीतिक रूप से जागरूक क्षेत्र बना दिया। 1947 में जब भारत स्वतंत्र हुआ, तब हनुमानगढ़ बीकानेर रियासत के साथ भारतीय गणराज्य में सम्मिलित हुआ और 1994 में यह श्रीगंगानगर से अलग होकर एक स्वतंत्र जिला घोषित हुआ। आज भी यहाँ स्वतंत्रता संग्राम की स्मृतियाँ, स्मारक और स्थानीय गौरव की कहानियाँ जीवंत हैं। इस प्रकार, आधुनिक काल में हनुमानगढ़ न केवल एक भौगोलिक इकाई रहा, बल्कि यह देश की आज़ादी की लड़ाई में एक विचारशील, साहसी और संगठित भूमिका निभाने वाला क्षेत्र बनकर उभरा। इसकी यह भूमिका भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में एक महत्वपूर्ण अध्याय है।

सांस्कृतिक और सामाजिक योगदान :–

हनुमानगढ़ जिला केवल ऐतिहासिक और राजनीतिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक क्षेत्र में भी अत्यंत समृद्ध एवं प्रभावशाली रहा है। यह क्षेत्र राजस्थान की सीमांत भूमि पर स्थित होने के बावजूद लोकसंस्कृति, परंपराओं, भाषाओं और सामाजिक जीवन शैली की विविधता का सुंदर संगम प्रस्तुत करता है। यहाँ की सांस्कृतिक विरासत एक ओर प्राचीन सभ्यताओं से जुड़ी है, तो दूसरी ओर आधुनिकता और परंपरा के संतुलित समावेश का उदाहरण भी है। इस क्षेत्र की लोक संस्कृति अत्यंत जीवंत और विविध है। यहाँ के लोकनृत्य, लोकगीत, लोककथाएँ और मेलों में राजस्थान की पारंपरिक पहचान स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। विशेष रूप से गेर नृत्य, कच्छी घोड़ी, तेराजा, और पधारो म्हारे देस जैसे गीत यहाँ के ग्रामीण जनजीवन की

आत्मा हैं। मेले जैसे गोगामेड़ी मेला, भटनेर महोत्सव और बालाजी के धार्मिक आयोजन यहाँ की सांस्कृतिक आत्मा को संजोए हुए हैं। भाषाई दृष्टि से हनुमानगढ़ क्षेत्र में राजस्थानी, बागड़ी, हरियाणवी, और पंजाबी जैसी भाषाओं और बोलियों का प्रयोग होता है, जो इस क्षेत्र को भाषाई रूप से समृद्ध और बहुलतावादी बनाते हैं। यह भाषाई मिश्रण सांस्कृतिक विविधता और सामाजिक समरसता का प्रतीक है। सामाजिक दृष्टिकोण से हनुमानगढ़ ने शिक्षा, महिला सशक्तिकरण, दलित उत्थान और कृषि विकास के क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति की है। यहाँ के किसान आंदोलनों और ग्रामीण सुधारों ने सामाजिक चेतना को जागृत किया और जनता में अधिकारों के प्रति जागरूकता उत्पन्न की। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वयंसेवी संगठनों और आर्य समाज जैसे धार्मिक–सामाजिक संस्थानों ने कुरीतियों के खिलाफ कार्य करते हुए समाज में सुधार की प्रक्रिया को गति दी। इसके अतिरिक्त, हनुमानगढ़ की स्थापत्य कला, मंदिर, गुरुद्वारे, दरगाहें, और स्थानीय हस्तकला जैसे मिट्टी के बर्तन, लकड़ी की नक्काशी, और पारंपरिक आभूषण – क्षेत्र की सांस्कृतिक विरासत को दर्शाते हैं। इस प्रकार, हनुमानगढ़ का सांस्कृतिक और सामाजिक योगदान न केवल स्थानीय पहचान को मजबूत करता है, बल्कि भारतीय संस्कृति की विविधता और एकता का भी एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है।

पुरातात्विक महत्व और संरक्षित स्थल :–

हनुमानगढ़ जिला पुरातात्विक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध और भारत के प्राचीन इतिहास को उजागर करने वाला एक महत्वपूर्ण केंद्र है। यह क्षेत्र न केवल सिंधु घाटी सभ्यता के प्रमाणों के लिए प्रसिद्ध है, बल्कि विभिन्न ऐतिहासिक कालखंडों – जैसे मौर्य, कुषाण, गुप्त, और मुग़ल काल – की स्मृतियों को भी अपने गर्भ में संजोए हुए है। यहाँ स्थित अनेक पुरातात्विक स्थल आज भारतीय इतिहास और संस्कृति के संरक्षण में अमूल्य भूमिका निभा रहे हैं।

कालीबंगा :–

यह हनुमानगढ़ जिले का सबसे प्रमुख पुरातात्विक स्थल है, जिसे सिंधु घाटी सभ्यता के एक अत्यंत महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में जाना जाता है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (ASI) द्वारा की गई खुदाई में यहाँ से सिंचाई की विकसित पद्धति, जुताई के खेतों के प्रमाण, अग्निकुंड, ईंटों के बने मकान, मिट्टी के बर्तन, मुद्राएँ, कंकाल, आभूषण एवं दैनिक जीवन से जुड़ी अनेक वस्तुएँ प्राप्त हुईं। यह स्थल हड़प्पा पूर्व और हड़प्पा काल – दोनों सभ्यताओं के प्रमाण प्रस्तुत करता है। कालीबंगा को संरक्षित स्थल घोषित किया गया है और यह इतिहास के विद्यार्थियों और शोधकर्ताओं के लिए आकर्षण का केंद्र बना हुआ है।

भटनेर दुर्ग :–

हनुमानगढ़ शहर में स्थित यह किला लगभग 1700 वर्ष पुराना माना जाता है। इसका निर्माण राजा भूपत ने 253 ई. में करवाया था और यह समय–समय पर राजपूत, मुस्लिम और मुग़ल शासकों के अधीन रहा। यह किला सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण था, क्योंकि यह भारत के उत्तर–पश्चिमी मार्गों की सुरक्षा करता था। आज यह राजस्थान सरकार द्वारा संरक्षित एक ऐतिहासिक धरोहर स्थल है और इसकी प्राचीरें, बुर्जे एवं प्रवेशद्वार तत्कालीन स्थापत्य शैली को दर्शाते हैं।

पिलिबंगा, संगरिया और टिब्बी क्षेत्र :–

इन क्षेत्रों में भी अनेक स्थलों पर पुरातात्विक खोजें हुई हैं, जहाँ से मिट्टी के बर्तन, पत्थर के उपकरण,

प्राचीन टेराकोटा मूर्तियाँ और पुरानी बस्तियों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। ये स्थल प्राचीन मानव बस्तियों और सांस्कृतिक विकास की निरंतरता को प्रमाणित करते हैं।

संग्रहालय एवं संरक्षण कार्य :-

हनुमानगढ़ और कालीबंगा में स्थानीय संग्रहालय स्थापित किए गए हैं, जहाँ खुदाई में प्राप्त प्राचीन वस्तुओं को संरक्षित किया गया है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण और राज्य पुरातत्व विभाग समय–समय पर इन स्थलों के संरक्षण, दस्तावेजीकरण और प्रचार–प्रसार में सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। इन स्थलों की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्ता न केवल हनुमानगढ़ को राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाती है, बल्कि यह भारतीय इतिहास को भी एक ठोस और वैज्ञानिक आधार प्रदान करती है। इनका संरक्षण और अध्ययन भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक सांस्कृतिक खजाने के समान है।

निष्कर्ष :-

हनुमानगढ़ जिला भारत के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। प्राचीन सिंधु घाटी सभ्यता के अवशेषों से लेकर मध्यकालीन राजनैतिक उत्थान–पतन और स्वतंत्रता संग्राम में इसकी सक्रिय भागीदारी तक, यह क्षेत्र भारतीय इतिहास की अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं का साक्षी रहा है। कालीबंगा जैसे पुरातात्विक स्थलों ने न केवल इस क्षेत्र की प्राचीनता को प्रमाणित किया है, बल्कि भारत की प्राचीन सभ्यताओं के अध्ययन को भी समृद्ध किया है। हनुमानगढ़ का योगदान यह सिद्ध करता है कि यह क्षेत्र केवल भौगोलिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय दृष्टि से भी अत्यंत मूल्यवान है। इस जिले का ऐतिहासिक अध्ययन न केवल हमें हमारे अतीत से जोड़ता है, बल्कि वर्तमान और भविष्य की दिशा भी दर्शाता है।

References :

1. शर्मा, आर.एस. (2005). प्राचीन भारत का सामाजिक और आर्थिक इतिहास। दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
2. दया राम सहनी (1921). हड़प्पा और मोहनजोदड़ो की खुदाई रिपोर्ट। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (ASI), नई दिल्ली।
3. भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (ASI) (2020). कालीबंगा : एक सिंधु सभ्यता स्थल की रिपोर्ट। नई दिल्ली : ASI प्रकाशन।
4. मिट्ठल, के.एल. (1998). राजस्थान का इतिहास। जयपुरः राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी।
5. शेखावत, नरेश कुमार (2012). हनुमानगढ़ का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य। बीकानेरः राजस्थान साहित्य मंडल।
6. गुप्त, बलवंत सिंह (2010). राजस्थान के पुरातात्विक स्थल। जोधपुरः भारती प्रकाशन।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 83-94

A brief morphological analysis of Braj Varieties spoken in Rathgawan in Western Uttar Pradesh, India

Juveria Alam
Research Scholar, Department of Linguistics, Aligarh Muslim University.
Ovais Amin
Research Scholar, Department of Linguistics, University of Kashmir.

Abstract :

Braj Bhasha, a principal dialect of the Western Hindi group, has been spoken for centuries across regions of Western Uttar Pradesh, notably in Mathura, Agra, Hathras, and Aligarh. This study investigates the geographical and linguistic landscape of Rathgawan, a village located at the border of Aligarh and Bulandshahr districts in Uttar Pradesh, India. With its proximity to Danpur in Bulandshahr district to the north, Rathgawan emerges as a significant site for examining both geographical and linguistic transitions. The research focuses on the linguistic profile of Rathgawan, where **Braj Bhasha predominates**, interwoven with subtle influences from Urdu. Employing methods of linguistic fieldwork and systematic data collection, the study elucidates the linguistic features characteristic of Rathgawan's speech community, particularly exploring the **dynamic interplay** between Braj and Urdu. Special attention is given to morphological aspects such as noun inflection, verb agreement patterns, pronominal forms, and case marking systems. Although subject to the influence of Standard Hindi, Braj Bhasha retains distinctive structural features deeply rooted in its Prakrit heritage. Drawing upon field observations, textual analysis, and existing linguistic scholarship, this paper documents the key morphological characteristics and regional variations that define the linguistic identity of Rathgawan.

Keywords:
Braj Bhasha, Rathgawan, Morphology, Linguistic Fieldwork, Urdu Influence, Noun Inflection, Verb Agreement, Case Marking, Pronominal Forms, Language Contact.

Literature Review :

The study of Braj Bhasha's morphology has attracted attention from linguists exploring both historical development and structural characteristics within the Indo-Aryan family. Existing literature highlights Braj Bhasha as a significant dialect, with complex morphosyntactic properties shaped by centuries of socio-cultural and linguistic evolution.

Chandra and Kaur (2019) examine Braj Bhasha within the broader framework of ergativity hierarchies in Indo-Aryan languages. Their study points out that Braj exhibits aspect-conditioned ergativity, similar to related dialects like Awadhi and Bhojpuri. They further show that ergative alignment in Braj is sensitive not only to grammatical aspect but also to animacy and volitionality, providing a nuanced understanding of subject marking in different syntactic environments.

Verbeke's (2013) comparative work on alignment and ergativity in New Indo-Aryan languages offers critical insights into how Braj fits within the typological spectrum of ergative languages. His analysis of auxiliary usage and argument structure contributes to understanding how Braj handles subject-verb agreement, particularly in perfective constructions, adding depth to descriptions of Braj verbal morphology.

Drocco (2016) focuses more narrowly on verb morphosyntax in Braj Bhasha. He documents patterns of tense, aspect, and mood marking, emphasizing the importance of auxiliary verbs and participial forms. Drocco's work highlights how verb morphology in Braj is deeply interconnected with the language's pragmatic and discourse features, such as topic prominence and politeness strategies.

Singh (2020) explores phonological variations across different Braj dialects, noting that sound shifts (such as the replacement of /v/ with /b/ or /m/, and the merger of retroflex and dental stops) impact morphological forms. His findings underscore the need to consider phonology when analyzing morphology, particularly in regions like Rathgawan where pronunciation affects suffixation and agreement patterns.

Koul (2008) provides a broader overview of Hindi grammar, which serves as a comparative framework for understanding how Braj diverges from or aligns with Standard Hindi. While his focus is on modern Hindi, Koul's grammatical categories—such as case, number, and gender inflection—inform comparative analyses between Braj and Hindi morphosyntax.

Local demographic resources (Villageinfo.in, n.d.) provide sociolinguistic context for Rathgawan, a village within Aligarh district where Braj Bhasha remains the dominant language. The presence of Urdu influences, especially in lexical borrowing and bilingualism, suggests dynamic morphological adaptation, a theme lightly touched upon in existing linguistic surveys but warranting deeper exploration in studies of micro-variation.

Finally, Sharma (n.d.) traces the historical development of Braj Bhasha, linking its literary prestige to ongoing spoken usage. His emphasis on Braj's literary golden age, particularly during the Bhakti movement, explains the persistence of traditional morphological forms even as modern pressures promote Hindization.

1. Introduction :

Braj Bhasha holds a prominent position among the Indo-Aryan languages, both due to its historical literary contributions and its continued use as a spoken language in Northern India. It was once the primary medium for devotional and poetic works, especially in the Bhakti movement. Despite modern language shifts favouring Standard Hindi, Braj Bhasha remains actively used in rural and semi-urban contexts in the Braj region of Uttar Pradesh. This study aims to explore the unique morphological features of the language, with a particular focus on its noun and verb morphology, pronominal system, and syntactic alignment.

2. Morphological Features of Braj Bhasha :

2.1 Noun

Nouns in Braj morphologically take the inflectional categories of gender, number and case. Syntactically, the other categories which occur with nouns are adjectives, quantifiers, demonstratives, and postpositions. Nouns take several grammatical functions in a sentence. A noun can be a subject of the sentence, direct and indirect object of the predicate, the object of a postposition. It can combine with a restricted set of verbs to form a conjunct verb, which is a very productive method of creating new lexical units. The following subsections provide morphological details of the inflectional categories of nouns, i.e. Gender, Number and Case.

Word	**Gloss**	**Type of noun**
kita:b	book	Common noun
laundija	girl	Common noun
baʧʧan	children	Common noun
launda	boy	Common noun
behen	sister	Common noun

pʰupʰa	uncle	Common noun
pʰupʰi	aunty	Common noun
tai:	aunty	Common noun
taja	uncle	Common noun
rəti	roti	Common noun
tʃʰtʰ	rooftop	Common noun
vaki:l	lawyer	Common noun

2.2 Gender :

In Braj, every noun, whether animate or inanimate, has grammatical gender, i.e., they have gender features of either feminine or masculine. The assignment of grammatical gender is arbitrary and cannot be determined by any physical or inherent properties of the noun. At times a decision regarding the gender of a disputed noun can be arrived at by looking at the gender agreement on modifiers or verbs. Though it is difficult to determine gender, there are certain markers which are helpful in this regard. The following rules help in determining the gender.

MALE	**FEMALE**
Launda 'boy'	Laundija 'girl'
bʰəɪja 'brother'	bʰabʰi 'wife of brother'
Caca 'uncle'	Caci 'aunty'
debər 'husband's younger brother'	dɔrani 'wife of husband's younger brother'
nana 'maternal grandfather'	nani 'maternal grandmother'
dada 'paternal grandfather'	dadi 'paternal grandmother'

bəkra 'he-goat'	bəkri 'she goat'
gʰoɽa 'horse'	gʰoɽi 'mare'
ʤõpəɽa 'hut'	ʤõpəɽi 'hut'
kʰati 'carpenter'	Kʰatın 'wife of carpenter'
ʤutra 'bull'	ʤuttiya 'buffalo'
pilla 'he- puppy'	pillia 'she-puppy'

Gender markers :

Genders assigned to inanimate objects

1. Nouns with /ɔ/ endings are mostly masculine:
- melɔ 'fair'
- səharɔ ''support'
- matʰɔ 'forehead'

2. Nouns with /-i/ endings are primarily feminine:
- srıʂɽı 'nature'
- dʰvənı 'sound'
- gətı 'speed'
- dʰərti 'earth'

2.3 Number :

In the Braj grammatical number system, nouns exhibit a two-way distinction, categorizing them as singular or plural. Singular forms consist of the bare noun stems, while plural forms are indicated by appending either /e/ or /- ɔ:/, sometimes with nasalization. some nouns ending in /i/ only need to be nasalised to indicate plural number, while some others take /jã/:

singular	gloss	plural
naukrani	maid	naukraniyan
Tale	lock	talon

Baccha	child	baʧʧhe
lugai	wife	lugaɾja

2.4 Pronoun :

A pronoun is a word that can function by itself as a noun phrase. Pronouns are used to replace nouns or noun phrases in a sentence, often to avoid repetition or to make sentences clearer and more concise. They typically refer to entities previously mentioned in the discourse or context, or to entities understood from the context.

Personal, 1st person

The first person personal pronouns spoken in rathgawan :

singular	**gloss**	**plural**	**gloss**
hɔ, mɛ	i	həm	we
mo	I.obl	hɔm	We.obl
mohi	me		

Personal, 2nd person :

singular	**gloss**	**plural**	**gloss**
tu	You (informal)	tum	you
to	you		
tera	You (poss)	tumharo	your

Personal, 3rd person

singular	**gloss**	**plural**	**gloss**
vəh	(s)he	ve, vɛ	they

va	(s)he.Obl	un, vin	They.Obl

2.5 Case :

The term "case" refers to a morphological category indicating a word's grammatical role, such as subject, direct object, indirect object, or possessor. This feature is characteristic of inflected languages, which modify the form or ending of words based on their usage. The specific case assigned to a noun phrase is determined by the language's syntax. This relationship between a verb and a noun, or between two nouns, can be shown through extensive inflectional endings on the noun, as seen in Sanskrit. Alternatively, it can be indicated by adpositions (pre- or postpositions) accompanying the noun, either with or without morphological changes. Abbi (2001) distinguishes between "case" and "case marker," noting that while the former represents a semantic relationship, the latter conveys this relationship through phonological means.

Verb conjugation in Braj Bhasha displays several unique traits, particularly in tense and agreement morphology. The language uses a wide array of auxiliary verbs and aspectual suffixes.

- The **future tense** often uses suffixes like **-go/-gi** (e.g., *jaungo* – I will go).
- The **past participle** aligns with the object's gender and number when the verb is transitive and ergatively aligned.
- Infinitives typically end in **-n** or **-b**, such as *dekhna* or *dekhb* (to see).

Auxiliary forms like *ho, hei, bhayo, bhayi* are common in compound verb constructions, indicating tense and aspect more than person.

Case	**Case marker**	**Example sentence**
ergative	ne,nẽ , nɛ , nɛ̃	ʊs ne kaha wo na arɔ He erg said he neg come 'He said ,he is not coming'
accusative	ku , kũ , ku	Ghar ku ʤa

		Home to go 'Home to go'
dative	, ko , kõ , kɔ , kɔ̃	Seb ko kʰai le apple dat eat perf. Take Eat apple
ablative	te , tẽ ,tɛ ,se	Mæ ma: se kʰana banana sekʰri Me mother abl. food make learning I am learning cooking from my mother
Instrumental	se	ʊsne dndæ sæ mara He stick inst. beat He has beated with stick
Genitive	ko, kɔ , ki , ke	vo stia ki launjiya She sita gen. Girl

		She is daughter of sita
locative	pɛ , mẽ , mɛ̃	pani me ku:d go Water loc. Jump perf. Jumped into the water.

2.6 Adjectives :

In Braj Bhasha, adjectives conform to the characteristics of the nouns they modify, leading to alterations in their form. The gender, number, and case of the modified nouns directly affect the form of the adjectives.

IPA	**Gloss**
maelɔ	dirty
əccʰɔ	good
bəɽɔ	big
ũci	high
gərib	poor
gʰəɽijɑ	Bad quality
bəɽʰija	Good quality

Qualitative Adjectives :

These adjectives indicate qualities. Within this category, primary adjectives end in "-o"

IPA	Gloss
əccʰɔ	good
bəɽɔ	big
cʰoɽi	small

Numerals and Quantifiers :

Modifiers indicating the quantity of a noun or pronoun are termed numerals or numeral adjectives, while determiners expressing quantity are referred to as quantifiers.

Cardinals :

IPA	Gloss
pɑ̃ʧi	five
nɔ	nine
terɛ	thirteen

Ordinals :

IPA	Gloss
dusrɔ	second
nɔmɔ	ninth
dəsmo	Tenth

Fractionals :

IPA	Gloss
dɛɽʰ	One and half

pɔn	Three fourth
sɑɽʰe	half

Multiplicatives :

IPA	Gloss
dunɔ	double
tigunɔ	triple

Quantifiers :

IPA	Gloss
ittɔ	That much
kucʰ	A few
tʰorɔ	Little bit

3. Dialectal Variation and Sociolinguistic Factors :

Braj Bhasha is not monolithic; it exists on a continuum with regional variations. Speakers in rural Mathura may display more conservative forms than those in Agra or Aligarh, where urban influence and Hindi dominance are stronger.

Sociolinguistic factors such as education, urbanization, and media exposure also impact morphological usage. Code-switching with Hindi is common, especially among younger speakers, sometimes leading to morphological simplification or hybridization.

4. Conclusion :

The morphology of Braj Bhasha reveals a rich tapestry of linguistic features shaped by historical continuity and regional interaction. This study has highlighted core morphological patterns—such as gender-based inflection, aspect-sensitive ergativity, and verb conjugation—that distinguish Braj from Standard Hindi and underscore its linguistic independence.

By focusing specifically on the linguistic profile of **Rathgawan**, a village situated within the Braj-speaking belt of Western Uttar Pradesh, this paper also sheds light on

localized variation. In Rathgawan, **Braj remains the dominant spoken variety**, but it exists alongside **influences from Urdu**, which subtly shape vocabulary choices, code-switching habits, and even syntactic preferences among bilingual speakers. This blend reflects the dynamic and fluid nature of linguistic identity in rural Northern India.

Ultimately, the morphology of Braj Bhasha, especially as spoken in places like Rathgawan, offers valuable insights into language contact, preservation, and change in small community settings. Continued documentation and analysis are essential for understanding how such languages evolve under the pressures of urbanization, education, and media-driven standardization.

References :

1. Chandra, P., & Kaur, G. (2019). *Braj in the ergativity hierarchy*. ResearchGate. https://www.researchgate.net/publication/339100329_Braj_in_the_Ergativity_Hierarchy
2. Drocco, A. (2016). *The morphosyntax of the verb in Braj Bhasha*.
3. Koul, O. N. (2008). *Modern Hindi grammar*. Dunwoody Press.
4. Sharma, R. (n.d.). *Braj Bhasha ka vikas*. Hindi Sahitya Online. https://www.hindisahity.com/braj-bhasha-ka-vikas/
5. Singh, S. (2020). Phonological variations in Braj dialects. *Journal of South Asian Linguistics*.
6. Verbeke, S. (2013). *Alignment and ergativity in New Indo-Aryan languages*.
7. Villageinfo.in. (n.d.). *Rathgawan village in Jawan Sikanderpur (Aligarh), Uttar Pradesh*. https://www.onefivenine.com/india/villages/Aligarh/Jawan-Sikanderpur/Rathgawan

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 95–103

MUTUAL FUNDS : CHALLENGES AND OPPORTUNITIES

Dr. Anju Singla
Associate Professor, Department of Commerce, Vaish College, Rohtak

ABSTRACT :

Mutual Funds were introduced in India in year 1963, when Indian Government came up with UTI i.e. Unit Trust of India. UTI enjoyed monopoly in the Mutual Funds market in India until 1987, when other government controlled Indian Financial companies established their own funds such as State Bank of India (SBI), Punjab National Bank (PNB) etc. It is a vehicle that pool funds through various source such as retail investors, investment bankers, foreign investors etc. These funds are invested in various assets namely equity, debt, real estate, commodity etc. by the professionals who view the changing marketing trends and provides investors regular returns in form of dividend, interest and capital appreciation. During Covid-19, mutual funds became new trend in India as retail investors started looking mutual funds as safe, steady and potential source of income. Since every coin has two faces so is with Mutual Funds. Mutual funds where they provide steady and safe source of income, on the other side there are serious concerns which primarily include lack of financial literacy, frauds and malpractices with investors etc. Through this paper, a dig has been made to study the challenges and opportunities coming up with the mutual funds and efforts to make people financially literate ensuring smart investing.

Key Words : Mutual Funds, Fund Manager, Asset Management Company

INTRODUCTION :

In past days, every investor used to look up equity market as the only available option for investing for earning quick returns. Moreover, new investors lacking experience and knowledge about the market end up losing their hard-earned money. Mutual fund acts as an agent who takes

money from these new investors and invest it on their behalf in various assets and provides returns against small commission or fees. Mutual funds offer their market expertise to the investors providing the desired returns against small commissions.

GENESIS OF MUTUAL FUNDS :

These funds were firstly seen in Belgium back in year 1822. It soon spread to the Great Britain and France. These funds became popular in the United States in the 1920s and continue to be popular in the 1930s. Moving forward, these funds experienced tremendous growth after World War II, especially in the 1980s and 1990s. Life Insurance Company (LIC) set up its mutual fund back in June 1989 while General Insurance Corporation (GIC) had started its mutual fund in December 1990. Later on, private sector steps in year 1993, which brings revolutionary changes in mutual fund market and a new era started offering a wider ranger fund to invest in. Further, Mutual Fund Regulations was introduced for the first time in India, under which all mutual funds, except UTI were to be registered and governed. Back then Kothari Pioneer (now Franklin Templeton) become the first private sector mutual fund to get registered in July 1993 under the same. With advent of time, Indian mutual fund market marked with significant change namely increasing fund houses, entry of foreign competitors in Indian market and also several mergers and acquisitions. At the end of February 2025, the Assets under Management stood at Rs. 64.53 trillion. The figures have grown 5-fold in a span of 10 year from Rs. 12.02 trillion (February 2015) to Rs. 64.53 trillion (February 2025).

NEED OF MUTUAL FUNDS :

- Innovative way of earning higher return with relative less efforts.
- Building a risk diversified portfolio.
- Saving in small amounts, building big corpus fund for future.
- Reduce your tax liability.
- Benefit of high liquidity

OBJECTIVES OF PAPER :

1. To explain mutual funds and its related concepts.
2. To elucidate the opportunities coming with the introduction of mutual funds.
3. To spell out challenges arising with mutual funds
4. To provide counter measures for dealing with the upcoming challenges.

The general working model of a mutual fund can understand as shown below :

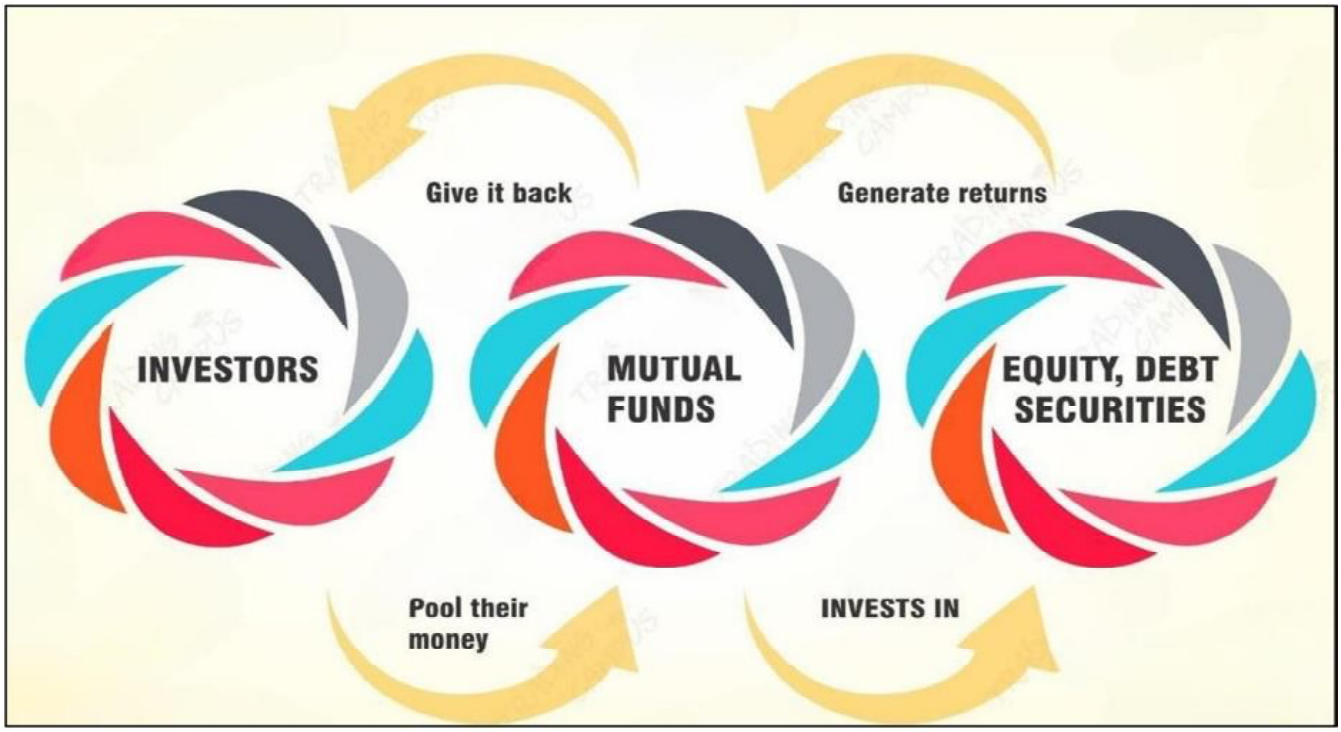

TYPES OF MUTUAL FUNDS :

Mutual funds can be categorized on following basis as shown below:

Management Style	Asset Class	Liquidity	Investment Style	Investment Specialty
Actively Managed Mutual fund	Equity Mutual fund	Open ended Mutual fund	Growth Mutal fund	Equity Linked Saving Scheme
Passively Managed Mutual fund	Debt Mutual fund	Close ended Mutual fund	Value Mutual fund	Sectoral Mutual fund
	Hybrid Mutual fund	Interval Mutual fund	Contra Mutual fund	Real Estate fund
				Fund of Funds

Emerging opportunities and challenges with the rise of mutual fund in India :

The Indian economy is very diverse in nature. The Indian mutual fund market undergone tremendous changes over the years. The market achieves a high watermark when it doubles its Asset under management (AUM) from Rs. 3.6 trillion in FY 2007 to Rs. 6.13 trillion in FY 2010 – clocking an impressive growth of 16.2% each year. Since then, Indian economy along with other nations faced a severe slowdown. Coupled with falling value of Indian Rupee, the Indian mutual fund market stuck in a capricious global economic environment. However, it is strongly believed that Indian mutual fund market has not yet achieved its global peak and if proper measures are taken, market may again grow at its former growth path.

Primary hurdle in development of Indian Mutual fund market is due to skewed participation of the investors. Majority of participation in Indian mutual fund market is focused in metro cities such as Delhi, Bangalore, Chennai etc. leaving other parts of the country. There is sharp division in terms of investment in comparison with some cities and rest of the country. The AUM/GDP ratio is one of the best indicators of how much yearly income is being invested into mutual funds. This implies that population residing in the major part of country is still unaware about market potential and can be part of future potential market. Hence this skewedness in the contribution is the biggest challenge as well as biggest opportunity at the same time.

The underutilization of mutual funds in Indian economy is also due to deeper structural problem of Indian Financial System which is not unique. Major portion of Indian population doesn't have any access to formal banking services. According to 2021 World Bank Global Findex, only 78% of Indians have account in a bank or other formal financial institution out of which majority of them are inactive. Even in saving terms at formal or informal institutions, India continuous to be stay beside due to high propensity of consumption. This high consumption prevents people from saving and investing the same. We reproduce some of the financial indicators from world bank's Global Findex survey to highlight some of the key areas where India lags.

Chart 1: India has doubled account ownership since 2011 (35%) and reduced the gender and income disparity Adult with an account (%) 2011-21

(Source: Global Findex Database 2021)

Financial inclusion has been a priority for the Indian policy makers. The Reserve Bank of India (RBI) has come up with various measures to increase proportion of Indian population with access to formal financial system. Use of services of business facilitators and business correspondents, introduction of Ultra Small Branches (USBs) in remote areas in India, linking of Aadhaar with bank account, direct cash transfer etc. result in increase in access to formal banking system to Indian population but with low saving rate. These measures towards financial inclusion will be beneficial for the Indian Mutual fund market since investment houses can provide investment opportunities in remote location also. These steps will affect in long run and Indian mutual fund market has long way to go.

The advantage of having an active participation of retail investors in mutual fund and not just limited to big investors is also emerging trend with the introduction of Mutual Funds. Retail investors contribute towards major portion of AUM with investment funds. It has been shown in past studies that institutional investors herd around small-cap and mid-cap fund which offer relatively higher return and growth prospects thereby increasing buying and selling pressure of capital market. Institutional buying and selling of stock also increase the price adjustment process in capital market. Hence this overall lead to development of Indian capital market which are largely desirable.

The Indian mutual fund market remains highly underpenetrated, only a small proportion of Indian population prefer investing in mutual funds. This is also due to lack of knowledge about mutual funds, how they are different from ordinary investment, how they are managing the financial resources, how they are able to secure superior returns over traditional investments. According to the Boston Analytics reports in 2010 on Mutual funds, almost one-third of the Indian respondents don't have any idea how and where to invest. Most people remain unaware about the basic financial concepts such as asset allocation, benefit of diversification, passive-active investment strategies etc.

Most Indian households and businesses tend to be extremely risk averse and concerned about their hard earned money. Therefore, they prefer conventional way of saving and saving means such as keeping in bank account, purchasing gold, post deposits, fixed deposits etc. They consider Mutual funds as risky investment even though several funds invest in government securities which are more save than bank deposits. Similar behavior is shown in capital market where equity is more preferred than mutual funds. This calls for public dissemination of knowledge regarding mutual funds and its benefits which will encourage people to shift their focus from conventional mode of saving to new modes. As per various reports Indian population prefer investing most of their saving in liquid assets and little portion in capital market.

The Mutual fund market offers something for everyone. A large number of schemes are offered by AMCs and schemes are designed to suit the investor's requirement and providing the required returns. Investors can choose the scheme according to their preferences: open ended fund or close ended fund, equity fund or debt fund, growth fund or income fund etc.

Though the large and established mutual fund market comes with one of the irony that the variation is rather intimidating for small investors. Some funds focus on exclusively on single asset whereas other focus on different assets. Similarly, some funds offered variations to investors while other offer different investment plan. This is highly beneficial for all well-informed investors conducting research and investing smartly, on the other side is highly intimidating for small and novice investors who just invest their funds without much research. Hence, these investors end up choosing simply asset which just looks highly beneficial.

Standardization issues and substandard customer support service create distrust in investors' mind and act as a barrier in the development of the mutual funds market. This also prevent people on providing someone with their money for investing on their behalf with the fear of losing it or getting cheated by them. Many people who were cheated by brokers and ended up losing money, doesn't find proper mechanism for taking legal actions against the wrongdoers and make good their losses. Hence investors need to be made financial literate so they can invest smartly and safely. Also, standardized procedure should be developed to seek remedy.

Another challenge faced by AMCs in India is increasing efficiency of their distribution channels. It can be defined as Asset under Management earned for one rupee spend on distribution cost. In other words, attracting small investors and accessing remote unexplored areas doesn't come cheaply for asset management companies. More outlay has to be done for distribution and marketing for developing new markets in such areas. Hence AMCs seem unwilling go to that extent for developing new markets and keep their focus on current marketing. This keeps the focus on developed cities only and keeping the remote areas out of preview of market for mutual fund. As per the reports, it was stated that an AMC in present distribution model, it takes a typical AMC 3 years to breakeven. This leads to a challenging situation for AMCs to expand regularly as they are judged annually. Hence, even though some AMC which tends to expand in several towns, the paybacks would be so far away in the future that only least risk-averse managers would go ahead for such expansion.

Furthermore, considering the number of active agents of the asset management companies also poses a major hurdle for the under penetration of mutual fund market. The commission

earned by the insurance company agents is up to 35% on the premium which is much lower in case of mutual fund agents. This also leads to inefficiency in distribution model of asset management companies.

This combination of challenges and opportunities emerging with the mutual fund market creates a complex situation for the Mutual fund market in India. AMCs need to overcome these hurdles to the increase the participation in mutual funds. Investors also need to look beyond the conventional approach of investments through financial awareness. In addition to this, standards procedures and campaigns should be tailored for increasing visibility of mutual fund as an easier and safer means for investments.

MEASURES TO DEAL WITH CHALLENGES :

It is concluded that mutual fund presence is highly skewed towards few cities in the country. This is primarily due to presence of large industries which thereby attracting a bulk of investment through non-retail and institutional modes. Keeping them aside from these areas, retail contribution from overall country is quite low which poses major hurdle in development of Indian mutual fund market.

It is observed that independent financial agents are associated with high sales of mutual funds especially among retail contributories. Agents in top cities are managed to earn very well, similarly to push sales in other areas AMCs should provide incentives to them for educating people and target the unexplored areas of country and provide services there.

The commission earned by these financial agents is very low in comparison to other agents (especially insurance agents). Increasing the outlay over increasing agent commission will be helpful in routing their ways into unexplored markets and increasing AUM. Similarly focusing on target advertisements programs and campaigns in these areas will have dual benefits. Since it helps investors earn on their idle money along with it will benefit AMCs in increasing their customer base.

It is also observed that adult literacy or bank penetration don't show any strong correlation with mutual fund penetration. This lack in strong correlation is a strong indicator that adult still prefer conventional mode of investment and banking channels are not utilized properly for channeling the funds. RBI policies and campaigns are expected to develop saving and investment habits in Indian population. This may lead to shift in focus from conventional mode of investment to new mode and channelizing more funds in the mutual funds market.

CONCLUSION :

In the end, it can be said that there are many hurdles that fund houses in India are yet to overcome. Along with this increasing habit of population is also positive indicator towards expected development. Indian mutual fund market is yet long way to go achieving new heights.

References :

1. Aabhas Pandya (2001), "Have Mutual Funds passed the Test?" ICFAI Reader, Vol. III 6 pp 50-51
2. Agrawal GD. (1992), "Mutual Fund and investors interest (Chartered Secretary) The Journal for Corporate Professionals Vol XXII (I) pp 23-24.
3. Mchta Rajan (2003), "Indian Mutual Fund Industry: Challcnging Issucs"' Chartcrcd Financial Analyst, Vol IX, pp 32-33.
4. Salam Abdus and Kulsum Umma (2003), "Savings Behaviour in India: An Empirical Study", The Indian Economic Journal Vol 50(1), pp 77-80.
5. Global Findex Database 2021

E mail id - anjusingla20@gmail.com
House No. 773/23, D.L.F. Colony, Rohtak (Haryana) -124001
Mobile No. 9416836181

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 104–107

वैश्विक दृष्टि से रामचरितमानस की प्रासंगिकता

सपना विश्वकर्मा, शोधच्छात्रा
प्रो. अञ्जलि यादव, शोध निर्देशिका

सारांश :–

वर्णानामर्थसंधानां रसानां छन्दसामपि।
मंगलानां च कर्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

भारतीय संस्कृति जीवन के समान ही बहुपक्षीय है। इसमें मनुष्य के बौद्धिक और सामाजिक पक्ष सम्मिलित है। यह मनुष्य की सौन्दर्यात्मक तथा आध्यात्मिक भावनाओं को भी दर्शाती है। भारत एक ऐसा विशाल देश है, जो स्वयं में भौतिक और सामाजिक वातावरण की अनेक विविधता को समाये हुए हैं। वस्तुतः चरित्र का निर्माण करने वाली शक्ति के रूप में इसमें अवचेतन के प्रति प्रेरणा भी निहित है। भारतीय संस्कृति विविध व बहु आयामी चरित्र के रूप में एक लम्बी अवधि के दौरान सभी विविध सांस्कृतिक समूहों के संश्लेषण का ही देन है। भारतीय संस्कृति का यह विशिष्ट लक्षण और अनोखापन सभी भारतीयों के लिए अमूल्य धरोहर है।

श्रीरामचरितमानस भारतीय संस्कृति में एक विशेष व अनूठा स्थान रखता है। यह सत्य सनातन धर्म का द्योतक भी कहा जाता है। सनातन धर्म किसी भी भारतीय के घर में श्रीरामचरितमानस उपलब्ध न हो ऐसा हो ही नहीं सकता है। रामचरितमानस ऐसा महाकाव्य है जो जीवन और संघर्ष का परिचायक है। इसलिए जीवन में जीवनता बनाए रखते हुए संघर्ष की प्रेरणा देने हेतु श्रीरामचरितमानस जनमानस की मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करता है।

भारतीय संस्कृति का चित्रण जितना मानस में किया गया है। शायद ही किसी और ग्रन्थ में हो, क्योंकि इसमें श्रीराम जी के माध्यम से, लक्ष्मण जी के माध्यम से और अन्य चरित्रों के माध्यम से हर चीज की चरम सीमा बताई गयी है। जैसे– मर्यादा की चरम सीमा, भातृप्रेम की चरम सीमा, भक्ति की चरम सीमा इत्यादि।

श्रीरामचरितमानस एक सांस्कृतिक कृति है, इस बात को हमेशा ध्यान में रखना चाहिए। किसी भाषा की कोई कृति केवल साहित्यिक कृति नहीं होती, बल्कि उसमें उस देश–समाज का, राष्ट्र की संस्कृति भी प्रवाहित होती है। ये कहना चाहिए कि भारतीय संस्कृति का प्रवाह रामचरितमानस में होती है। उसको उसी रूप में देखा जाना चाहिए। प्रस्तुत शोधपत्र में हम गोस्वामी तुलसीदास कृत भारतीय संस्कृति में रामचरितमानस का साहित्यिक महत्त्व पर विचार–विमर्श करें।

मुख्य शब्द :– भारतीय संस्कृति, श्रीरामचरितमानस, साहित्यिक, रामायण।

विश्व की प्रत्येक संस्कृति और भाषा में कुछ ऐसी साहित्यिक कृतियां अवश्य होती है, जो अपने दर्शन,

विचार, विषय–वस्तु, काव्य शैली आदि विशेषताओं के चलते जनता का कंठहार बन जाते हैं। इस रचना में व्याप्त मूल्य सहृदय पाठक के जीवन का आधार बन जाते हैं। गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस पर जितनी भी चर्चा, आलोचना–समालोचना और समीक्षा हुयी है। उतनी शायद ही किसी अन्य लिपिबद्ध ग्रन्थ की हुयी होगी और हो भी क्यों न? ऐसा और कौन सा ग्रन्थ है, जिसने हम संसारी जीवों के व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक और राजनीतिक जीवन के विभिन्न अंगों को इतने मर्मस्पर्शी एवं स्पष्ट ढंग से छुआ हो, चाहे वह परिवार के सदस्यों के परस्पर संबंधों की मर्यादा हो अथवा राजकीय काम–काज व राजा के कर्तव्यों की।

भारत विविधताओं से भरा एक विशाल देश है, जहां विभिन्न प्रान्तों एवं राज्यों की अपनी–अपनी भाषाएँ तथा सभ्यता संस्कृति है। अलग–अलग प्रान्तों की संस्कृतियों की प्रतिछवि रामकथा में देखने को मिलती है। राम–सीता कहीं जनजातीय परिधान में दिखलायी पड़ते हैं। तो कहीं क्षेत्र विशेष की पारस्परिक वस्त्र धारण किए हुए तथा उन क्षेत्रों से संबंधित पारस्परिक मान्यताओं का पालन करते हुए देखे जाते हैं। उनके रंग–रूप, वेश–भूषा, खान–पान, रहन–सहन जीवन शैली आदि में भिन्नता देखने को मिलती है। भले ही अलग–अलग प्रदेशों की सांस्कृतिक प्रभाव के कारण रामकथा में भिन्नता के दर्शन होते हैं किन्तु भाव की दृष्टि से सभी में एक समता ही परिलक्षित होती है। राम हर रामकथा में राजा दशरथ के ही पुत्र हैं, राम सीता के स्वामी तथा लक्ष्मण के बड़े भाई हैं। धर्म के रक्षक तथा प्रजा के हितैषी एवं मर्यादा पुरूषोत्तम ही रहे हैं।[1]

श्रीरामचरितमानस का भारतीय साहित्य पर गहरा पड़ा है। इसमें निहित नैतिक और आध्यात्मिक शिक्षाएँ भारतीय साहित्य में व्याप्त है, रामचरितमानस कई कलात्मक और प्रदर्शनात्मक रूपान्तरणों के लिए प्रेरणा रहा है। इसके मूल्यात्मक साहित्य के प्रसंगों को निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया जा रहा है।

माता-पिता की आज्ञा का पालन एवं उनको सर्वोच्च स्थान :-

श्रीरामचरितमानस में श्रीराम जी के माध्यम से माता और पिता की आज्ञा को सर्वोपरि स्थान दिया गया है। उन्होने वनगमन को जिस प्रकार शिरोधार्य किया, वह उस युग में भी आदरणीय था और आज के युग में भी आदरणीय है। और आगे भी आदरणीय एवं अनुकरणीय भी रहेगा। यही हिन्दू धर्म की संस्कृति है। यही हमारी पहचान है।

भ्रातृप्रेम :-

श्रीरामचरितमानस में लक्ष्मण ने भ्रातृप्रेम की चरम सीमा को छुआ है। उन्होने अपना जीवन, यहाँ तक कि प्राकृतिक किया जैसे निद्रा का भी त्याग कर दिया था। यह सर्वविदित है कि लक्ष्मण जी वनवास की अवधि पूरे 14 वर्ष तक नहीं सोए थे। इसलिए उन्होने अपनी शारीरिक क्रियाओं को, प्राकृतिक क्रियाओं को भी अपने भाई के लिए त्याग दिया। अपने गृहस्थ जीवन को, अपना सर्वस्व अपने भाई पर निछावर कर दिया। भ्रातृप्रेम का इससे अधिक अच्छा उदाहरण देखने को मिल ही नहीं सकता। इसके साथ–साथ भ्रातृप्रेम की पराकाष्ठा तो देखने को मिलती है, कुम्भकरण में। जिन्होने सब कुछ सामने देखते हुए भी अपने भाई का हाथ, अपने भाई का साथ नहीं छोड़ा, एवं मृत्यु को गले लगा लिया। जिसमें उनका कोई भी स्वार्थ नहीं था। उन्होने केवल अपने भाई के लिए अपने जीवन को त्याग दिया। यहाँ पर कुम्भकरण का त्याग आदरणीय है।

राजा-प्रजा का सेवक :-

श्रीरामचरितमानस में हर प्रकार की भारतीय संस्कृति की चरम सीमा का उल्लेख मिलता है। राजा का

कर्तव्य है कि प्रजा पालन या जनता की सेवा। श्रीरामचरितमानस में शिवभक्त रावण के मन की बात जो उन्होने न केवल स्वयं के मोक्ष के लिए सोची अपितु सारी राक्षस जाति के शुभ कल्याण के लिए भी इस पर विचार किया। यथा–

सुर रंजन भंजन महि भारा। जौ भगवंत लीन्ह अवतारा।।
तौ मैं जाई बैरू हठि करउँ। प्रभु पर प्रान तजै भक्तरउं।।[2]

मर्यादा का चरमः (अति सर्वत्र वर्जयेत्) :-

श्रीरामचरितमानस में श्री राम जी ने मर्यादा के चरम को छू लिया है। माना जाता है कि राजा का धर्म है अपनी प्रजा की देखभाल करना, उनके सुख–दुख का ख्याल रखना। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि प्रजा के कुछ भी कहने पर अपने और अपने परिवार का ध्यान न रखा जाए। श्रीराम जी ने एक धोबी के कहने पर अपनी गर्भवती पत्नी सीता का त्याग कर दिया जो कि मर्यादा का चरम है। इसके बाद जो भी कुछ हुआ है, वह हम सभी जानते हैं। परोक्ष रूप से यहाँ पुरूष जाति का अपने परिवार एवं उसके सदस्यों की सुरक्षा, संगठन और अनुशासन की शिक्षा दी गयी है।

गृहस्थ आश्रम में संतुलन अत्यावश्यक :-

श्रीरामचरितमानस में तुलसीदास जी ने परोक्ष रूप से यह शिक्षा देने का प्रयत्न किया है कि चारों आश्रमों में गृहस्थाश्रम सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इसमें सभी रिश्तों को, सभी भावनाओं को, सभी मर्यादाओं को, स्वयं को संतुलित करके चलना पड़ता है। यह संतुलन बहुत अधिक कठिन है। यहीं पर सब कुछ करते हुए ही अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करना है एवं निरन्तर कर्मशील रहते हुए भक्ति मार्ग के द्वारा ईश्वरत्व को भी प्राप्त करना है। यदि परिवार सही है तो, समाज सही है, तो राज्य सही है, राज्य सही है तो देश सही है और देश सही है तो विश्व सही रहेगा। अतः विश्व को सही करने की प्रथम इकाई मानव है, परिवार है। हमें वहीं से शुरुआत करना चाहिए।

मानवीय गुणों का संगम भारतीय संस्कृति :-

हमारी भारतीय सभ्यता और संस्कृति में मानवीय गुणों के अन्तर्गत प्रेम, त्याग, करूणा, समर्पण इत्यादि इन गुणों का बहुत अधिक महत्व है। श्रीरामचरितमानस के माध्यम से इन सभी गुणों को बहुत ही सुन्दर तरीके से प्रदर्शित किया गया है। एवं एकता, संगठन, शान्ति, त्याग इत्यादि का महत्व बताया गया है। "शान्ति सदैव निर्माण करती है और युद्ध सदा विद्वंस।" इस संदेश को आम जनता को समझाने का प्रयास किया गया है।

एकता अखण्डता, शान्ति और वैश्विक भाईचारे का संदेश :-

हमारी भारतीय संस्कृति में सर्वत्र सर्वे भवन्तु सुखिनः यानि इस पृथ्वी पर सभी लोग सुखी हो कि कामना की जाती है। यह हमारी संस्कृति की पहचान है, जिसमें कहीं भी जाति–पाति का भेदभाव, किसी अमीरी गरीबी का भेदभाव, लिंग का भेदभाव नहीं जाना जाता। अपितु हमारे यहाँ तो न केवल सूक्ष्म से सूक्ष्म जीव की रक्षा की बात कही गयी है। अपितु वनस्पति की, अन्तरिक्ष आदि की शान्ति की बात कही गयी है, जिसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है, हमारा शान्ति पाठ :–

ओम् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्ति,
पृथ्वी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।

वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्बह्म शान्तिः।
सर्व शान्तिः, शान्तिरेव शान्तिः, सा मा शान्तिरेधि।
ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।[3]

यह शान्ति पाठ पूरी पृथ्वा के लिए है, पूरी अन्तरिक्ष के लिए है, पूरी मानव जाति के लिए है। इस पृथ्वी पर जितने जीव है, उन सभी के लिए है। श्रीरामचरितमानस में भी यही कामना की गयी है कि एकता और अखण्डता के साथ यदि हम एक साथ एक मत में रहेंगें तो उन्नति को प्राप्त होंगें। यदि हम एक दूसरे का कहा नहीं मानेगें, अलग–विलग होकर रहेंगें तो हमारे ऊपर अनेक प्रकार की विपत्तियाँ आ जायेंगी। यथा :–

जहाँ सुमति तहाँ सम्मपत्ति नाना।
जहाँ कुमति तहाँ विपत्ति निदाना।।

उपसंहार :–

हिन्दू धर्म में रामचरितमानस का बहुत बड़ा धार्मिक महत्व है। यह भक्ति, नैतिक मूल्यों और नैतिक सिद्धान्तों को खूबसूरती से समेटे हुए हैं, जो धर्म की आधारशिला है। भगवान राम के दिव्य गुणों और धर्म के प्रति उनकी अटूट प्रतिबद्धता के चित्रण भक्तों के लिए एक आदर्श प्रस्तुत करता है। भारतीय संस्कृति में श्रीरामचरितमानस को अपार लोकप्रियता मिली है और इस पूरे भारत और विदेशों में व्यापक रूप में पढ़ा जाता है। इसकी लोकप्रियता का श्रेय इसकी सरलता, सूलभता और गहन आध्यात्मिक शिक्षाओं को दिया जा सकता है। भगवान राम की कहानी को मनमोहक तरीके से अभिव्यक्त करने में तुलसीदास जी की कुशलता ने इसे सभी उम्र और पृष्ठभूमि के लोगों के लिए एक प्रिय ग्रन्थ बना दिया है। रामचरितमानस का भारतीय साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ा है। इसने कवियों और लेखकों की आने वाली पीढ़ियों को रामायण के अपने स्वयं के रूपान्तरण और व्याख्याएँ बनाने के लिए प्रेरित किया है। रामचरितमानस में निहित नैतिक और आध्यात्मिक शिक्षाएँ भारतीय साहित्य में व्याप्त है, जिसनें विभिन्न साहित्यिक कृतियों में चित्रित मूल्यों और नैतिकता को सुन्दर आकार दिया है।

सन्दर्भ सूची :–

1. Sahitya Manthan, A Peer Reviewed, Open Access e-journal, ISSN : 2582-6867, Year-2, Issue- 4, Countinuous Issue-10, November-December 2021, Page No. 55
2. रामचरितमानस।
3. यजुर्वेद।

Email - sapanavishwakarma16@gmail.com
Email - dranjaliyadav55@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 108–110

राजनीतिक संचार पर सोशल मीडिया का प्रभाव

भंवराराम
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान (विद्या संभल योजना),
राजकीय महाविद्यालय फलसुंड जैसलमेर (राजस्थान)

प्रस्तावना :–

राजनीति और संचार सदैव से एक–दूसरे के पूरक रहे हैं। जहां संचार माध्यमों के द्वारा राजनेता अपनी विचारधारा, नीतियाँ, घोषणाएँ और दृष्टिकोण जनता तक पहुंचाते हैं, वहीं नागरिकों की प्रतिक्रियाएँ और अपेक्षाएँ भी इन्हीं माध्यमों से सामने आती हैं। सूचना और प्रौद्योगिकी के इस युग में सोशल मीडिया ने राजनीतिक संचार की दिशा और दशा दोनों को बदला है। अब संचार केवल एकतरफा माध्यम नहीं रहा, बल्कि संवादात्मक और त्वरित बन गया है। यह आलेख विशेष रूप से विश्लेषण करता है कि किस प्रकार सोशल मीडिया ने राजनीतिक संवाद को सशक्त, प्रभावी, परंतु जटिल भी बना दिया है। राजनीति में संवाद की भूमिका केंद्रीय होती है। लोकतंत्र में राजनीतिक संचार केवल नेताओं और जनता के बीच सूचना का आदान–प्रदान नहीं, बल्कि एक विचारधारा का विस्तार है।

वर्तमान डिजिटल युग में सोशल मीडिया एक शक्तिशाली संचार माध्यम बनकर उभरा है। यह शोध पत्र विश्लेषण करता है कि कैसे सोशल मीडिया ने राजनीतिक संचार की पारंपरिक अवधारणा को चुनौती दी है और उसमें परिवर्तन लाया है।

शोध की आवश्यकता एवं उद्देश्य –

आवश्यकता :– सोशल मीडिया का बढ़ता राजनीतिक उपयोग।

जनमत निर्माण में नई तकनीकों की भूमिका, राजनीतिक ध्रुवीकरण और फेक न्यूज की जटिलताएँ।

उद्देश्य :–

सोशल मीडिया के माध्यम से हो रहे राजनीतिक संचार का अध्ययन, इसके सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभावों का विश्लेषण तथा भारतीय लोकतंत्र में इसकी भूमिका का आकलन।

शोध विधि :–

प्रकार : वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक।

स्रोत : प्राथमिक (ऑनलाइन सर्वेक्षण, साक्षात्कार) एवं द्वितीयक (पुस्तकें, शोध लेख, रिपोर्ट्स)

उदाहरण : भारत में 2014, 2019 एवं 2024 के आम चुनावों के सोशल मीडिया अभियान।

सोशल मीडिया की अवधारणा :-

इंटरनेट आधारित मंच : फेसबुक, ट्विटर (X), इंस्टाग्राम, यूट्यूब, व्हाट्सएप।

उपयोगकर्ता केंद्रित : यूजर जनित सामग्री, रीयल टाइम इंटरैक्शन।

लोकतांत्रिक प्रकृति : सेंसरशिप मुक्त मंच, व्यापक पहुँच।

राजनीतिक संचार का स्वरूप :-

राजनीतिक संचार का अर्थ है – वह प्रक्रिया जिसके माध्यम से राजनेता, राजनीतिक दल एवं सरकारें अपनी विचारधारा, योजनाएं, घोषणाएं और दृष्टिकोण नागरिकों तक पहुंचाते हैं। पारंपरिक रूप से यह कार्य अखबारों, पत्रिकाओं, पोस्टरों, जनसभाओं, रेडियो और टेलीविजन के माध्यम से किया जाता था। यह प्रक्रिया अपेक्षाकृत धीमी, एकतरफा और सीमित वर्ग तक पहुँचने वाली होती थी।

- नीति और विचारों का प्रचार।
- जनभावना का आकलन।
- चुनावी रणनीति का अंग।
- सरकारी योजनाओं का संप्रेषण।

सोशल मीडिया की अवधारणा :-

सोशल मीडिया इंटरनेट आधारित प्लेटफॉर्म्स का समूह है, जो उपयोगकर्ताओं को आपसी संवाद, विचार–विमर्श और जानकारी साझा करने की सुविधा देता है। इसमें प्रमुख रूप से Facebook, X (पूर्व में Twitter), Instagram, WhatsApp, YouTube, Telegram आदि शामिल हैं। यह मंच पारंपरिक मीडिया से भिन्न है क्योंकि यहाँ संवाद द्विपक्षीय, रीयल–टाइम और वैश्विक स्तर पर होता है।

राजनीतिक संचार में सोशल मीडिया की भूमिका :-

1. **नेताओं की प्रत्यक्ष भागीदारी** – राजनीतिक नेता अब सोशल मीडिया का उपयोग स्वयं अपनी बात कहने के लिए करते हैं। वे सीधे जनता से जुड़ते हैं, जो पारंपरिक मीडिया में संभव नहीं था। उदाहरण स्वरूप, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, राहुल गांधी, अरविंद केजरीवाल जैसे नेता ट्विटर और यूट्यूब के माध्यम से अपनी बातों को करोड़ों लोगों तक तुरंत पहुंचाते हैं।
2. **चुनावी प्रचार में क्रांति** – अब चुनावों में सोशल मीडिया एक प्रमुख उपकरण बन चुका है। डिजिटल विज्ञापन, लाइव रैलियां, वीडियो संदेश, मेम्स और ट्रेंडिंग हैशटैग के माध्यम से चुनावी माहौल बनाया जाता है। डेटा एनालिटिक्स और टारगेटिंग टूल्स के माध्यम से मतदाताओं को वर्गीकृत कर प्रचार किया जाता है।
3. **जनमत निर्माण का सशक्त माध्यम** – फेसबुक पोस्ट, ट्विटर पोल, यूट्यूब वीडियो या इंस्टाग्राम स्टोरी – ये सभी आज जनभावना को अभिव्यक्त करने के साधन हैं। लोग राजनीतिक घटनाओं, नीतियों या वक्तव्यों पर तुरंत प्रतिक्रिया देते हैं, जिससे समाज में राय का निर्माण होता है।
4. **युवाओं की राजनीतिक भागीदारी में वृद्धि** – सोशल मीडिया ने युवाओं को राजनीति से जोड़ा है। पहले जहां युवा वर्ग राजनीति से दूर था, अब वह मुद्दों पर बहस करता है, जागरूक रहता है, और डिजिटल आंदोलनों में भाग लेता है। 'अन्ना आंदोलन', 'CAA विरोध', 'फार्मर प्रोटेस्ट' जैसी घटनाएं इसकी पुष्टि करती हैं।

नकारात्मक प्रभाव :–

1. **फेक न्यूज और प्रोपेगेंडा** – सोशल मीडिया पर असत्य एवं भ्रामक समाचारों का प्रसार बहुत तेजी से होता है। फर्जी खबरें चुनावों को प्रभावित करती हैं, सांप्रदायिक तनाव बढ़ाती हैं और राजनीतिक ध्रुवीकरण को बढ़ावा देती हैं।
2. **ट्रोलिंग और साइबर बुलिंग** – राजनीतिक विचार रखने पर अक्सर उपयोगकर्ताओं को ट्रोलिंग, गाली–गलौज और धमकियों का सामना करना पड़ता है, जिससे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर खतरा उत्पन्न होता है।
3. **डेटा का दुरूपयोग** – राजनीतिक पार्टियां और कंपनियां उपयोगकर्ताओं के डेटा का विश्लेषण कर उन्हें प्रभावित करने की रणनीतियाँ बनाती हैं। कांड इसका प्रसिद्ध उदाहरण है, जिसमें फेसबुक डेटा का दुरुपयोग हुआ था।

सोशल मीडिया के प्रभाव :–

1. **सकारात्मक प्रभाव** – नेताओं और नागरिकों के बीच सीधा संवाद, युवा मतदाताओं की भागीदारी में वृद्धि, सशक्त जनमत निर्माण तथा रचनात्मक विमर्श और बहस।
2. **नकारात्मक प्रभाव** – झूठी सूचनाओं का प्रचार (फेक न्यूज), ट्रोलिंग और नफरत फैलाने वाली भाषा, डेटा चोरी और चुनावी हेरफेर एवं विचारधारा आधारित ध्रुवीकरण।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में अध्ययन :–

2014 के लोकसभा चुनाव में भाजपा द्वारा सोशल मीडिया की सक्रिय रणनीति, कांग्रेस और क्षेत्रीय दलों का डिजिटल अभियान, "NaMo App", "Maygov", "Speak For India" जैसे प्लेटफॉर्म चुनाव आयोग द्वारा सोशल मीडिया पर निगरानी।

निष्कर्ष :–

सोशल मीडिया ने राजनीतिक संचार को तेज, सुलभ और व्यापक बना दिया है। यह लोकतंत्र के लिए एक अवसर है, लेकिन यदि इसके दुरुपयोग को नियंत्रित नहीं किया गया तो यह लोकतंत्र के लिए संकट भी बन सकता है।

सुझाव :–

डिजिटल साक्षरता का प्रचार, फेक न्यूज के विरुद्ध सख्त कानून, सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म की पारदर्शिता, चुनाव आयोग की सशक्त निगरानी, नैतिक आचार संहिता का पालन।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Ambedkar, B.R. Thoughts on Linguistic States.
2. McNair, Brian. An Introduction to Political Communication.
3. Rajagopal, Arvind. Politics After Television.
4. Election Commission of India Reports (2014–2024)
5. Pew Research Center Reports.
6. समाचार पत्र व ऑनलाइन पोर्टल्स : The Hindu, Indian Express, BBC Hindi आदि।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 111-114

संगीत कला पर वैश्वीकरण का प्रभाव

डॉ० रचना
सहायक प्रवक्ता, आदर्श महिला महाविद्यालय, भिवानी (हरियाणा) 127021

शोध आलेख सार :–

वैश्वीकरण का अर्थ विश्व समाज का निर्माण है। एक ऐसा समाज, जिसमें संसार को एक कर दिया जाए। देश–विदेश की परम्पराओं, सभ्यताओं, आर्थिक व सामाजिक रूपों को एक सूत्र में बांध दिया जाए, अर्थात पम्पराओं व संस्कृति के साथ–साथ प्रोधौगिकी, का अदान–प्रदान ही वैश्वीकरण है।

भारत वर्ष सदैव से ही अपनी संस्कृतियों व संगीत परम्परा के लिए विश्वविख्यात रहा है। वर्तमान युग वैश्वीकरण का युग है। जिसने अन्य क्षेत्रों के साथ–साथ भारतीय संगीत को प्रभवित किया। वैश्वीकरण द्वारा ही भारतीय संगीत का प्रचार–प्रसार विश्व स्तर पर हुआ जिस से संगीत कला में अनेक सकारात्मक परिवर्तन आए। स्वरलिपि पद्धति, भिन्न–भिन्न वाद्य यन्त्रों का प्रयोग के अतिरिक्त भारतीय एवं विदेशी संगीत के मिश्रण से बनी अनेक संगीत रचनाएं (फ्यूजन) भी वैश्वीकरण का ही उदाहरण है। अतः वैश्वीकरण का संगीत कला में महत्वपूर्ण योग्दान रहा।

मुख्य □ाब्द :– वैश्वीकरण, संगीत कला।

वैश्वीकरण का अर्थ :–

वैश्वीकरण से आशय विश्व की विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं के एकीकरण से है। वैश्वीकरण शब्द का अर्थ है विश्व समाज का निर्माण। एक ऐसा समाज, जिसमें संसार के विभिन्न लोगों, प्रदेशों और देशों के बीच बढ़ती परस्पर, निर्भरता को तकनीकों और प्रौद्योगिकी के माध्यम से, सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक रूप से एक कर दिया जाए। सरल शब्दों में जब देश–विदेश के बाजार एक साथ मिलकर काम करते है तब उस स्थिति को वैश्वीकरण कहते है।

वैश्वीकरण के अन्तर्गत सभी आर्थिक बाधाओं को हटा दिया जाता है, जिससे कि बाजार शक्तियाँ स्वतन्त्र रूप से अपनी सक्रिय भूमिका अदा कर सके। आज के समय में अनेक माध्यमों द्वारा हम अपने देश में रहते हुए भी अन्य देशों से तकनीकि, सांस्कृतिक व शैक्षणिक सुविधाओं का लाभ उठा सकते है, यही वैश्वीकरण है। जैसे कम्पूटर सेवा, चिकित्सा सम्बंधी परामर्श, विज्ञान की खोज सम्बंधित जानकारी, संगीतज्ञ ज्ञान, पुस्तके पढ़ना इन सब के अतिरिक्त अनेक उदाहरण है। जिसका प्रयोग वैश्वीकरण द्वारा ही हम सुगमता से कर सकते है।

शिक्षण कार्य वैश्वीकरण का एक बेहतरीन उदाहरण है। वैश्वीकरण द्वारा ही बड़ी सरलता से घर बैठे देश–विदेश के किसी भी शहर में संचालित संस्था या कोचिंग का लाभ उठा सकते है। विश्व के किसी भी लेखक

की किताब पढ़ सकते है, व ऑनलाइन कक्षाओं का लाभ ले सकते है इसके अतिरिक्त देश–विदेश का संगीत सिख सकते है। एवं विभिन्न वाद्य यन्त्रों को भी वादन भर सिख सकते है।

संगीत कला :–

संगीत शब्द की व्यत्पत्ति 'सम' उपसर्ग में 'गै' से 'कत' प्रत्यय के योग से हुई है। जिसकर अर्थ है– मधुर ध्वनियों या स्वरों का कुछ विशिष्ट लय में होने वाला प्रस्फुटन। इसके अतिरिक्त संगीत शब्द की व्युत्पति 'गीत' धातु मे 'सम' उपसर्ग लगाकर हुई ऐसा भी माना जाता है। 'सम' यानी 'सहित' या 'अच्छी' तरह 'गीत' का अर्थ है 'गायन' अर्थात अच्छी प्रकार का गान संगीत है।

मानक हिन्दी कोष में भी संगीत शब्द की उत्पति सं+सम, गै+गान+क्त धातुओं के संयोग द्वारा स्वीकर की गई है। संगीत के विषय में विद्वानों का कथन है संगीत वह आलौकिक ध्वनि है जो सुनने मात्र से मनुष्य ह्रदय को रंजकता से भर कर आंनद की अनुभूति करा दे। वास्तव में संगीत न तो देखने के लिए है व न ही समझने के लिए यह केवल अनुभूति है, जिसे महसूस किया जाता है। जिस प्रकार एक बालक जिसे किसी भी विषय का ज्ञान नहीं, वह भी गीत सुनकर रोना छोड़कर हर्षित हो जाता है व मुस्कुराने लगता है। संगीत सृष्टि द्वारा मनुष्य को प्राप्त सबसे खुबसूरत वरदान है। संगीत कला द्वारा ही मनुष्य अपनी ह्रदय के सूक्षम भावों को भी सुगमता से प्रकट कर सकता है। संगीत मनोहर कला है। संगीत के विषय में यह भी कहा गया है 'संगीत कं न मोह्येत' अर्थात संगीत किसको मोहित नही करता।

भारतीय विद्वानों ने कला की परिभाषा में लिखा है – कला ही है, जिसमें मानव मन की संवेदनाएँ उभारने, प्रवृतियों को ढ़ालने तथा चिंतन को मोड़ने, अभिरूचि को दिशा देने की अदभुत क्षमता है। मनोंरजन, सौन्दर्य, प्रवाह, उल्लास न जाने कितने तत्वों से या भरपूर है, जिसमें मानवीयता को सम्मोहित करने की शक्ति है।

भारतीय विद्वानों ने 64 (चौसठ) कलाएं मानी है, जिनमें महर्षि व्यास, वात्स्यायन, शुक्रनीति आदि प्रमुख है। इन 64 कलाओं में 5 ललित कलाएं है, जो इस प्रकार हैं। संगीत कला, चित्रकला, वास्तुकला, शिल्पकला एवं काव्यकला। सभी ललित कलाओं में संगीत कला को प्रमुख माना गया है। माना जाता है, श्रृष्टि पर मनुष्य की उत्पति के साथ ही संगीत का भी जन्म हुआ होगा व मानव के विकास क्रम के साथ–साथ संगीत का भी विकास हुआ होगा। संगीत भावों का आवेग है जो स्थान, क्षेत्र भाषा से परे ह्रदय की अनुभूति है।

वैश्वीकरण और संगीत कला :–

भारत वर्ष में सदा से ही 'वसुधैव कुटुम्बकम्' (समस्त पृथ्वी एक परिवार है) की धारणा रही है। इसी धारणा को वैश्वीकरण द्वारा और भी पोषित किया गया। वैश्वीकरण द्वारा देश–विदेश की कला संस्कृति, अर्थव्यवस्था, शैक्षिक व्यवस्था का आदान–प्रदान हुआ है।

भारतीय संगीत पर भी वैश्वीकरण का सकारात्मक प्रभाव देखने को मिलता है। वैश्वीकरण द्वारा ही भारतीय संगीत का प्रचार–प्रसार विश्व स्तर पर व्यापक रूप में हुआ। भारतीय रागदारी संगीत में सौन्दर्य व भावनुभूति की अनेक संभावनाए है जो अन्य देशों के संगीत में कम दिखाई देती है। संभवत यही कारण है कि प्रारम्भ से ही भारतीय संगीत को सीखनें और समझने के लिए विभिन्न देशों से विधार्थी आते रहे है व हमारे संगीतज्ञ भी अन्य देशों में भारतीय संगीत का मंच प्रदर्शन करते रहे व संगीत शिक्षण के अपना योगदान देते रहे है। आधुनिक काल में संचार माध्यमों द्वारा संगीत के आदान–प्रदान की यह प्रक्रिया अत्यन्त सरल व वेगवती हो

गयी है।

संगीत शिक्षा के क्षेत्र में संगीत रचनाओं को सुरक्षित रखने व सामूहिक शिक्षण के लिए स्वरलिपि का विकास पाश्चात्य संगीत के प्रभाव से ही हुआ। भारतीय संगीत को गुरूमुखी विद्या माना जाता था इसलिए स्वरलिपि विकास की और अधिक ध्यान नहीं दिया गया। आधुनिक काल में पं. विष्णु नारायण भातखण्डे एवं विष्णु दिंगम्बर प्लुस्कर जी ने पाश्चात्य स्वरलिपि पद्धति से प्रेरणा पाकर ही नयी स्वरलिपि पद्धति का निर्माण किया। भारतीय संगीत के आधुनिक ग्रन्थकारों में से कई ने तो पाश्चात्य (स्टाफ नोटेशन) स्वरलिपि पद्धति को ही अपनाया है। चित्रपट संगीत में स्टाफ नोटेशन का ही प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त आधुनिक काल में पाश्चात्य प्रभाव से ही संगीत के अध्ययन क्षेत्र का विस्तार हुआ है।

वैश्वीकरण और संगीत कला के कुछ उदाहरण इण्टरनेट पर उपलब्ध संगीत संबंधी बेवसाइट भी है।

1. www.chandrakantha.com : इस साइट पर तबले से सम्बधित विभिन्न पुस्तके शोध लेख तथा उत्तर भारतीय ताल पद्धति का विस्तृत वर्णन है।
2. Hindustani Classical Music : इस साइट में हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की सैद्धान्तिक जानकारी तथा विभिन्न बंदिशों का संकलन है।
3. www.artindia.net : इस साइट पर अनेक विख्यात संगीतज्ञों एवं नर्तकों के विषय में जानकारी एवं उनकी रिकार्डिंग उपलब्ध है।
4. www.ipcsra.org : इस साइट में उत्तर भारतीय संगीत के घरानों की चर्चा के साथ संगीत की उत्पत्ति की भी जानकारी उपलब्ध है।
5. www.sarod.com : इस साइट में उ० अमजद अली खाँ द्वारा किये गये सांगीतिक कार्यो का ब्योरा दिया गया है।
6. www.wikipedia.org : इस साइट में तबले का परिचय, उसका इतिहास व अनेक संगीत संबधित पुस्तकों का विस्तृत विवरण है।

उपर्युक्त बेबसाटों के अतिरिक्त इण्टरनेट पर संगीत सम्बधित अनेक जानकारी जैसे–संगीत पुस्तकों की सूची, संगीत सम्मेलन, संगीत गोष्ठी, संगीत विद्यालय–विश्वविद्यालय, संगीत के कलाकार आदि की सूची भी उपलब्ध है।

कुछ समय पहले तक संगीत को हाबी एवं पार्टटाइम के रूप में अपनाया जाता था, किन्तु वैश्वीकरण द्वारा मनोरंजन की दुनियां में आयी क्रान्ति के कारण संगीत के क्षेत्र में युवाओं का रूझान बढ़ा है। खास बात यह है कि ग्लोवल म्युजिक इडस्ट्री आज वैश्विक स्तर पर सबसे तेजी से विकास कर रहे क्षेत्रों में से एक है। आधुनिक समय में विभिन्न एंटरटेनमेंट चैन्लस द्वारा आयोजित म्यूजिक टैलेन्ट शोज के चलते संगीत के प्रति लोगों का आकर्षण बढ़ा है। जिससे संगीत की दुनियां को नया आयाम मिला है।

निष्कर्ष:-

बदलाव व जुड़ाव प्रकृति का नियम है। उसी का एक उतम उदहारण वैश्वीकरण और भारतीय संगीत द्वारा देखने को मिलता है। भारतीय शास्त्रीय संगीत में निहित भावों एवं परम्पराओं का सरक्षण करना हमारा कर्तव्य है। वैश्वीकरण का प्रयोग करते हुए भारतीय संगीत ने अन्य देशों में अपना विशेष स्थान स्थापित किया है। इसके

अतिरिक्त भारतीय विद्वानों ने भी भारतीय संगीत के अतिरिक्त पाश्चात्य संगीत का ज्ञान सुगमता से अर्जित कर अनेक फ्युजन व रैप जैसे विधाओं का लोकप्रिय मिश्रण उत्पन्न किया है। वास्तव में संगीत कला का वैश्वीकरण होने पर संगीत कला आमजन के लिए सुगम व और भी मनोंरजक हो गई है। अतः वैश्वीकरण का संगीत कला में प्रमुख योगदान रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कंचन सिंह, वैश्वीकरण और भारतीय संगीत, (Artical)
2. पं. दामोर मिश्र, संगीत दर्पण, हिन्दी भाषा टीका सहित, संगीत कार्यालय हाथरस (उ० प्र०) प्रथम संस्करण 1962
3. डॉ. रमाकान्त दिवेदी, संगीत स्वरित, साहित्य रत्नालय, कानपुर 208001, प्रथम संस्कृरण 2004
4. मधुबाला सक्सेना, भारतीय संगीत शिक्षण प्रणाली एवं उसका वर्तमान स्तर, हरियाणा साहित्य अकादमी चंडीगढ़, प्रथम संस्करण, 1990
5. डॉ. हुकुमचन्द, आधुनिक काल में शास्त्रीय संगीत, ईस्टर्नवुक लिंकर्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1998,
6. डॉ. अनिता रानी, ग्लोबलाइजेशन और भारतीय संगीत कला (Artical)
7. डॉ. कु. आकांक्षी, भारतीय संगीत और वैश्वीकरण, कनिष्का पब्लिकेशन (नई दिल्ली), प्रथम संस्करण, 2011

Email:- rachanakaushik50@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 115–120

जयाजादवानी के कथासाहित्य में दमन

देवीप्रिया ओ
शोधार्थी, एस. एन कॉलेज कोल्लम, केरल विश्वविद्यालय।

प्रस्तावना :–

जयाजादवानी समकालीन हिंदी साहित्य के प्रमुख रचना कारों में से एक हैं। जिनकी कहानियां मानवीय संवेदनाओं सामाजिक यतार्थ और मानसिक जटिलताओं को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती है। इस अध्ययन का उद्देश्य उनके कथासाहित्य में उपस्थित पात्रों के मानसिक संघर्षों, चेतना की परतों और आंतरिक द्वंद का विश्लेषण करना है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं उद्देश्य :–

जयाजादवानी कथासाहित्य केवल सामाजिक यथार्थ के झलक मात्र नहीं बल्कि पात्रों की मनः स्थितियाँ गहराई से चित्रित होती है। इस शोध का मुख्य उद्देश्य उनके साहित्य में मनोवैज्ञानिक पहलुओं की पहचान करना और यह समझना है कि किस प्रकार लेखक मानवमन की अंतर्द्वंद्व, अवचेतन भवनाओं और मानसिक परिवर्तन को चित्रित करता हैं। जायाजादवानी के कथासाहित्य में नारी के मानसिक संसार को समझना। साहित्य और मनोविज्ञान के अंतर संबंध को उजागर करना। सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश में मानसिक असंतुलन, अकेलापन द्वंद्व अवसाद आदि के प्रस्तुति करण का विश्लेषण।

शोध की सीमाएं :–

यह अध्ययन मुख्यतः जयाजादवानी की चुनी हुई कहानियां और उपन्यासों पर आधारित हैं। कविता तथा अन्य विधाओं का समावेश नहीं किया जायेगा।

शोधविधि।
साहित्य विश्लेषण।
मनोविश्लेषण आलोचना पद्धति।
पाठ विश्लेषण।
प्रत्याशित निष्कर्ष।

शोध के माध्यम से यह स्पष्ट होगा कि जयाजादवानी के कथासाहित्य न केवल साहित्य दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, बल्किउ नमें मनोवैज्ञानिक गहराई भी है। आपकी पात्रों की मानसिक स्थिति का सूक्ष्म चित्रण पाठकों को आत्म चिंतन केलिए प्रेरित करता है।

जयाजादवानी के कथा साहित्य में दमन :-

(2.1) जयाजादवानी के कथा साहित्य में दमन

(2.1.1) जीवन मे अकेलापन।

(2.1.2) पुरुषों के दबाव।

(2.1.3) आर्थिक विषमता।

(2.1.4) लाचारी एवं तिरस्कृत।

(2.1.5) पारिवारिक बंधन।

(2) जयाजादवानी के कथा साहित्य में दमन :-

(2:1) फ्रायड के सिद्धान्तों में आधुनिक साहित्य को सबसे अधिक प्रभावित किया है। फ्रायड के विचार के अनुसार ''व्यक्तित्व मनुष्य के सामाजिक दवाब और संबंधों का परिणाम हैं। फ्रायड के विचार में जीवन का मुलाधार लिबिडों या कामशक्ति है। जो केवल स्त्री पुरुष का आपसी आर्कषण मात्र नहीं। अपितु फ्रायड इसका प्रयोग विसृत अर्थ में किया है। प्रायः मन दमन मनोवि लेषण की एक प्रमुख अवधारणा है। जहां इसे रक्षा तंत्र के रूप में समझा जाता है जो सुनिश्चित करता है कि जो चेतन मन के लिए अस्वीकार्य है, अगर याद किया तो चिंता पैदा किया, करेगा। उसे इसमें प्रवेश करने से रोका जाता है''।

मनोविश्लेषणत्मक सिद्धांत के अनुसार दमन कई प्रकार के मानिसिक बीमारियों में और औसन व्यक्ति के मन में एक प्रमुख भूमिका निभाती है।

अमरिकी मनोवैज्ञानिकों ने 1930 के आसपास प्रयोगात्मक प्रयोगशाला में दमन की अध्ययन करने का प्रयास शुरु किया। हालांकि मनोविशलेषण पहले प्रयोग किया। मनोवैज्ञानिक रूप से दमन तनाव चिंता और अवसाद की भावनाओं को जन्म दे सकता है। हलाँकी दमन कठिन भावनाओं को शांत करने में प्रभावी हो सकता है। लेकिन यह आगे चलकर अधिक चिंता का कारण बन सकता है। दमन मानवीय व्यवहार एवं मानवीय प्रवृति का एक ऐसा पहलु है। जिसका सामना करने से मानव सदैव ही डरता रहता है। अथवा पहेज करता है। यह मानव मन की इच्छाओं, बातो, विचारों एवं घटनाओं का समूह होता है जो कही नं कही व्यक्ति की मानसिकता को नकारात्मक तरीके से प्रभावित करता है। इस प्रकार मन में बैचेन भावनाएं उत्पन्न होते हैं। इससे बचने के लिए व्यक्ति ऐसी सारी घटनाओं बातें, विचारो एवं घटनाओं को अपने मन के अचेतन भाग से दबाकर रख देता है जिससे कि यह उसके चेतनावस्था में न आ सके। इसी प्रक्रिया को दमन कहते है। दमन के संबंध में पद्मा अग्रवाल अपनी किताब मनोवि लेषण और मानसिक क्रियाएँ में कही है।

''अब प्रश्न यह खड़ा होता है कि हमारे मन की इच्छाएँ अपने वास्तविक रूप में क्यों नहीं प्रकट होती? इस पर मनोविज्ञान के अपने–अपने वास्तविकता के रूप में क्यों नहीं प्रकट होती? इस पर पश्चिमी वैज्ञानिकों के अपने–अपने विचार है। फ्रायड के अनुसार इसका प्रमुख कारण है कि इसकी अभिव्यक्ति सामाजिक नियमों के अनुकुल नहीं है। सामाजिक प्रतिबंधों के कारण हुए अपनी प्रकृत वासनाओं की इच्छानुसार पूर्ति नहीं कर पाते। इसलिए उनका दमन, किया जाना है। पर दमन द्वारा किसी मुल प्रव्रति का भाग नहीं होना, केवल ज्ञात मन से बहिष्कृत होकर अज्ञात मन में चली जाती है। वे बहिकृत इच्छाचें अन्य रूप में प्रकट होती क्योंकि शांत मन इन इच्छाओं को अपने प्रकृति रूप में प्रकट होने में बाधा डालता है।

जयाजादवानी अपनी कथा साहित्य में दमन के शिकार स्त्री पुरुषों के कई प्रकार की मानसिक स्थिति का वर्णन बहुत ही सरल भाषा में अभिव्यकि किया। कथा साहित्य पठने वाले हर एक पाठक के मन में उन पात्रों की चरित्र अपने बीच में से एक या पड़ोसी लोगों के जीवन सा लगती है। उसकी प्रमुख कारण पात्र सृश्टि में लायी स्वाभाविकता ही है। आपने अपने स्त्री पात्रों के जरिये भारतीय संस्कृति के रुठीग्रस्त परंपरा में फंसे हुए औरतों के लिए जीने वाले औरतो के अत्यंत हृदयहारी चित्रण सफलतापूर्वक करने की कोशिश किया। आपकी पात्रों की मानसिक स्थिति केवल काल्पनिक नहीं बल्कि हमारे समाज में जाने–अनजाने जीवन बिताने वाले हर एक स्त्री और–पुरुष को हमें देखने को मिलती है। आप स्त्री होते हुए स्त्री मन की दशा का मात्र अंकन नहीं किया बल्कि पुरुष मन की मानसिक नियति का भी वर्णन हमें देखने को मिलते है।

जायजी को स्त्री पर लिखने वाली लेखिकाओं के श्रेणी में सीमित रखने के सिवा मानव मन की संवेदनाओं को पहुंचाने वाली मनोवैज्ञानिक लेखिकाओं के कोटी में रखना ज्यादा उचित मानती है। कारण आप अपनी पात्रों की सृष्टि केवल काल्पनिक धरातल पर नहीं बल्कि उनकी मन की गहराइयों में जाकर जिस तरह सागर से सीपी ढूंढ निकालने की कोशिका की है। उस प्रकार के पात्रों के जरिए मानव मन की गहराईयों से उनके संवेदनाओं कों पहचानने के साथ आय दमन और कुंठा से भरे मन को समस्या समाधान का राह भी बताती है। पात्रों के मानसिकता औरों का नही अपनों में से एक समझकर हल करने का प्रयास आवळ किया अब तक मनोवैज्ञानिक धरातल पर लिखे कई कथा साहित्य हिंदी साहित्य में भरपुर मात्रा में उपलब्ध हैं। उनमें से बिल्कुल भिन्न मानसिक द ा का आंकन बिल्कुल सैंद्धांतिक तरीके से आपने अपनी रचनाओ में अंकित किया है। मनोविज्ञान विषय पर जो अधिकार आपको है शायद यही उसका कारण होगा। कल्पना केवल पात्रों के नाम और गठन में किया होगा बाकी सब आप यर्थाथ की घटनाओं को केंद्र मे रखकर ही किया इस लिए आपकी मनोवैज्ञान विषय पर जो अभिरुची रखती है उसकी मद लिया होगा।

मनोवैज्ञान दमन के कई कारक मानते है। उनमें प्रमुख है, जीवक में अकेलापन, पुरुष के दवाब, आर्थिक विषमता, लचारी एवं तिरस्कृत पारिवारिक बंधन इन सभी तत्वों से मन में दमन की भाव पुष्ठ होता है। अपने पात्रो के सामाजिक एवं चरित्रगत विशेषताओं से हमें इस बात का पहचान भी मिलता है।

दमन के कारक :–

दमन मानवीय व्यवहार एवं मानवीय प्रवृत्ति का एक ऐसा पहलू है। जिसके सामना करने से मानव सदैव ही डरता रहता है अथवा परहेज करता है। यह मानव मन की इच्छाओं, बातों, विचारों एवं घटनाओं का समूह होता है जो कहीं न कहीं व्यक्ति किन मानसिकता को नकारात्मक तरीके से प्रभावित करता हैं जिस प्रकार मन में बेचैन भावनाएं उत्पन्न होते है। इससे बचाव के लिए व्यक्ति ऐसी सारी घटनाएं विचारों को दबा कर रख देता है जिससे कि यह उसकी चेतना वस्था में न आ सके। इसी प्रक्रिया को दमन कहते है।

दमन के कई कारक होते है इसमें एक है अकेलापन। अकेलापन एक ऐसी मानसिक दशा है लोग अपने जीवन में खालीपन और एकांतता का अनुभव करते हैं। अकेलापन की दशा में व्यक्ति को अजीब ख्याल आते हैं। किसी के द्वारा मन को ठेस पहुंचाना या दिल तोड़ना किसी भी तरह खुशी न मानना आदि। अकेलापन महसूस करने वाला व्यक्ति अपनी जिंदगी सादगी से जीती और कभी कभी अवसाद या डिप्रेशन तक भी चले जात हैं। साहित्य में अकेलापन शब्द का प्रयोग का पहला प्रयास शेक्सपीयर कि लोंसेस में मिलता है। अकेलापन कई

कारणों से होता है बचपन या मैत्री संबंधों का अभाव या व्यक्ति के आसपास सार्थक लोगों की शारीरिक अनुपस्थिति आदि अकेलापन और अवसाद का कारण होता है जीवन में किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति को खोने से आमतौर पर प्रक्रिया दुखद होगी। इस स्थिति में व्यक्ति अकेला महसूस कर सकता है। अकेलापन का कारण विवाह या उसी प्रकार संबंधों में उत्पन्न हो सकती है जिनमें क्रोध आक्रोश की भावनाएं शामिल हो सकती या जिनमें प्यार दिया या लिया जा सकता है। अकेलापन की मुख्य स्थिति कई प्रकार है जिसमें प्रमुख है स्थिति जन्य या परिस्थिति जन्य रिश्तों का अंत, विकासात्मक व्यक्ति वाद आवश्यकता द्वारा संतुलित अतरंग की जरूरत है। आत्मसम्मानाप कमी, शहरी करण का प्रभाव इसका कुछ कारण है अकेलापन एक प्रकार की पागलपन की स्थिति है जिसमें मनुष्य दुनिया को अलग ढंग से देखते है। दूसरे से अलग महसूस करता है, जिसे स्वयं निर्वासन में कहा जाता है। भागदौड़ भरी जिंदगी में आदमी यहां अकेलेपन का शिकार हो रहा है। जायाजादवानी अपनी उपन्यास में इस विषय को ज्यादा जोर दिया आपकी रचनाओं में स्त्रीवादी स्वर मुखरित है। आपकी रचनाओं में समय के अभाव से प्रभावित स्त्री पुरुष संबंधों पर प्रकाश डाला हुआ है। आपकी बहुचर्चित उपन्यास तत्वमसी नगरीय जीवन से प्रभावित स्त्री पुरुष संबंधों पर आधारित है। यह उपन्यास मानसी, विक्रम, सिद्धार्थ के त्रिकोण प्रेम पर आधारित है। विवाह के बाद मानसी विक्रम के साथ महानगर में आकर बस जाती वह अपनी पति की व्यस्त जिंदगी के कारण मानसी अकेलापन महसूस करती है। इस प्रकार अपनी पति की अनुपस्थिति या प्रियजन का अभाव अकेलापन का कारण बन जाती है। मानसी अपनी पति के कारण अकेलापन महसूस किया तो सिद्धार्थ का अकेलापन का कारण उनकी पत्नी है। इस प्रकार महानगरिया सभ्यता का व्यस्त जिंदगी जीवन को किस मोड़ तक ले जता है। इसका चित्रण आपकी रचनाओं के विशेषता है। एक तरफ अकेलापन की दुखद परिस्थिति का चित्रण है तो दूसरी तरफ अकेलापन स्वतंत्रता के लिए अनिवार्य माना जाता है। मीठो पानी खारों पानी नामक उपन्यास नायिका रूमी इस बात का दृष्टांत है।

पीढ़ी दर पीढ़ी में अपने परिवार के स्त्रियां सहते हुए जीवन को देखकर स्वतंत्रता की कामना करते है। अंदर के पानियों में कोई सपना कांपता हैं नामक कहानी संयुक्त परिवार की कहानी है। पलाश के फूल नामक नायिका अपूर्वा अपनी जिंदगी की तुलना पलाश की फूल से की यह। फूल साल में एक बार फूलते हैं उसी प्रकार अपनी विरह भरा जिंदगी की तुलना पलाश के फूल से कीस समय बेहिसाब था मगर नामक कहानी के माध्यम से वृद्ध लोगों के अकेलापन के वर्णन किया। आज की समाज में वृद्ध अकेला अपनी जीवन जी रही है। शहरीकरण इसका मुख्य कारणों में से एक है। निष्कर्ष यह है अकेलापन या एकान्तता मानवमन को बहुत गहरी चोट पहुंचने कारक है। अपने आप से प्यार करना चाहिए और मेडिटेशन, योग भी इन सभी से मुक्ति से कारक है, अस्मिता का पहचान भी एक मार्ग ही।

दमन के अगला कारण पुरुषों के दवाब है। जब मनुष्य एक दूसरे को मनमानी करता है तो वह व्यक्ति दवाब के कारण निःसहाय महसूस करता है। वह चाहकर भी प्रतिशोध नहीं करता और अपनी भावनाओं को दबाकर जिंदगी जीना पड़ता। पुरुष के तिरस्कृत व्यवहार के कारण अपनी इच्छाओं और भावनाओं को अंदर दमन कर सकता जायजी अपनी कथा साहित्य में दमित स्त्री मानस का अत्यंत ह्रदय हारी वर्णन किया वह पुरुष सतात्मक व्यस्था पर अपनी आत्मा रोष प्रकट किया है। जायजी द्वारा 2000 में लिखित बहुचर्चित उपन्यास है तत्वमसी इसमें पुरुष के दो पीढ़ी द्वारा स्त्री पर किए दवाब का सूक्ष्म चित्रण इसमें वर्णित है, मानसी नामक पात्र

के जरिए स्त्री मन की दवाब को पाठकों के सामने रेखांकित किया। पुरुष द्वारा स्त्री प्रगति कौन रोकने का मुख्य कारण बन जाता है। पिता हो, पति हो तब भाई सारे किसी न किसी प्रकार स्त्री को अपनी विकास में बाधा पहुंच जातीं। दवाब का कारण शारीरिक रुप से मात्र नहीं मानसिक रूप से भी होता है। स्त्री द्वारा लैंगिक भेदभाव का शिकार भी बनता है आपकी नायिका इसका उदाहरण है। मेरी तस्वीर आदि रह गई नामक कहानी में भी यह बात देखने को मिलता है। फिर फिर लौटेगा नामक कहानी की नायिका मनु को अपनी छोटी उम्र में शादी में तिरस्कृत होना पड़ा फलस्वरूप विवाद उत्पन्न होने लगा। गर्भावस्था में भी स्त्री पुरुष द्वारा दवाब की भावना महसूस करती है। इसलिए तरह जायजी अपनी रचनाओं में किसी न किसी तरह पुरुष द्वारा दवाब के शिकार स्त्री को अंकित किया है। पुरूष द्वारा स्त्री पर होने वाला दवाब अपनी घर से लेकर ससुराल तक स्वंमित है इन प्रस्तुतियों से गुजरकर वह दमन की भाव महसूस करते हैं।

आर्थिक विषमता दमन का अगला मुख्य कारण है। जायजी की कहना है कि आर्थिक विषमता व्यक्ति को मानसिक और शारीरिक दोनों रूप से प्रभावित करता है। आपके अनुसार स्त्री मुक्ति जब संभव है तब स्त्री आर्थिक रूप से पूर्णतः स्वतंत्र हों। ऐसी स्थिति में स्त्री को आत्म सम्मान की भावना महसूस होता है। जायसी के स्त्री पात्रों मिकामका जी स्त्री से लेकर अपनी खर्चा उड़ाने के लिए छोटे–मोटे काम करने वाले स्त्री तक शामिल है। जब पेड़ों से पत्ते गिरते नमक कहानी में स्त्री होने के नाते इलाज के लिए खर्चा न करने वाला दूषित पुरुष समाज का चित्रण किया अपनी पूरी जिंदगी परिवार वालों के लिए जीने के बाद आखिरी पल आर्थिक अभाव का शिकार बनकर हताशा से जाना पड़ा। ऐसी एक औरत की कहानी है। लाचारी एवं तिरस्कार की भावना भी दमन के कारक बताते ही जायसी उसके लिए अपनी पत्रों की सृंष्टि की और पाठकों के सामने प्रस्तुत की। पारिवारिक बंधन भी दमन के कारण बताया।

संक्षेप में कहे तो पिछले तीन दशकों से हिंदी साहित्य क्षेत्र उपरचनात्मक जयजादवानी जी हिंदी साहित्य जगत में मनोविज्ञान का एक नया द्वार खुला उसमें से होकर वह मानव मन की गहराइयों में जाकर समाज में होते आ रहे समस्याओं का कारण बताते हुए उसे विश्लेषण करके सुझाव ढूंढने के लिए प्रेरित किया। अस्त–व्यस्त जिंदगी में मनुष्य अपने लिए वक्त देते हुए आत्मनिर्भर होकर जीने का आहवान अपनी सृजन की खासियत है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डेविस हर एक रसेल (2004) ग्रगरी रिचार्ड एंड द ऑक्सफोर्ड कोंपनियन टु द माइंड, दूसरा संस्करण संस्करण ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 803ISNBN.979.0.1.8662242
2. Though I go alone like a lonely dragon, भाग चतृर्थ दृश्य 1 Corriolanus P129 Google book ISBIN.9780559437052

ग्रन्थ सूची :–

1. मीठो पानी खरो पानी – समाजवादी, पृ. 185
2. कुछ न कुछ छुट जाता है – जयाजादवानी, पृ0 सं0 85
3. कयामत का दिन उर्फ कब्र से बाहर, जयाजादवानी, पृ0 7
4. 'मुक्ति' जयाजादवानी, पृ. 34

5. बाजार – जयाजादवानी, पृः 88
6. फिर–फिर लौटेगी – जयाजादवानी, पृः 104
7. जो नही है – वह जयाजादवानी', पृः 162
8. अनकहा आख्यान – जयाजादवानी, पृः 161
9. अब उढुँगी राख़ से – जयाजादवानी, पृः 150
10. समय बेहिसाब था मगर – जयाजादवानी, पृः 33
11. अब उढुँगी राख से – जयाजादवानी पृः 161
12. ये रात कितनी लंबी है – जयाजादवानी, पृः 194

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 121-124

419वें शहादत दिवस (30 मई सन 2025 ई.) पर विशेष

शहीदों के सरताज : श्री गुरू अर्जुन देव साहिब जी की जीवन–गाथा

(तेरा कीआ मीठा लागै। हरि नामु पदारथु नानकु माँगै।।)

डॉ. रणजीत सिंह 'अर्श'
पुणे।

भूमिका :–

'श्री गुरु नानक देव साहिब जी' की ज्योति, सिख धर्म में शहादत की परंपरा की नींव रखने वाले प्रथम शहीद, शहीदों के सरताज, महान शांति के पुंज, गुरबाणी के बोहिथा (ज्ञाता/सागर), सिख धर्म के पांचवें गुरु 'श्री गुरु अर्जुन देव साहिब जी' एक महान कवि, लेखक, देशभक्त, समाज सुधारक, लोकनायक, परोपकारी और ब्रह्मज्ञानी ऐसी अनेक प्रतिभा से संपन्न गुरु हुए हैं। आप का जीवन शक्ति, शील, सहजता, पराक्रम और ज्ञान का मनोहारी चित्रण था, सिख धर्म में गुरु जी के इस कार्यकाल को गुरमत का मध्यान्ह माना जाता है। आपने शहादत का जाम पीते समय अपने शीश पर डाली गई गर्म रेत की तपस को सहजता से सहन किया, उबलती हुई देग (उबलते हुए पानी का बड़ा बर्तन) में उन्हें बैठाया गया और तो और तपते हुए तवे पर आपने बैठकर, उस अकाल पुरख के भाणे को मीठा मानकर, स्वयं शहादत प्राप्त कर ली परंतु अपने धर्म के उसूलों पर आंच तक नहीं आने दी थी। 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' की वाणी में अंकित है :–

तेरा कीआ मीठा लागै। हरि नामु पदारथु नानकु माँगै।। (अंग क्रमांक 394)

अर्थात्, हे प्रभु–परमेश्वर तेरे द्वारा किया हुआ प्रत्येक कार्य मुझे मीठा लगता है। है नानक! तुझसे तेरा यह भक्त हरिनाम रूपी पदार्थ की दात मांगता है।

जीवन परिचय :–

श्री गुरु अर्जुन देव जी का प्रकाश 15 अप्रैल सन् 1563 ई. को गोइंदवाल साहिब में माता भानी जी के पवित्र गर्भ से हुआ। आप 'श्री गुरु रामदास साहिब जी' के सुपुत्र एवं 'श्री गुरु अमरदास साहिब जी' के नाती थे। 'श्री गुरु अमरदास साहिब जी' ने आपको 'दोहिता बाणी का बोहिथा' अर्थात बाणी का ज्ञाता, कहकर आशीर्वाद प्रदान किया था। बाल्यावस्था में ही आप में आध्यात्मिक सौंदर्य, विनम्रता और सेवा भावना परिलक्षित होने लगी थी। 11 वर्ष की आयु तक आपने गोइंदवाल साहिब में निवास किया, तत्पश्चात श्री अमृतसर साहिब (गुरु का चक) आ गए, जहाँ आगे चलकर 'गुरु के महल' में आपका निवास रहा।

पारिवारिक जीवन :-

ग्राम मऊ तहसील फिल्लौर के भाई संगत राय जी की सुपुत्री माता गंगा जी आपकी जीवन संगिनी बनीं। उनके गर्भ से महाबली योद्धा और संत–सिपाही स्वरूप में 'श्री गुरु हरगोबिंद साहिब जी' का जन्म हुआ, जिन्होंने आगे चलकर खालसा परंपरा की बुनियाद को और अधिक सुदृढ़ किया।

व्यक्तिगत संघर्ष, आध्यात्मिक दृष्टिकोण और सामाजिक सेवाएं :-

श्री गुरु अर्जुन देव साहिब जी की अपने बड़े भाई पृथ्वी चँद से गृह कलह थी, पृथ्वी चँद ने येन–केन–प्रकारेण गुरु गद्दी को प्राप्त करने हेतु सभी प्रकार के नकारात्मक कार्यों को आप के विरुद्ध अंजाम दिये थे। भाई पृथ्वी चँद ने आप से सब कुछ लूट लिया था, एक समय ऐसा भी आया कि 3 दिनों तक लंगर (भोजन प्रसादी) मस्ताना रहा। जगत माता और आपकी सुपत्नी ने सारा घर खोज के बड़ी मुश्किल से जैसे–तैसे घर में बचे हुए बेसन की दो रोटियां (प्रशादे) तैयार कर परोस दी और जब दो सुखे प्रशादे (रोटी) गुरु पातशाह जी के समक्ष परोसी तो माता गंगा जी की आंखों से आंसुओं की धाराएं बहने लगी थी।

उस समय में ब्रह्म ज्ञान के प्रतीक गुरु 'श्री अर्जुन देव साहिब जी' ने अपनी पत्नी को संबोधित करते हुए वचन किये, जिसे 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' में इस तरह अंकित किया गया है :–

रूखो भोजन भूमि सैन सखी प्रिअ संगि सूखि बिहात।। (अंग क्रमांक 1306)

हे सखी! अपने पति–प्रभु के साथ रूखा–सूखा भोजन एवं भूमि पर शयन इत्यादि ही सुखमय है, यदि भाई पृथ्वी चँद सब कुछ लूट कर ले गये तो क्या हुआ? इन सभी दातों को देने वाला मेरा वाहिगुरु मेरे अंग–संग सहाय है। उस अकाल पुरख वाहिगुरु जी को तो कोई लूट नहीं सकता, वह तो मेरे पास हमेशा ही है। आप अत्यंत धीरजवान, क्षमा की मूर्ति और निर्मलता की प्रतिमा थे। प्रभु के प्रति प्यार आपके रोम–रोम में पुलकित होता था। आप ने अपनी बाणी में अंकित किया है :–

इक घड़ी न मिलते ता कलिजुगु होता।।
हुणि कदि मिलीऐ प्रिअ तुधु भगवंता।। (अंग क्रमांक 96)

है अकाल पुरुख! यदि मैं तुझे एक क्षण भर भी नहीं मिलता तो मेरे लिए कलयुग उदय हो जाता है, हे मेरे प्रिय भगवंता! मैं तुझे अब कब मिलूंगा? यदि प्रभु–परमेश्वर का मिलाप हो तो सतयुग है और यदि बिछड़ना है तो कलयुग है!

गुरु अर्जुन देव जी को 31 अगस्त सन 1581 ई. को सिख धर्म के पंचम गुरु के रूप में सुशोभित किया गया। आपने न केवल धार्मिक परंपराओं को सुदृढ़ किया, बल्कि सामाजिक सरोकारों, लोकहितकारी प्रयासों एवं साहित्यिक साधना को अद्वितीय ऊंचाइयां प्रदान की।

आपके कार्यकाल में 'गुरु का चक' (वर्तमान में अमृतसर) का निर्माण कार्य सम्पन्न हुआ। पीने के जल की समस्या से पीड़ित जनता के लिए आपने संतोखसर और अमृतसर सरोवर का निर्माण स्वयं अपने कर–कमलों से वर्ष 1590 ई. में तरनतारन नामक स्थान पर स्थापना कर, वहाँ कोढ़ियों के लिए चिकित्सालय स्थापित किया। करतारपुर और हरगोबिंदपुर शहरों का निर्माण भी आपके द्वारा ही हुआ।

आपके रोम–रोम में संगीत और कविता की ज्योति थी। आपने सिरंदा वाद्य का आविष्कार किया तथा कीर्तन में परमानंद प्राप्त किया। आपकी रचित वाणियों में सुखमनी साहिब, बावन अखरी, बारह माहा, गुणवंती ते

दिन रैन, और विभिन्न रागों में छह वारें सम्मिलित हैं।

आपके काल में अकबर और जहाँगीर जैसे सम्राट सत्तासीन थे। आपने अपने अनुयायियों को आर्थिक रूप से सशक्त करने हेतु व्यापार, विशेषकर घोड़े के व्यापार के लिए प्रोत्साहित किया।

सेवा, साहित्य और श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी का संपादन :-

'श्री गुरु नानक देव साहिब जी' द्वारा प्रारंभ की गई वाणी–संरचना की परंपरा को 'श्री गुरु अर्जुन देव साहिब जी' ने एक अभूतपूर्व कार्य में परिणत किया। आपने 'श्री गुरु नानक देव साहिब जी', 'श्री गुरु अंगद देव साहिब जी', 'श्री गुरु अमरदास साहिब जी' एवं 'श्री गुरु रामदास साहिब जी' की बाणियों के साथ–साथ समकालीन 15 संतों, 11 भटों और 3 गुरुसिखों की वाणियों को क्रमबद्ध ढंग से रामसर नामक स्थान पर संकलित किया।

यह ग्रंथ 'श्री आदि ग्रंथ' के रूप में हरिमंदिर साहिब में प्रतिष्ठित किया गया, जहाँ बाबा बुड्ढा जी को प्रथम ग्रंथी नियुक्त किया गया। इस संकलन की विशेषता यह थी कि प्रत्येक वाणी को राग, ताल, क्रम, और रचनाकार के नाम सहित अंकित किया गया, जिससे किसी भी मिलावट की संभावना समाप्त हो गई।

'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' न केवल सिख धर्म का आध्यात्मिक स्तंभ है, अपितु यह समस्त मानवता के लिए ज्ञान और सद्भाव का ग्रंथ है। इसके समक्ष हर मत, हर संप्रदाय के व्यक्ति श्रद्धा से शीश झुकाते हैं।

कथनी और करनी के महाबली 'श्री गुरु अर्जुन देव साहिब जी ने 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' के संपादन के पश्चात उसे अपने अधीन न रखते हुए, मानवता की भलाई हेतु हरमंदिर साहिब अमृतसर में सुशोभित किया। इस ऐतिहासिक क्षण पर आपने सिर नवाकर यह वाणी उच्चारित की :–

बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे।।
गुरूबाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरू निसतारे।। (अंग 982)

आपके विचार और कर्म में कोई द्वैत न था। भट्ट मथुरा की वाणी में आपके योगदान की महिमा इस प्रकार अंकित है :–

जब लउ नही भाग लिलार उदै तब लउ भ्रमते फिरते बहु धायउ।।
कलि घोर समुद्र मै बूडत थे कबहू मिटि है नही रे पछुतायउ।।
ततु बिचारू यहै मथुरा जग तारन कउ अवतारू बनायउ।।
जपुउ जिन् अरजुन देव गुरूफिरि संकट जोनि गरभ न आयउ।। (अंग 1409)

यासा-ए-सियासत और शहादत का वृतांत :-

जहाँगीर की शासकीय नीति 'यासा–ए–सियासत' के अंतर्गत 'श्री गुरु अर्जुन देव साहिब जी' को शहादत की सजा सुनाई गई। यह कानून साधु–संतों को इस प्रकार मृत्यु दंड देने का प्रावधान रखता था कि उनका रक्त भूमि पर न गिरे। कारण यह विश्वास था कि यदि ऐसा हुआ, तो विद्रोह और प्राकृतिक विपत्तियां उत्पन्न होंगी।

आपको यह सजा इसलिए दी गई क्योंकि आपने 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' में किसी विशेष शासक या मजहब की प्रशंसा न कर, उसे संपूर्ण मानवता के लिए "गुरु" के रूप में प्रतिष्ठित किया।

25 मई सन 1606 ई. (ज्येष्ठ सुदी चौथ) को तपती रेत, उबलती देग और गर्म तवे जैसी यातनाओं के

बीच आपने परम भाणे को मीठा मानकर शहादत प्राप्त की। आपके शरीर पर छाले पड़े, मांस उखड़ा, पर आपकी आत्मा अडोल रही।

आपके इस अपूर्व समर्पण के कारण इतिहास ने आपको "शहीदों के सरताज" का गौरव दिया। इस विषय में 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' में अंकित है :–

सबर अंदरि साबरी तनु एवै जालेनि।।

होनि नजीकि खुदाइ दै भेतु न किसै देनि।। (अंग 1384)

उत्तराधिकार और प्रेरणा :–

गुरु जी को ज्ञात था कि धर्म की रक्षा हेतु उनका बलिदान अपरिहार्य है। इसलिए आपने अपने सुपुत्र 'श्री गुरु हरगोबिंद साहिब जी' को 25 मई सन 1606 ई. को गुरु गद्दी पर विराजमान कर दिया, जो आगे चलकर 'संत–सिपाही' परंपरा के प्रतीक बने।

'श्री गुरु अर्जुन देव साहिब जी' की शहादत केवल ऐतिहासिक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक मार्गदर्शन का शिखर है। यह बलिदान बताता है कि अत्याचार का प्रतिकार 'सबर' से भी किया जा सकता है।

निष्कर्ष :–

'श्री गुरु अर्जुन देव साहिब जी' ने धर्म, साहित्य, समाज और मानवता के लिए जो योगदान दिए, वे अनंत काल तक मानव सभ्यता को प्रेरणा देते रहेंगे। आपके जीवन से हमें यह सिखने को मिलता है कि सत्य, सेवा और सहिष्णुता का पथ कठिन अवश्य है, परन्तु वही सबसे ऊँचा है।

आपकी शहादत के स्मरण स्वरूप आज भी वैशाख में ठंडा जल, शरबत और कच्ची लस्सी बाँटी जाती है। यह सिख परंपरा में केवल श्रद्धा नहीं, बल्कि समाज सेवा का सजीव उदाहरण है।

ऐसे महान 'श्री गुरु अर्जुन देव साहिब जी' की शहादत को कोटिशः प्रणाम!

टिप्पणी :–

1. 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' के पृष्ठों को सम्मान पूर्वक 'अंग' कहकर संबोधित किया गया है।
2. गुरबाणी अनुवाद के लिए 'Gurbani Searcher App' को मानक माना गया है।
3. गुरबाणी पदों की जानकारी खोज–विचार टीम के प्रमुख सरदार गुरदयाल सिंह जी के योगदान से प्राप्त हुई है।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 125–130

On The Problems and Strategies of Multimedia Technology in English Teaching

Dr. Shriya, Research Guide,
Manisha Sharma, Research Scholar,
JVWU, Jaipur

Abstract :

The rapid rising and development of Information Technology offered a better pattern to explore the new teaching model. As a result, multimedia technology plays an important role in English teaching. However, some teachers rely so much on the technology that the disadvantage emerges in the teaching process. In order to make more efficient use of the technology and the practical value in English teaching, the paper put forward positive suggestion and strategy by analyzing the problems in the use of multimedia technology.

Introduction :

21st century is the age of globalization that one important instrument is to grasp one or various foreign languages and English language comes first. With the rapid development of science and technology, the emerging and developing of multimedia technology and its application to teaching, traditional teaching model is unfit for contemporary English teaching and therefore multimedia technology featuring audio, visual, animation effects comes into full play in English class teaching and sets a favorable platform for reform and exploration on English teaching model in the new era. It's proved that multimedia technology plays a positive role in promoting activities and initiatives of student and teaching effect in English class.

ANALYSIS ON NECESSITY OF APPLICATION OF MULTIMEDIA TECHNOLOGY TO ENGLISH TEACHING :

A. To Cultivate Students' Nowadays, Interest in Study the traditional teaching methods and environment are unpopular while multimedia technology featuring audio, visual, animation effects naturally and humanely makes us more access to information. Besides, with such characteristics as abundant-information and crossing time and space, multimedia technology offers a sense of reality

and functions very well, which greatly cultivates students' interest and motivation in study and their involvement in class activities.

B. To Promote Students' Communication Capacity Traditional teaching has trivializes the students' capacity to comprehend certain a language and hampers their understanding to structure, meaning and function of the language, and makes the students passive recipients of knowledge. So it is hard to achieve the target of communication. With teachers' instructions leading students' thought patterns and motivating students' emotions, the multimedia technology class set in new-type internet classroom seeks integration of teaching and learning and provides the students greater incentives. The PPT courseware in university English teaching can activate students' thinking; the visual and vivid courseware transforms English learning into capacity cultivation. And such in-class activities as group discussion, subject discussion, and debates can also offer more opportunities for communication among students and between teachers and students. So multimedia technology teaching has uniquely inspired students' positive thinking and communication skills in social practice.

C. To Widen Students' Knowledge to Gain an Insightful Understanding to Western Culture. The multimedia can offer the students abundant information; the output of multimedia comprehensive English is far more plentiful than textbooks and it displays vivid cultural background, rich content and true-to-life language materials, which are much natural and closer to life. Not only could learners improve their listening ability, but also learn the western culture. Grasping information through various channels can equip the students with knowledge and bring about information-sharing among students and make them actively participate in class discussion and communication. Integration of human-machine communication and interpersonal communication leads to overall development of students' listening, speaking, reading and writing.

D. To Improve Teaching effect Multimedia teaching enriches teaching content and makes the best of class time and breaks the "teacher-centered" teaching pattern and fundamentally improves class efficiency. It is very common that the university students have English classes in very large yet crowded classrooms. Under such circumstances, it is difficult for the students to have speaking communication. The utilization of multi-media sound lab materializes the individualized and co-operative teaching. The traditional teaching model mainly emphasized on teachers' instruction, and the information provided was limited. On the contrary, multimedia technology goes beyond time and space, creates more vivid, visual, authentic environment for English learning, stimulates students' initiatives and economizes class time meanwhile increases class information.

ANALYSIS ON PROBLEMS ARISING FROM APPLICATION OF MULTIMEDIA TECHNOLOGY TO ENGLISH TEACHING :

In spite of advantages of application of multimedia technology to English class teaching as to improve teaching effect and university students' overall capacities, there are many problems existing in practical teaching, such as:

A. Major Means Replaced by the Assisting One - Application of multimedia technology is an assisting instrument to achieve the projected teaching effect. While, if totally dependent on multimedia devices during teaching, the teachers may be turned into slaves to the multimedia and can not play the leading role in teaching. It is observed in practice that a lot of teachers are active in multimedia technology application so that they are much engaged in searching information and working out courseware. In class, they are standing by the computer and students are fixing their attention only on the screen, and therefore, there is no eye contact between teachers and students.CAT has played a dominant role in class, while both teachers and students are enslaved by the computer and students' initiatives, originality, teachers' individualized art in teaching are totally restricted and erased. The trend of modern information and technology teaching appears to the extremity regardless of the essence of the traditional teaching. And hence, the notion of Creative Education should be fully comprehended that modern educational techniques serves an assisting instrument rather than a target; and that should not dominate class. With the assistance of computer in teaching, teachers are supposed to fully utilize the academic syllabus and teaching material, to find our how much knowledge the students have gained. The multimedia information should be less and better adopted with striking emphasis and breakthroughs in teaching.

B. Loss of Speaking or Communication - For a time, it has been proposed that English class should be carried through all in English language. English language and English analysis by the teachers are effective in conveying knowledge to the students from English pronunciation to comprehension, improving students' English thought patterns and oral expression. Whereas, the introduction of multimedia technology featuring audio, visual, textual effect can fully meets audio and visual requirements of the students and enhance their interest, but it also results in lack of communication between teachers and students, replacement of teachers' voice by computer sound, and teachers' analysis by visual image and students' few chances for speaking communication. With the favorable atmosphere by the mutual communication between teachers and students fading away, and sound and image of multimedia affecting students' initiative to think and speak, English class turns to courseware show and students are made viewers rather than the participants of class activities.

C. The Shrinking of Students'thinking Potential - It is clear that language teaching is different from science subjects, for language teaching does not require demonstration by various steps, rather, the tense and orderly atmosphere is formed through questions and answers between teachers and

students. Teachers raise impromptu and real-time questions and guide the students to think, cultivate their capacity to discover and solve problems. However, due to over-demonstration and pre-arranged order, the courseware lacks real-time effect and cannot feedback students' study so it ignores emphasis and importance in teaching; it also neglects instruction in students' thinking and appreciation to the beauty of language; furthermore it paid little heed to free learning atmosphere and the notion-"happy leaning". It is plain that multimedia plays a positive role in stimulating students'thinking, inspiring their paths of thinking, strengthening their capacities of discovering, contemplating and solving problems. In this way, it should be noted that cultivation of students' thinking capacity should be the major objective in teaching and multimedia not take up the students' time for thinking, analyzing and exploring questions.

D. Abstract Thinking Replaced by imaginal Thinking - The process of cognition goes through perceptual stage and rational stage. It also applies to studying process. It is our hope that teaching makes students adopt the outlook cognition from perceptual recognition to rational apprehension, and greatly leap from perceptual thinking to rational thinking. Therefore, it is the major objective in teaching to enhance the students' abstract thinking. The multimedia technology makes content easier, and with its unique advantages, it can clarify the emphasis in teaching. While if the image and imagination in students'mind were merely showed on the screen, their abstract thinking would be restricted and logical thinking would waste away. At present the decreased students' reading competence has become a major concern for reason that textual words are replaced by sound and image, handwriting by keyboard input. The over-application of multimedia technology would worsen the situation. All in all, the multimedia as an assisting instrument, cannot replace the dominant role of teachers and it is part of a complete teaching process. Besides, it is not a mechanic imitation of teaching, rather it integrates the visual, demonstration with teachers' experiences to contribute to the programmed, automatic and continuous teaching project so as to enhance the overall improvement of students' listening, speaking, reading and writing.

SUGGESTIONS AND STRATEGIES TO THE EXISTING PROBLEMS :

In practical teaching, it is improper to duplicate the textual material simply to the screen so that the teacher's position is ignored. In order to ensure the function of multimedia in teaching, it should be noted that: A. The Beauty of Courseware Is not the Sole Pursuit It is proved through practice that adequate application of multimedia technology to teaching can make breakthroughs in class teaching. That is to say, during multimedia assisting teaching, teachers still play the leading role that their position could never be replaced by the computer. For instance, the introduction to each lesson and speaking communication are good way to improve students' listening and speaking which the

computer cannot fulfill. Therefore, teachers' interpretation shall not be overlooked. Meanwhile, as a practical linguistic science, English should be used very often in class to cultivate the students' communicative competence. Multimedia, as an instrument for assisting teaching, serves the teachers despite its extraordinary effect. So teaching determines whether to adopt multimedia technology. Otherwise, the teachers were acting as the projectionist, clicking the screen. B. The Computer Screen can't Substitute the Blackboard. Some teachers take the computer screen as the blackboard. They have input exercises, questions, answers and teaching plans into the computer and display them piece by piece, without taking down anything on the blackboard or even the title of a lesson. It is known that teachers are supposed to simulate situations based on teaching and guide the students to communicate in English. Besides, traditional writing on blackboard is concise and teachers can make adjustment and amendment to it if necessary. Furthermore, experienced teachers know well that a perfect courseware is an ideal project in mind, and that in practice, they need to enrich the content on the blackboard with emerging of new questions raised by the students. C. PowerPoint can not take the Place of Student's thinking and Practices At present, most multimedia courseware mainly features on image and animation of teaching materials in order to cause audio and visual effect, which lively displays the content of textual materials and helps the students deeply understand the texts. A problem remains that displaying the content of texts in the PPT courseware cannot take the place of students' thinking or English communication in simulated circumstance. When working on and utilizing the courseware, we need to encourage the students to use their own mind and speak more, actively join in class practice; we should not overuse the courseware merely in the hope of adding the modernized feature to class teaching D. Traditional Teaching Instruments and Devices should not be Overlooked.

The function of multimedia assisting in teaching cannot be replaced by many other instruments, which does not mean that multimedia can replace any other form of instrument. Some teachers tend to entirely depend on multimedia teaching. While, it should be noticed that although multimedia has its unique advantages in teaching, the characteristic functions of other forms of teaching instruments are still incomparable. For example, the recorder still plays a role in broadcasting listening material.

So teachers are supposed to choose appropriate media and instrument based on the requirements of teaching and integrate multimedia instrument with traditional one and fully perform their merits, rather than merely in pursuit of trendy method. E. Multimedia Technology should not be Overused. Some teachers may possess the improper concept that they would totally apply multimedia technology in their teaching. It is also believed that the more utilization of multimedia technology, the better class atmosphere may grow, the more actively the students get involved in class participation, the more easily the material access to the students. Apparently, the students show some interest in

leaning, but actually, they feel like looking on. In practice, the more unconscious attention the students pay, the more interference of teaching information during transmission, the less the students take from the language materials. It is impossible to effectively train the students' language expression in class time. It is clear that in spite of advantages of application of multimedia technology, it assists in teaching.

During practical teaching, it is part of a complete teaching procedure. In practice, if multimedia technology would be properly implemented in English teaching, the students could make full use of English speaking and listening materials and develop their overall capacities, which is the objective for us to introduce multimedia technology to modern teaching. Thus, this leads to systematic training on students' listening, speaking, reading and writing, makes teachers' instructions come into great play, helps the student gain basic knowledge as well as language training at class, improves their expression ability in English and lays a fundamental basis for their English communication.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 131-133

संस्कृतभाषायां शास्त्रीया लिङ्गव्यवस्था

Dr THAHIRA P, Associate Professor
Dept- of Sanskrit, Sree Neelakanta Govt. Sanskrit College, Pattambi, Palakkad, Kerala
Affiliated to the University of Calicut.

Abstract :

संस्कृतभाषायां घटः, आश्रमः इत्यादयः पुल्लिङ्गाशब्दाः शिला, नगरी इत्यादयः जडपदार्थवाचकशब्दाः स्त्रीलिङ्गाः च भवन्ति। एवं भार्यावाचको दाराशब्दः पुल्लिङ्गे, कलत्रशब्दः नपुंसकलिङ्गे च वर्तते। अतः अत्र संस्कृतभाषायां लिङ्गव्यवस्था का इति विचार्यते।

Key Words : संस्कृतभाषा– पाणिनिः– लिङ्गव्यवस्था– लिङ्गानुशासनम्।

भाषया आशयस्य विनिमयः सम्पद्यते। पदं वाक्यनिमित्तमस्ति। वाक्यम् आशयविनिमयाय भवति। आशेरते चित्तभूमौ इत्याशयः संस्कारविशेषः इति योगशास्त्रकाराः। प्रकृतिप्रत्ययपुरस्सरं कृतम् अथवा सम्यक् कृतं संस्कृतम्। संस्कृतानां भाषा, संस्कृता च सा भाषेति विग्रहद्वयमस्ति। संस्कृतं न केवलं साहित्यिकभाषा अपि तु साधारणजनानां व्यावहारिकी भाषापि आसीत्। अत एव अस्याः भाषायाः सुदृढं व्याकरणमस्ति। शब्दज्ञानजनकं शास्त्रं भवति व्याकरणम्। आशयविनिमयाय भाषायाः घटनाज्ञानमावश्यकम्। तदर्थं बहूनि भाषाशास्त्रनियमानि पाणिनिना निर्दिष्टानि। अत्र व्याकरणशास्त्रानुसारं संस्कृतभाषायां लिङ्गव्यवस्था का इति प्रतिपाद्यते।

लिङ्गव्यवस्था :

लिङ्ग्यते ज्ञायते अनेन इति लिङ्गम्। इदितो नुम् धातोः (७–१–५८) इति सूत्रेण करणे घञि लिङ्गशब्दोऽयं निष्पन्नः। शब्दोऽयं व्यवहारात् कोषाच्च नपुंसकलिङ्गः। प्रातिपदिकार्थेषु एकं भवति लिङ्गम्। स्वार्थद्रव्यलिङ्गसंख्याकारकञ्चेति पञ्चकं प्रातिपदिकार्थः इति। सुबन्ततिङन्तपदद्वयोः सुबन्तपदैः लिङ्गं बोध्यते, न तु तिङन्तपदैः।

लिङ्गभेदाः

संस्कृतभाषायां लिङ्गं त्रिधा पुल्लिङ्गं, स्त्रीलिङ्गं, नपुंसकलिङ्गं चेति। पुनाति इति विग्रहे 'पूञोडुम्सुन्' इत्यौणादिकप्रत्ययेन निष्पन्नः पुंस् शब्दः। स्त्रीशब्दस्तु संघातार्थकस्य स्त्यै धातोः अधिकरणे ड्रटि रूपं भवति। नपुंसकशब्दः तु 'न भ्राण्नपान्नवेदानासत्यानमुचिनकुलनखनपुंसकनक्षत्रनक्रनाकेषु प्रकृत्या' (६–३–७५) इति सूत्रेण निपातनात् सिद्ध्यति।

तत्रापि लिङ्गं शास्त्रीयं लौकिकं चेति द्विधा विभज्यते। लौकिकलिङ्गस्य विषये व्याकरणमहाभाष्ये एवमुच्यते– 'स्त्रियाम् इत्युच्यते। का स्त्री नाम? लोकत एते शब्दाः प्रसिद्धाः स्त्री पुमान् नपुंसकमिति। सा स्त्री, स पुमान्, तन्नपुंसकमिति। किं पुनर्लोके दृष्ट्वैतदध्यवसीयते– इयं स्त्री, अयं पुमान्, इदं नपुंसकमिति लिङ्गम्। किं पुनस्तत्–

स्तनकेशवती स्त्री स्याल्लोमशः पुरूषः स्मृतः।
उभयोरन्तरं यच्च तदभावे नपुंसकम्' ।। इति।

एतदनुसृत्य स्तनकेशादयः स्त्रीत्वस्य बोधकाः, लोमादयः पुरुषत्वस्य बोधकाः। उभयोः सादृशस्याभावः नपुंसकत्वस्य च लक्षणम्। एतादृशलौकिकलिङ्गस्य खट्वादिषु अप्राणिषु अभावात् शास्त्रे स्त्रीत्वप्रयुक्तं कार्यं न सिद्ध्यति इत्यतः शास्त्रीयलिङ्गव्यवस्था एव व्याकरणशास्त्रेण आश्रीयते। एवं लौकिकपुंस्त्वस्य दाराशब्दवाच्ये अभावेन तद्वाचकशब्दस्य पुंस्त्वाभावे दारान् इत्यत्र तस्माच्छसो न पुंसि इति सूत्रेण विहितं नत्वं न सिद्ध्येत्। अतः अत्र लौकिकलिङ्गव्यवस्था न स्वीकार्या। अत एव उक्तं महाभाष्ये "तस्मान्न वैयाकरणैः शक्यं लौकिकं लिङ्गमास्थातुम्, अवश्यं च कश्चित् स्वकृतान्त आस्थेयः" इति।

वैयाकरणानां मते लिङ्गः शब्दनिष्ठः एव। सत्वगुणप्रधानाः ये शब्दाः ते पुल्लिङ्गशब्दाः, रजोगुणप्रधानाः ये ते स्त्रीलिङ्गशब्दाः, साम्ये तु नपुंसकलिङ्गशब्दाः। उक्तं बालमनोरमायां– सत्वरजस्तमसां प्राकृतगुणानां वृद्धिः पुंस्त्वं, अपचयः स्त्रीत्वं, स्थितिमात्रं नपुंसकत् इति। एतद् पारिभाषिकलिङ्गस्य खट्वादिष्वपि संभवात् तत्र न टाबाद्यनुपपत्तिः। 'आडो नास्त्रियां', 'तस्माच्छसो नः पुसि', 'स्वमोर्नपुंसकात्' इत्यादि शास्त्रप्रामाण्यात् शास्त्रीयलिङ्गस्यास्य शब्दनिष्ठत्वं स्पष्टमेव।

एवं स्त्रीत्व–पुंस्त्व–नपुंसकत्वधर्मविशेषेषु प्रयुज्यमानाः शब्दाः स्त्रीत्वाद्यर्थं बोधयन्ति। स्त्रीत्व–पुंस्त्व–नपुंसकत्वधर्मविशेषः लिङ्गम्। यथा आत्मशब्दात् पुंस्त्वरूपधर्मविशेषः बोध्यते चेत् पुंस्त्वरूपलिङ्गवान्। चितिशब्दात् स्त्रीत्वरूपधर्मविशेषः ज्ञायते इति चिति शब्दः स्त्रीत्वरूपलिङ्गवान्। एवं चेतना शब्दात् च नपुंसकत्वरूपधर्मविशेषः ज्ञायते इति चेत् चेतनशब्दः नपुंसकत्वलिङ्गवान्।

वाक्यपदीये लिङ्गसमुद्देशे भर्तृहरिणा एवमुक्तम्–

'स्तनकेशादिसम्बन्धो विशिष्टा वा स्तनादयः।
तदुपव्यञ्जना जातिर्गुणावस्था गुणास्तथा।।
शब्दोपजनितोऽर्थात्मा शब्दसंस्कार इत्यपि।
लिङ्गानां लिङ्गतत्वज्ञैर्विकल्पाः सप्त दर्शिताः' ।।

उपसंहारः

लोके यद्यद् लिङ्गं दृष्ट्वा अयं पुमान्, इयं स्त्री इदं नपुंसकमिति प्रतीयते, तदत्र पक्षद्वयेन निर्दिष्टम्। प्रसवयोग्यस्तनकेशकलापप्रजननादिभिः उपव्यञ्जनैः अवयविनः सम्बन्धः संयोगसमवायलक्षणो लिङ्गं, तेन वा सम्बन्धेन विशिष्टाः स्तनादयः इति पक्षद्वयम्।

वाच्यानां पदार्थानां स्त्रीपुन्नपुंसक एव पदेषु आरोप्यत इति देश्यभाषाणां सम्प्रदायः। संस्कृतभाषायां तु

लिङ्गव्यवस्था कृत्रिमाऽस्ति। यथा शिला, नगरी, भाषा, सृष्टिरित्यादयो जडा अपि स्त्रीलिङ्गाः। तथा आश्रमः, आहारः, इत्यादयः पुल्लिङ्गाः। भार्यावाचकोऽपि दाराशब्दः पुल्लिङ्गः, कलत्रं नपुंसकमित्यादि। संस्कृतभाषायां लिङ्गव्यवस्था लिङ्गानुशासनादिग्रन्थेभ्यः तद्व्याख्यानेभ्यः च ज्ञातुं शक्यते।

१. नभ्राट् नपात् नवेदाः नासत्याः, नमुचि, नकुल, नख, नपुंसक नक्षत्र, नक्र नाक इत्येतेषु नञ् प्रकृत्या भवति।

२. वैय्याकरणसिद्धान्तकौमुदी, भट्टोजिदीक्षितः, चौखम्भा पब्लिकेशन्स, पि बि न० ११५०, वाराणसी– २२१००१, २०१८. ऐ एस् बि एन्रू ९७८–९३–८६७३५–७४–४. स्त्रियाम् – पृ. ३३८

३. वा, लिङ्गसमुद्देशः – कारिका –३

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 134–139

सहयोगात्मक शिक्षण : संस्कृत भाषा कौशल के विकास में प्रभावशीलता

जलि नायक
पीएच.डी. शोधार्थी, शिक्षा विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र)

शोध-सार

प्रस्तुत शोध-पत्र संस्कृत भाषा शिक्षण में सहयोगात्मक शिक्षण(Collaborative Learning) की प्रभावशीलता का विश्लेषण किया गया है। परंपरागत शिक्षण पद्धतियों में शिक्षार्थी अक्सर निष्क्रिय रहते हैं, जिससे भाषा अधिगम की प्रक्रिया रुचिकर एवं प्रभावी नहीं बन पाती। इसके विपरीत सहयोगात्मक शिक्षण छात्रों को सक्रिय सहभागिता, संवाद, समूह-अधिगम और व्यावहारिक अभ्यास का अवसर प्रदान करता है, जिससे उनका भाषा कौशल बेहतर होता है। प्रयोगात्मक अध्ययन के माध्यम से यह देखा गया कि समूह चर्चा, परियोजना-आधारित शिक्षण, संवाद एवं नाट्य रूपांतरण और सहपाठी अनुदेशन जैसी विधियाँ छात्रों के श्रवण, वाचन, लेखन और कथन कौशल को विकसित करने में सहायक होती हैं। अध्ययन में भाग लेने वाले छात्रों ने संस्कृत भाषा के व्याकरण, उच्चारण, पठन, लेखन एवं संवाद क्षमता में सुधार किया।उनकी सीखने की रुचि, आत्मविश्वास और तार्किक चिंतन में भी वृद्धि देखी गई। अत: कह सकते हैं कि सहयोगात्मक शिक्षण से न केवल छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि बढ़ती है, बल्कि यह संस्कृत भाषा के प्रति उनके दृष्टिकोण को भी सकारात्मक बनाता है। शिक्षकों ने भी पाया कि यह विधि सहभागिता और संवाद को प्रोत्साहित कर कक्षा वातावरण को अधिक जीवंत बनाती है। यदि संस्कृत भाषा शिक्षण में सहयोगात्मक तकनीकों को नियमित रूप से अपनाया जाए, तो यह भाषा अधिगम को अधिक प्रभावी, रोचक और व्यावहारिक बना सकती है। इससे संस्कृत केवल एक शैक्षणिक विषय न रहकर, संचार और अभिव्यक्ति का एक सक्रिय माध्यम बन सकती है।

बीज शब्द- सहयोगात्मक शिक्षण, भाषा कौशल, संस्कृत भाषा शिक्षण, संस्कृत व्याकरण ।

प्रस्तावना

शिक्षा के क्षेत्र में नवीन शिक्षण पद्धतियों का विकास निरंतर हो रहा है, जिनमें सहयोगात्मक शिक्षण एक महत्वपूर्ण पद्धति है। यह शिक्षण विधि विद्यार्थियों को समूह में कार्य करने, एक-दूसरे से सीखने और पारस्परिक संवाद के माध्यम से ज्ञान अर्जित करने के अवसर प्रदान करती है। सहयोगात्मक शिक्षण में शिक्षक एक मार्गदर्शक की भूमिका निभाता है, जबकि छात्र अपनी सक्रिय भागीदारी से अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाते हैं। संस्कृत भाषा शिक्षण में सहयोगात्मक शिक्षण की विशेष भूमिका है। संस्कृत केवल एक भाषा नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति, दर्शन और प्राचीन ज्ञान का भंडार है। यह भाषा अपने कठिन व्याकरण, समृद्ध साहित्य और विशेष उच्चारण प्रणाली के कारण अन्य भाषाओं की तुलना में अधिक गहन अध्ययन की विषय वस्तु है।

परंपरागत शिक्षण विधियों में छात्र मुख्य रूप से शिक्षक पर निर्भर रहते हैं, जिससे उनकी सृजनात्मकता और संवाद कौशल में अपेक्षित विकास नहीं हो पाता। ठीक वहीं सहयोगात्मक शिक्षण छात्रों को पारस्परिक संवाद, चर्चा और समूह आधारित गतिविधियों के माध्यम से संस्कृत भाषा को व्यावहारिक रूप से समझने और आत्मसात करने में सहायक सिद्ध होता है।

संस्कृत भाषा शिक्षण में सहयोगात्मक शिक्षण की प्रासंगिकता इसलिए भी अधिक है क्योंकि यह भाषा केवल पाठ्य-पुस्तकों तक सीमित नहीं है, बल्कि इसके व्याकरण, छंद और साहित्य को प्रभावी ढंग से समझने के लिए संवादात्मक अभ्यास आवश्यक है। समूह चर्चा, नाट्य प्रस्तुति, सहपाठी अनुदेशन और समस्या-आधारित शिक्षण जैसी विधियाँ संस्कृत के कठिन विषयों को सरल एवं रोचक बनाने में सहायक होती हैं। शोध से इस बात का पता चलता है कि सहयोगात्मक शिक्षण पद्धति संस्कृत भाषा कौशल (श्रवण, वाचन, लेखन एवं कथन) के विकास में कितनी प्रभावी है।

सहयोगात्मक शिक्षण का परिचय

सहयोगात्मक शिक्षण एक आधुनिक शिक्षण पद्धति है जिसमें छात्र पारस्परिक सहयोग और समूह में कार्य करते हुए अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाते हैं। इसमें छात्र एक-दूसरे से सीखते हैं, विचार-विमर्श करते हैं और समस्या समाधान के लिए मिलकर कार्य करते हैं। इस विधि में शिक्षक केवल एक मार्गदर्शक की भूमिका निभाता है, जबकि छात्र स्वयं अधिगम प्रक्रिया के केंद्र में होते हैं। सहयोगात्मक शिक्षण का मूल उद्देश्य ज्ञान के आदान-प्रदान, संवाद और सक्रिय भागीदारी के माध्यम से शिक्षा को अधिक प्रभावी बनाना है। इस शिक्षण पद्धति के अंतर्गत छात्र केवल सुनने तक सीमित नहीं रहते; बल्कि वे चर्चा, समूह कार्य और प्रस्तुति के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करते हैं। समूह आधारित गतिविधियाँ छात्रों को टीम वर्क, सहिष्णुता और एक-दूसरे से सीखने की क्षमता विकसित करने में सहायक होती हैं। हर छात्र को सीखने की प्रक्रिया में अपनी भूमिका निभानी होती है, जिससे उनमें आत्मनिर्भरता और नेतृत्व कौशल विकसित होता है। छात्र एक-दूसरे के कार्यों की समीक्षा करते हैं, जिससे आत्ममूल्यांकन की प्रक्रिया सशक्त होती है।

☞ **शिक्षण के परंपरागत और सहयोगात्मक दृष्टिकोण में अंतर**

परंपरागत शिक्षण	सहयोगात्मक शिक्षण
शिक्षक केंद्रित पद्धति, जिसमें शिक्षक मुख्य भूमिका निभाता है।	छात्र केंद्रित पद्धति, जिसमें छात्र सक्रिय रूप से भाग लेते हैं।
व्याख्यान पद्धति पर अधिक निर्भरता होती है।	चर्चा, समस्या समाधान और संवाद आधारित विधियाँ अपनाई जाती हैं।
छात्र आमतौर पर व्यक्तिगत रूप से कार्य करते हैं।	छात्र समूहों में मिलकर कार्य करते हैं।
आत्म-अध्ययन और याद करने की प्रक्रिया पर जोर दिया जाता है।	समझ, विश्लेषण और सृजनात्मकता को प्रोत्साहित किया जाता है।
छात्र शिक्षक से निर्देश प्राप्त करते हैं और उनका अनुसरण करते हैं।	छात्र एक-दूसरे से सीखते हैं और विचार-विमर्श करते हैं।

संस्कृत भाषा शिक्षण में सहयोगात्मक तकनीकों की भूमिका- संस्कृत भाषा एक समृद्ध और संरचनात्मक भाषा है, जिसका व्याकरण एवं उच्चारण प्रणाली कठिन हो सकती है। अतः इसे सरल और प्रभावी रूप से सीखने के लिए सहयोगात्मक शिक्षण तकनीकें उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

- **समूह चर्चा (Group Discussion)-** संस्कृत के श्लोकों, व्याकरणिक नियमों और साहित्यिक ग्रंथों पर चर्चा के माध्यम से छात्र अधिक स्पष्टता प्राप्त कर सकते हैं।
- **संवाद और नाट्य रूपांतरण (Dramatization & Role Play)-** संस्कृत नाटकों, कथाओं और संवादों का अभिनय छात्रों की भाषा प्रवाह और उच्चारण सुधारने में मदद करता है।
- **सहपाठी अनुदेशन (Peer Tutoring)-** छात्र अपने सहपाठियों को पढ़ाकर संस्कृत के कठिन नियमों को बेहतर समझ सकते हैं।
- **परियोजना आधारित शिक्षण (Project-Based Learning)-** संस्कृत में लघु शोध परियोजनाएँ तैयार करने से छात्रों की शोध क्षमता और भाषा ज्ञान में वृद्धि होती है।
- **संस्कृत वार्तालाप (Sanskrit Conversation)-** दैनिक जीवन में संस्कृत भाषा का प्रयोग करने की आदत डालने के लिए छात्र समूहों में संवाद कर सकते हैं।

संस्कृत भाषा कौशल और उनका विकास

संस्कृत भाषा एक वैज्ञानिक एवं समृद्ध भाषा है, जिसके कुशल अधिगम के लिए चार प्रमुख भाषा कौशल-श्रवण, वाचन, लेखन और कथन है। सहयोगात्मक शिक्षण पद्धति इन कौशलों के विकास में अत्यंत प्रभावी सिद्ध हो सकती है क्योंकि यह शिक्षार्थियों को संवाद, चर्चा और व्यावहारिक अभ्यास के माध्यम से भाषा को गहराई से समझने का अवसर प्रदान करती है।

श्रवण कौशल (Listening Skills)- संस्कृत भाषा को प्रभावी रूप से सीखने के लिए श्रवण कौशल का विकास अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह सही उच्चारण, स्वर संधि और छंदों को समझने में सहायक होता है। सहयोगात्मक शिक्षण में इस कौशल को विकसित करने के लिए- विद्यार्थी संस्कृत के श्लोक, कथा और वार्तालाप सुनकर उच्चारण और लयबद्धता को समझ सकते हैं। शिक्षार्थी आपसी संवाद और चर्चा के माध्यम से संस्कृत के प्रयोग को सुनने और समझने की क्षमता विकसित कर सकते हैं। संस्कृत नाटकों, कहानियों और समाचारों को सुनने से छात्र भाषा की प्राकृतिक ध्वनि और प्रवाह को सीख सकते हैं।

वाचन कौशल (Reading Skills)- संस्कृत साहित्य अत्यंत समृद्ध है, जिसमें वेद, उपनिषद, महाकाव्य, पुराण और नाटक सम्मिलित हैं। सहयोगात्मक शिक्षण के माध्यम से वाचन कौशल के विकास के लिए- विद्यार्थी समूहों में संस्कृत ग्रंथों का पाठ कर सकते हैं और कठिन शब्दों पर चर्चा कर सकते हैं। उच्चारण और स्वराघात को सुधारने के लिए संस्कृत श्लोकों और कथाओं को भावपूर्ण ढंग से पढ़ना उपयोगी होता है। संस्कृत गद्य और पद्य को पढ़ने के बाद उसका अर्थ स्पष्ट करने की गतिविधियाँ कराई जा सकती हैं।

लेखन कौशल (Write Skills)- संस्कृत भाषा में लेखन कौशल विकसित करने के लिए व्याकरणिक संरचना और लिपि की सटीकता आवश्यक होती है। सहयोगात्मक शिक्षण इस कौशल के विकास में- छात्र समूहों में किसी विषय पर विचार कर संस्कृत में लेखन कर सकते हैं। विद्यार्थियों को संस्कृत में संवाद लिखने के लिए प्रेरित किया जा सकता है, जिससे उनकी रचनात्मकता और भाषा पर पकड़ मजबूत होगी। संस्कृत में छंदों का निर्माण करने से भाषा की समझ और सृजनात्मकता में वृद्धि होती है।

कथन कौशल (Speaking Skills)- संस्कृत भाषा के मौखिक अभ्यास के बिना भाषा पर अधिकार प्राप्त करना कठिन हो सकता है। सहयोगात्मक शिक्षण इस कौशल के विकास में- विद्यार्थियों को संस्कृत में संवाद करने के

लिए प्रेरित किया जा सकता है। संस्कृत नाटकों और कथाओं का मंचन छात्रों को भाषा के व्यावहारिक प्रयोग से जोड़ता है। छात्रों को संस्कृत में भाषण देने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है, जिससे उनका आत्मविश्वास बढ़ता है।

संस्कृत व्याकरण एवं साहित्य अध्ययन में सहयोगात्मक शिक्षण की भूमिका

संस्कृत व्याकरण अत्यंत जटिल होता है, जिसमें संधि, समास, धातु रूप, कारक और विभक्ति जैसी अनेक अवधारणाएँ होती हैं। इन जटिलताओं को सरल बनाने के लिए सहयोगात्मक शिक्षण सहायक सिद्ध हो सकता है। जैसे- छात्र विभिन्न व्याकरणिक नियमों पर चर्चा कर सकते हैं, जिससे उनकी समझ स्पष्ट होगी। एक छात्र अन्य छात्रों को व्याकरण संबंधी नियम समझा सकता है, जिससे सीखने की प्रक्रिया अधिक प्रभावी बनती है। संस्कृत साहित्य के ग्रंथों से प्रेरित होकर विद्यार्थी किसी कहानी पर चर्चा कर सकते हैं और उसका व्याख्यात्मक विश्लेषण कर सकते हैं।

सहयोगात्मक शिक्षण की विधियाँ

सहयोगात्मक शिक्षण शिक्षार्थियों को समूह में कार्य करने, आपसी संवाद स्थापित करने और व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करने का अवसर प्रदान करता है। संस्कृत भाषा शिक्षण में इस पद्धति का विशेष महत्व है क्योंकि यह भाषा केवल व्याकरण तक सीमित नहीं है, बल्कि इसे सुनने, बोलने, पढ़ने और लिखने के सभी पहलुओं में समृद्ध अभ्यास की आवश्यकता होती है। संस्कृत भाषा अधिगम को प्रभावी बनाने के लिए निम्नलिखित सहयोगात्मक शिक्षण विधियाँ उपयोगी की जा सकती है-

समूह चर्चा (Group Discussion)- समूह चर्चा विद्यार्थियों को संवाद कौशल, तार्किक चिंतन और भाषा की व्यावहारिक समझ विकसित करने में सहायक होती है। विद्यार्थियों को महाभारत, रामायण, पंचतंत्र तथा कालिदास आदि के नाटकों से अंश देकर उन पर चर्चा करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। संधि, समास, विभक्ति और धातु रूपों पर चर्चा कर छात्रों को कठिन व्याकरणीय नियमों की सरल समझ दी जा सकती है। छात्रों को संस्कृत में अपनी दिनचर्या, रूचियाँ और अनुभव साझा करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है, जिससे उनके संवाद कौशल में सुधार होगा।

परियोजना आधारित शिक्षण (Project-Based Learning)- परियोजना आधारित शिक्षण छात्रों को खुद अनुसंधान करने, विषयों को गहराई से समझने और रचनात्मक रूप से प्रस्तुत करने का अवसर देता है। विद्यार्थी विभिन्न विषयों पर संस्कृत श्लोकों का संकलन कर सकते हैं, जैसे- नैतिकता, पर्यावरण संरक्षण और योग पर आधारित श्लोक आदि। छात्र मिलकर संस्कृत में लघु पत्रिका तैयार कर सकते हैं, जिसमें लेख, कविता, पहेलियाँ और कहानियाँ सम्मिलित हों। विद्यार्थी किसी ऐतिहासिक घटना या पौराणिक कथा पर संस्कृत में नाटक लिखकर उसका मंचन कर सकते हैं। प्राचीन शिलालेखों, मंदिरों के अभिलेखों और ताड़पत्री पांडुलिपियों का अध्ययन करके छात्र संस्कृत की ऐतिहासिक प्रासंगिकता को समझ सकते हैं।

संवाद और नाट्य रूपांतरण (Dialogues & Dramatization)- संवाद और नाट्य रूपांतरण विधि छात्रों के श्रवण, कथन और प्रस्तुति कौशल को विकसित करने में सहायक होती है। यह पद्धति संस्कृत भाषा को जीवंत और रोचक बनाती है। विद्यार्थी विभिन्न नाटकों का मंचन कर सकते हैं, जिससे उनका भाषा प्रवाह और उच्चारण बेहतर होगा। विद्यार्थी किसी पौराणिक कथा जैसे- 'श्रीमद्भगवद्गीता' में अर्जुन और श्रीकृष्ण के संवाद का अभिनय कर सकते हैं। विद्यार्थियों को घर-परिवार, बाजार, विद्यालय आदि के संदर्भ में संस्कृत वार्तालाप सिखाया जा सकता है।

सहपाठी अनुदेशन (Peer Tutoring)- सहपाठी अनुदेशन पद्धति में छात्र एक-दूसरे को पढ़ाते हैं, जिससे न केवल सिखाने वाले विद्यार्थी को विषय की गहरी समझ मिलती है, बल्कि सीखने वाले छात्र को भी सरल और व्यावहारिक भाषा में विषय को समझने में सहायता मिलती है। एक छात्र संधि, समास, विभक्ति या धातु रूपों को अन्य छात्रों को सरल शब्दों में समझा सकता है। विद्यार्थी मिलकर संस्कृत श्लोकों का उच्चारण कर सकते हैं और एक-दूसरे को सही उच्चारण का अभ्यास करा सकते हैं। विद्यार्थी संस्कृत के कठिन पाठों को मिलकर पढ़ सकते हैं और उनमें आए कठिन शब्दों का आपसी सहयोग से अर्थ निकाल सकते हैं।

सहयोगात्मक शिक्षण की प्रभावशीलता

सहयोगात्मक शिक्षण एक अभिनव शिक्षण पद्धति है, जो पारंपरिक विधियों की तुलना में अधिक प्रभावी साबित हो रही है। विशेष रूप से संस्कृत भाषा शिक्षण में यह पद्धति छात्रों को सक्रिय रूप से भाग लेने, संवाद स्थापित करने और समूह में कार्य करने का अवसर प्रदान करती है। इस शोध अध्ययन में प्रयोगात्मक अध्ययन छात्रों के प्रदर्शन में सुधार तथा शिक्षकों एवं छात्रों के दृष्टिकोण का विश्लेषण किया गया है।

प्रयोगात्मक अध्ययन (Experimental Study)- इस अध्ययन में दो समूह बनाए गए, एक नियंत्रित समूह (Control Group) और दूसरा प्रयोगात्मक समूह (Experimental Group)। नियंत्रित समूह को पारंपरिक शिक्षण पद्धति से पढ़ाया गया, जबकि प्रयोगात्मक समूह को सहयोगात्मक शिक्षण तकनीकों का उपयोग करके पढ़ाया गया। यह अध्ययन छात्रों की सीखने की गति, भाषा कौशल, आत्मविश्वास और सक्रियता को मापने के लिए किया गया। समूह चर्चा, परियोजना-आधारित शिक्षण, सहपाठी अनुदेशन और नाट्य रूपांतरण जैसी विधियाँ प्रयोगात्मक समूह पर लागू की गईं। छात्रों की प्रगति को पूर्व-परीक्षण (Pre-Test) और पश्चात्-परीक्षण (Post-Test) के माध्यम से आँका गया। निष्कर्षत: पाया गया कि सहयोगात्मक शिक्षण से छात्रों की संस्कृत भाषा में रुचि और भागीदारी बढ़ी। व्याकरणीय नियमों की समझ, श्लोक उच्चारण, तथा लेखन कौशल में उल्लेखनीय सुधार देखा गया। समूह में सीखने से छात्रों में आत्मविश्वास और संवाद कौशल विकसित हुआ। सहपाठी अनुदेशन के कारण छात्रों में सामाजिक सहयोग और परस्पर सीखने की भावना मजबूत हुई।

सहयोगात्मक शिक्षण द्वारा छात्रों के प्रदर्शन में सुधार- प्रयोगात्मक अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि सहयोगात्मक शिक्षण पद्धति के माध्यम से छात्र बेहतर प्रदर्शन करते हैं। यह सुधार में देखा गया कि संस्कृत श्लोकों और संवादों का नियमित श्रवण करने से उच्चारण की स्पष्टता बढ़ी। समूह चर्चा और पढ़ने की गतिविधियों से शब्दावली और व्याकरणीय समझ में वृद्धि हुई। छात्रों ने संस्कृत में निबंध, संवाद और श्लोक रचना में रुचि दिखानी शुरू की। परियोजना आधारित शिक्षण ने रचनात्मक लेखन और भाषा प्रयोग को बढ़ावा दिया। संस्कृत वार्तालाप, नाट्य रूपांतरण और सहपाठी अनुदेशन के कारण छात्र स्वयं को अधिक आत्मविश्वास से व्यक्त करने लगे। संवाद गतिविधियों ने भाषा को व्यावहारिक रूप से उपयोग करने की क्षमता को बढ़ाया।

शिक्षकों एवं छात्रों के दृष्टिकोण- शिक्षकों के दृष्टिकोण के अनुसार शिक्षकों ने सहयोगात्मक शिक्षण के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण व्यक्त किया। उनके अनुसार इस पद्धति से कक्षा का वातावरण अधिक सहभागिता-पूर्ण बन गया। छात्रों में सीखने की जिज्ञासा और उत्साह बढ़ा। शिक्षण प्रक्रिया में सृजनात्मकता और नवीनता आई, जिससे शिक्षक भी अधिक प्रेरित हुए। कुछ शिक्षकों ने यह भी माना कि पारंपरिक विधियों की तुलना में यह विधि थोड़ी अधिक समय लेने वाली हो सकती है। वही छात्रों के दृष्टिकोण ने सहयोगात्मक शिक्षण को रोचक, प्रभावी और व्यावहारिक बताया। यह पद्धति संस्कृत भाषा को आसान और मनोरंजक बनाती है। समूह में सीखने से भय और झिझक कम होती है और आत्मविश्वास बढ़ता है। पारंपरिक शिक्षण की तुलना में इस विधि से अधिक व्यावहारिक

ज्ञान और समझ विकसित होती है। संस्कृत के कठिन व्याकरणीय नियमों को आपसी संवाद और चर्चा से सरल बनाया जा सकता है।

निष्कर्ष :

सहयोगात्मक शिक्षण पद्धति संस्कृत भाषा अधिगम को अधिक प्रभावी, रोचक और व्यावहारिक बनाने में सहायक सिद्ध होती है। पारंपरिक शिक्षण पद्धतियों की तुलना में यह विधि छात्रों को अधिक सक्रिय, आत्मनिर्भर और संवाद-कुशल बनाती है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ किसमूह चर्चा, परियोजना आधारित शिक्षण, संवाद एवं नाट्य रूपांतरण और सहपाठी अनुदेशन जैसी विधियाँ संस्कृत भाषा के श्रवण, वाचन, लेखन और कथन कौशल को विकसित करने में प्रभावी हैं। सहयोगात्मक शिक्षण अपनाने वाले छात्रों ने भाषा की समझ, व्याकरणीय दक्षता, श्लोक उच्चारण और लेखन कौशल में उल्लेखनीय सुधार किया। उन्होंने संस्कृत वार्तालाप में अधिक आत्मविश्वास प्रदर्शित किया और कठिन पाठों को सरलता से आत्मसात किया। इसके अतिरिक्त, इस शिक्षण पद्धति ने छात्रों में सामाजिक सहभागिता, तार्किक चिंतन और रचनात्मकता को भी बढ़ावा दिया।शिक्षकों और छात्रों दोनों ने इस पद्धति के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया। शिक्षकों ने पाया कि इससे कक्षा में सक्रिय भागीदारी बढ़ी और छात्रों की सीखने की प्रक्रिया अधिक व्यावहारिक और दीर्घकालिक हो गई। वहीं, छात्रों ने इसे मनोरंजक, ज्ञानवर्धक और प्रभावी बताया। अतः यह कहा जा सकता है कि यदि संस्कृत भाषा शिक्षण में सहयोगात्मक शिक्षण तकनीकों को नियमित रूप से अपनाया जाए, तो यह न केवल छात्रों की भाषा दक्षता में सुधार करेगा, बल्कि संस्कृत के प्रति उनकी रुचि और लगाव को भी बढ़ाएगा। यह विधि संस्कृत भाषा को केवल एक शैक्षणिक विषय तक सीमित न रखकरउसे संचार और अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बना सकती है।

संदर्भ-सूची

- वर्मा, डॉ. रामकुमार. (2018). **संस्कृत शिक्षण की विधियाँ**. केंद्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय.
- शर्मा, डॉ. सुमन (2020). **शिक्षा में सहयोगात्मक अधिगम.** राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (NCERT).
- Elizabeth F. Barkley, K. Patricia Cross, and Claire Howell Major. (2014) **Collaborative Learning Techniques: A Handbook for College Faculty**. Jossey-Bass.
- Dr. John D. Smith. (2019) **The Theory and Practice of Collaborative Learning in the Classroom'.** Educational Publishers Inc.
- मिश्रा, डॉ. अनीता (2021). **संस्कृत शिक्षण में सहयोगात्मक अधिगम की प्रभावशीलता: एक अध्ययन.** भारतीय शिक्षा अनुसंधान पत्रिका.
- Dr. Michael L. Johnson (2020) **Effectiveness of Collaborative Learning in Enhancing Language Skills.** International Journal of Educational Research.

Email - jalinayak2018@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 140–146

मोहन राकेश और सुरेन्द्र महान्ति की कहानियों में संवेदनाओं की गहराई : तुलनात्मक अध्ययन

धरित्री स्वाई
पीएच.डी. (हिंदी साहित्य), म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा (महाराष्ट्र)

शोध-सारांश :

प्रस्तुत शोध-पत्र भारतीय साहित्य के दो प्रतिष्ठित लेखकों, मोहन राकेश और सुरेन्द्र महान्ति की कहानियों में संवेदनाओं की गहराई का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। दोनों लेखकों ने अपने साहित्य में मानवीय भावनाओं और अनुभवों को गहराई से चित्रित किया है, लेकिन उनके दृष्टिकोण और शैलियों में उल्लेखनीय भिन्नताएँ हैं। **मोहन राकेश** नई कहानी आंदोलन के प्रमुख हस्ताक्षर थे, जिनकी कहानियों में व्यक्तिवादी दृष्टिकोण और अस्तित्ववाद का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। उनकी रचनाओं में आधुनिक जीवन की जटिलताएँ, अकेलापन और रिश्तों की टूटन प्रमुख विषय हैं। राकेश की कहानियाँ शहरी परिवेश में स्थापित होती हैं, जहाँ उनके पात्र अपनी आंतरिक पीड़ा और जीवन के संघर्षों से जूझते हैं। वही दूसरी ओर **सुरेन्द्र महान्ति** की कहानियाँ सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों में गहराई से जमी हुई हैं। उनकी रचनाएँ मुख्यतः ग्रामीण जीवन, परंपराओं और समाज के सांस्कृतिक ढाँचे पर आधारित होती हैं। महान्ति की कहानियों में समाज और परिवार की संरचनाओं से उत्पन्न मानवीय भावनाएँ केंद्र में रहती हैं, जहाँ पारिवारिक मूल्यों और सामाजिक बंधनों का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। शोध में यह पाया गया कि मोहन राकेश की कहानियाँ अधिक आत्मकेंद्रित और व्यक्तिगत संवेदनाओं पर आधारित हैं, जहाँ पात्रों के आंतरिक द्वंद्व और भावनात्मक अकेलापन उभरकर आता है। इसके विपरीत सुरेन्द्र महान्ति की कहानियों में सामाजिक और सांस्कृतिक तत्वों की प्रधानता होती है, जहाँ संवेदनाएँ सामाजिक परिप्रेक्ष्य में परखी जाती हैं। दोनों लेखकों के संवेदनात्मक चित्रणों की तुलना यह दर्शाती है कि जहाँ राकेश की कहानियाँ आधुनिक जीवन के यथार्थ और आत्मान्वेषण पर केंद्रित हैं, वहीं महान्ति की कहानियाँ परंपराओं और सामाजिक मूल्यों की पृष्ठभूमि में मानवीय भावनाओं की गहराई को उजागर करती हैं।

बीज शब्द - संवेदना, अस्तित्ववादी संघर्ष, तुलनात्मक, समाज।

प्रस्तावना :

भारतीय साहित्य में मोहन राकेश और सुरेन्द्र महान्ति जैसे रचनाकारों ने अपने लेखन के माध्यम से समाज के विभिन्न पहलुओं और मानव मन की गहराई को उजागर किया है। दोनों लेखकों ने अपने-अपने समय और समाज की जटिलताओं, सामाजिक संघर्षों और मानवीय भावनाओं को कहानियों के माध्यम से प्रस्तुत किया; लेकिन उनके दृष्टिकोण और विषयों की विविधता दोनों को एक अलग साहित्यिक स्थान प्रदान करती है।

मोहन राकेश हिंदी साहित्य के 'नई कहानी' आंदोलन के प्रमुख हस्ताक्षर हैं, जिन्होंने आधुनिक जीवन की जटिलताओं और व्यक्तिवाद पर आधारित कहानियाँ लिखीं। उनकी कहानियाँ शहरीकरण, रिश्तों की टूटन, अस्तित्ववादी संघर्ष और मानवीय अकेलेपन पर केंद्रित हैं। उनके पात्र आत्म-खोज और आत्म-संघर्ष के प्रतीक हैं, जिनके भावनात्मक द्वंद्व को बेहद संवेदनशीलता के साथ चित्रित किया गया है। राकेश की कहानियाँ आधुनिक समाज में व्यक्ति की पीड़ा और मानसिक उलझनों को प्रस्तुत करती हैं। ठीक उसी प्रकार सुरेन्द्र महान्ति की कहानियाँ ओड़िआ साहित्य में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं, जहाँ ग्रामीण जीवन, पारिवारिक मूल्य और सामाजिक संरचनाएँ प्रमुख हैं। महान्ति की कहानियाँ समाज के सांस्कृतिक और पारंपरिक पहलुओं पर केंद्रित हैं और उनकी कहानियों में मानवीय भावनाओं की अभिव्यक्ति के साथ सामाजिक मूल्य और परंपराओं के साथ टकराव की गाथा भी शामिल है।

संवेदनाओं का चित्रण :

मोहन राकेश और सुरेन्द्र महान्ति भारतीय साहित्य के दो प्रमुख नाम हैं, जिन्होंने अपने लेखन के माध्यम से मानवीय भावनाओं और सामाजिक परिस्थितियों का प्रभावशाली चित्रण किया। दोनों लेखकों की कहानियों का संवेदनात्मक दृष्टिकोण भिन्न है क्योंकि उनके साहित्यिक दृष्टिकोण, जीवन के अनुभव और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि अलग-अलग रहे हैं। इनकी कहानियों में मानवीय संवेदनाएँ जैसे- अकेलापन, संघर्ष, प्रेम, सामाजिक बंधन मुख्य भूमिका निभाती हैं, लेकिन दोनों ने इन्हें अपने-अपने ढंग से प्रस्तुत किया है।

मोहन राकेश का संवेदनात्मक दृष्टिकोण - मोहन राकेश की कहानियाँ मुख्य रूप से आधुनिक समाज, व्यक्ति के मानसिक द्वंद्व और अस्तित्ववादी समस्याओं पर केंद्रित हैं। राकेश के पात्र आत्मकेंद्रित होते हैं, जो अपने आंतरिक संघर्षों से जूझते हुए दिखाई देते हैं। उनकी कहानियों में संवेदनाएँ गहरी और सूक्ष्म होती हैं, जहाँ व्यक्ति अपने जीवन की निरर्थकता, अकेलेपन और आत्म-संघर्ष से लड़ता है। 'मलबे का मालिक' जैसी कहानियाँ एक ऐसे व्यक्ति की कहानी बयां करती हैं, जो अपनी पहचान की तलाश में संघर्ष कर रहा है। यहाँ संवेदनाएँ बाहरी दुनिया से नहीं, बल्कि व्यक्ति के भीतर के द्वंद्व से उत्पन्न होती हैं। जैसे- "जी हल्का न कर रक्खिआ! जो होनी थी सो हो गयी। उसे कोई लौटा थोड़े ही सकता है? खुदा नेक की नेकी रखे और बद की बदी माफ़ करे! मेरे लिए चिराग नहीं तो तुम लोग तो हो। मुझे आकर इतनी ही तसल्ली हुई कि उस ज़माने की कोई तो यादगार है। मैंने तुमको देख लिया, तो चिराग को देख लिया। अल्लाह तुम लोगों को सेहतमंद रखे। जिते रहो और खुशियाँ देखो!" यह कहने में कोई त्रुटी न होगी कि विभाजन की आग में मलबा सभी मानवीय मूल्यों का प्रतीक है जो इसी अहंकार, लोभ रुपी आग में जलकर राख हो गया है परन्तु रचनाकार यहाँ मलबे से ऊपर उठकर गनी मिआं द्वारा मूल्यों पर पुनर्विजय हासिल करते दिखाई देता है। यहाँ गनी मिआं की संवेदनाएं सभी के प्रति दिखाई पड़ता है, वे अपनी समस्याओं को त्यागकर दूसरों की मंगल कामना में जुड़े रहते दिखाई पड़ता है।

मोहन राकेश की संवेदनाएँ अक्सर आधुनिक जीवन की जटिलताओं और अस्तित्व की चिंता में डूबी होती हैं। उनके पात्रों के लिए सामाजिक संबंध माध्यमिक होते हैं और उनका संघर्ष स्वयं से होता है। 'भूखे' कहानी एक वैयक्तिक अनुभूति परक कहानी है। नायिका एवलीन के चरित्र को रचनाकार संवेदनात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की है। विदेशी संस्कृति की होने के बावजूद वह भारतीय संस्कृति, अपने पति एवं बच्चे के प्रति बहुत संवेदनशील दिखाई पड़ती है। पुरुष की निगरानी में न रह पाने के कारण समाज की समस्याओं को झेलना पड़ा परन्तु अपने बच्चे की भूख और पति के रोग के आगे वह आपने सम्मान और आत्म स्वाभिमान की आहुति दीना कदापि उचित नहीं समझी और कहती है-"मम्मी की तू इतनी बात नहीं मानता? मैं तुझे आलू की टिकिया भी खिलाउंगी, सब कुछ खिलाउंगी,

मगर कुछ दिन ठहर जा। समझा न? इस वक़्त तू यह मूंगफली ले ले, भात अछि भुनी हुई मूंगफली है।"[1] अपने बच्चे को समझाने का प्रयत्न करती है लेकिन झुकती नहीं है।

'उर्मिल जीवन' कहानी में अनमेल विवाह की समस्या पर विचार किया गया है, जहाँ दीदी के गुजर जाने के बाद 17 साल की नीरा पर दो बेटियों की जिम्मेदारी और वैवाहिक संसार का दुःख टूट पड़ता है। यह हमारे समाज का कटु यथार्थ है जहाँ छोटी और न समझ बच्चियों की ही बलि चढ़ाई जाती है। पिता के बात को याद करती है और रोटी है, "जीवन एक बैलगाडी है। एक हिचकोले से इनके तक्ते हिल जाते हैं। एक कील टूट जाए तो पहिये निकल जाते हैं।"[2] यहाँ स्त्री की संवेदनाओं को कोई नहीं समझता, रचनाकार दांपत्य जीवन के बोझ में दबे, शोषित महसूस कर रहे स्त्री को यहं रेखांकित करने का प्रयास किया है।

'एक और जिंदगी' कहानी में बच्चे की मानसिक और भावनात्मक जरूरतों को बताया गया है।

'मिसपाल' कहानी में मिसपाल का अकेलेपन की वेदना का उल्लेख मिलता है, जहाँ वह समाज में रह कर अकेलेपन का शिकार होता रहा है। 'सुहागिनें' कहानी में स्त्री के दर्द को मापने का प्रयास किया गया है, यहाँ एक पढ़ी लिखी कर्मठ स्त्री है और एक मजदूरी करने वाली लेकिन दोनों के हिस्से में कहीं भी सुख और प्रेम का कोई झलक नहीं देखने को मिलता। 'फौलाद का आकाश' कहानी में श्री जीवन का संत्रास देखने को मिलता है। 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी में पुरुष अपनी वेदना को सरकारी आफिस के सामने परमात्मा के कुत्ते के रूप में पेश करता है। शोषक वर्ग की धूर्तता से परेशान होकर अपने अधिकार के लिए अपनी उल्लग्न अवस्था ही उत्तम मार्ग मानते हुए भ्रष्टाचार को रोकना चाहता है।

राकेश की कहानियों की एक विशेषता यह है कि उनके पात्र अक्सर अनिर्णय की स्थिति में होते हैं, जहाँ वे अपनी असुरक्षाओं और मानसिक उलझनों के जाल में फंसे होते हैं। उनकी संवेदनाएँ गहरी होती हैं, लेकिन वे बाहरी दुनिया से जुड़ी हुई नहीं होतीं। उनके पात्रों का संघर्ष अंततः अस्तित्ववादी होता है, जो उन्हें समाज से अलग और अकेला बना देता है।

सुरेन्द्र महान्ति का संवेदनात्मक दृष्टिकोण - सुरेन्द्र महान्ति की कहानियाँ समाज और परंपराओं से गहरे रूप से जुड़ी हुई हैं। महान्ति की कहानियों में संवेदनाएँ अधिक सामाजिक और सामूहिक होती हैं। उनके पात्र समाज, परिवार और परंपराओं से घिरे होते हैं और उनका संघर्ष मुख्यतः इन संस्थानों के साथ होता है। महान्ति की कहानियों में मानवीय भावनाएँ सामाजिक ढांचे और सांस्कृतिक संदर्भों में उभरती हैं, जहाँ पात्र समाज के नियमों और अपेक्षाओं से प्रभावित होते हैं।

'पुष्याभिषेक' कहानी में अपनी परंपरा को जीवित रखने हेतु अभिषेक करने का निर्णय बहुत ही संवेदनशील नजर आता है। जहाँ स्वाधीनता के उपरांत जमींदारी प्रथा का उच्छेद द्वारा आयी दरिद्रता पुरखों से चली आ रही परंपरा में बाधा नहीं बन पाती है। दरिद्रता का बल अधिक हावी नहीं हो पाता।

'श्रीकृष्ण की अंतिम हंसी' कहानी पौराणिक आख्यान पर आधारित है जहाँ गान्धारी और धृतराष्ट्र के पुत्ररत्न खोने की वेदना को कृष्ण समझने का बल रखते हैं और रचनाकार उसको यथार्थ की धरातल पर उतरने का प्रयास करता है। समय चाहे पौराणिक हो या आधुनिक माँ की ममता और पिता का प्रेम सदैव अपने बच्चों के प्रति बनी रहती है। यहाँ पिता ध्रुतराष्ट्र अपने गर्व और अहंकार के बल से विदुर को कहते हैं कि, "भूलो नहीं विदुर, आज तक इन दोनों बाँहों में कुरुकुलहंता भीम समेत पांडवों के पांच भाइयों को चूर्ण विचुर्ण करने की शक्ति अक्षुर्ण है।"[3] एक पिता की संवेदना के साथ यहाँ गांधारी की मनो दशा भी देखने को मिलती है।

---

[1] नए बादल, भूखे, पृष्ठ क्र-104

[2] नए बादल, उर्मिल जीवन, पृष्ठ-135

[3] श्रीकृष्ण की अंतिम हंसी, सुरेन्द्र महंती, पृष्ठ-126

'से ओ मुँ' कहानी में एक स्त्री की स्त्री सुख प्राप्ति की वेदना को उभारा गया है। जिसमें कमली सांसारिक जीवन में स्नेह और सम्मान की आशा में दयालु, त्यागी और निडर बन जाती है और आत्महत्या करने पर भी संकोच नहीं करती। यहं कमली के जैसे अनेक स्त्रीओं की वेदनाओं को रचनाकार में उभरने का प्रयास किया है। यहाँ बताया गया है कि पुरुष किसी एक स्त्री के सौन्दर्य में मग्न होकर रहना नहीं चाहता, वह नया-नया साथ साथ चाहता है। अंततः अपने सांसारिक जीवन में सम्मान और स्नेह के खोज में अपनी संवेदनाओं का गला घोट देती है।

महान्ति की कहानियों में सामाजिक दबाव, पारिवारिक जिम्मेदारियाँ और पारंपरिक मूल्यों का संघर्ष प्रमुख होता है। उनके पात्र अक्सर सामाजिक संस्थानों और परंपराओं के भीतर रहते हुए अपनी भावनाओं और संवेदनाओं को समझने का प्रयास करते हैं। महान्ति के पात्र सामूहिक जीवन से जुड़े होते हैं, जहाँ व्यक्तिगत भावनाओं से अधिक सामाजिक बंधन महत्वपूर्ण होते हैं।

दोनों लेखकों की संवेदनाओं का चित्रण उनकी साहित्यिक दृष्टिकोण और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से गहराई से प्रभावित है। मोहन राकेश की कहानियों में संवेदनाएँ अधिक आत्मकेंद्रित और व्यक्तिपरक हैं, जहाँ पात्र अपने आंतरिक संघर्षों से जूझते हैं। उनकी कहानियाँ आधुनिक अस्तित्ववाद और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के सवालों से प्रेरित हैं। वहीं, सुरेन्द्र महान्ति की कहानियाँ सामाजिक और पारिवारिक संवेदनाओं पर आधारित हैं, जहाँ पात्र समाज और परंपराओं के बीच अपनी जगह तलाशते हैं। संवेदनाओं की गहराई दोनों लेखकों की कहानियों में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है, लेकिन उनका दृष्टिकोण भिन्न है। जहाँ मोहन राकेश का फोकस व्यक्ति के भीतर के द्वंद्व और मानसिक उलझनों पर है, वहीं सुरेन्द्र महान्ति समाज, परिवार और परंपराओं के साथ व्यक्ति के संबंधों पर ध्यान केंद्रित करते हैं। दोनों ही लेखकों की कहानियाँ मानवीय संवेदनाओं की जटिलताओं को अलग-अलग संदर्भों में प्रस्तुत करती हैं, जिससे पाठकों को जीवन के विभिन्न पहलुओं को समझने का अवसर मिलता है।

कथानक और चरित्रों का तुलनात्मक विश्लेषण :

मोहन राकेश और सुरेन्द्र महान्ति दोनों के लेखन का दृष्टिकोण और संवेदनात्मक दृष्टि अलग है, फिर भी उनके पात्रों और कथानक के माध्यम से मानवीय भावनाओं की विविधता और जटिलता को समझा जा सकता है। मोहन राकेश ने आधुनिक शहरी जीवन और व्यक्ति के आंतरिक संघर्षों को केंद्र में रखा जबकि सुरेन्द्र महान्ति ने ग्रामीण और पारिवारिक जीवन के संदर्भ में सामाजिक और पारंपरिक मूल्यों के टकराव को दिखाया है।

मोहन राकेश की कहानियाँ आधुनिकता, शहरीकरण और व्यक्ति के अकेलेपन को गहराई से उभारती हैं। उनके कथानक में पात्र अक्सर अपने आंतरिक द्वंद्व और मानसिक तनाव से जूझते हुए दिखाई देते हैं। राकेश की कहानियाँ मानवीय संबंधों की टूटन और असुरक्षा को केंद्र में रखती हैं। उनके पात्र भावनात्मक रूप से टूटे हुए, आत्मसंघर्ष से जूझते हुए और जीवन की निरर्थकता का अनुभव करने वाले होते हैं। यहाँ पति-पत्नी और अन्य पात्रों के बीच संवादहीनता, निराशा और टूटते संबंधों का चित्रण संवेदनाओं की गहराई को दर्शाता है। उनके पात्र आत्मकेंद्रित होते हैं और उनके आंतरिक संघर्ष को समझने के लिए कथानक में गहराई से उतरना पड़ता है।

मोहन राकेश की कहानियों में जीवन की निरर्थकता और मानव अस्तित्व की जटिलताओं को प्रमुखता दी गई है। उनके पात्र अपनी पहचान और उद्देश्य की तलाश में संघर्ष करते हैं और उनके निर्णयों में एक प्रकार का अस्तित्ववादी तनाव साफ झलकता है। संवेदनाएँ पात्रों के आंतरिक जगत में सजीव होती हैं, जो उन्हें जीवन की वास्तविकता से दूर कर देती हैं और अक्सर उन्हें समाज से कटे हुए दिखाती हैं। 'एक और जिंदगी' कहानी के पात्र प्रकाश और वीना दोनों कामकाजी और शिक्षित दंपत्ति हैं लेकिन दोनों के मध्य परिवार को समय दे पाना कठिन साध्य होता है इसी तरह 'जीवन-प्रभात' कहानी में मंटू के साथ देखा जाता है कि माता-पिता के पास बच्चे के लिए समय नहीं दे पाते हैं, जिस कारण वह उदास ही रहने लगता है। दोनों रचनाकार व्यक्ति केन्द्रित कहानियां लिखते हैं, जिसमें जीवन के सभी यथार्थता का उल्लेख मिलता है। लेकिन राकेश की कथा अधिकतर शहरी क्षेत्र पर सिमित है

और सुरेन्द्र महान्ति की ग्रामीण क्षेत्र पर। इसी तरह दोनों कथाकारों की कथा में काफी समानता भी दिखाई पड़ते हैं और विषमताएं भी।

सुरेन्द्र महान्ति की कहानियों में संवेदनाएँ अधिक सामूहिक और सामाजिक संदर्भों से जुड़ी होती हैं। उनके पात्र व्यक्तिगत संघर्षों के साथ-साथ सामाजिक और पारिवारिक दायित्वों से भी जूझते हैं। महान्ति की कहानियाँ ग्रामीण जीवन और पारिवारिक संबंधों पर आधारित होती हैं, जहाँ व्यक्ति का संघर्ष सामाजिक ढाँचों और परंपराओं के साथ होता है। महान्ति की कहानियों में उनके पात्र पारिवारिक और सामाजिक जिम्मेदारियों के प्रति समर्पित होते हैं और उनके निर्णयों का प्रभाव उनके आसपास के लोगों और समाज पर पड़ता है। इस तरह, उनकी कहानियों में संवेदनाएँ एक सामूहिक अनुभव बन जाती हैं, जो समाज और परंपराओं के अनुरूप होती हैं। 'द्विपहर ग्रास' कहानी में ग्रामीण परिवेश की साधारण जनता पर संभ्रांत समाज के हो रहे अत्याचार को बताया गया है। 'निःसंग आकाश' कहानी में साधारण जनता घुमफिर कर, शांति हेतु गाँव की ओर प्रत्यावर्तन करते हैं परन्तु गाँव के अशांत रूप को देखने के बाद जीवन के बदलते यथार्थ का अनुमान होता है।

मोहन राकेश और सुरेन्द्र महान्ति के पात्रों और कथानक में संवेदनाओं की अभिव्यक्ति का अंतर स्पष्ट है। जहाँ राकेश की कहानियाँ व्यक्ति के आंतरिक संघर्ष और मानसिक पीड़ा पर केंद्रित होती हैं, वहीं महान्ति की कहानियाँ समाज और परंपराओं के साथ व्यक्ति के संबंधों पर आधारित होती हैं। राकेश के पात्र अकेलेपन, असुरक्षा और मानसिक द्वंद्व का अनुभव करते हैं, जबकि महान्ति के पात्र समाज, परिवार और परंपराओं के साथ जुड़े होते हैं और उनके संघर्ष बाहरी होते हैं और संवेदनाएँ गहरी, सूक्ष्म और आत्मकेंद्रित होती हैं, जो उनके पात्रों को एकांत और निराशा में ले जाती हैं। महान्ति की कहानियाँ अधिक यथार्थवादी हैं, जहाँ संवेदनाएँ सामूहिक और सामाजिक स्तर पर व्यक्त होती हैं। महान्ति के पात्र सामाजिक संरचनाओं के बीच अपना जीवन जीते हैं और उनकी भावनाएँ समाज और परिवार से गहराई से जुड़ी होती हैं।

बाल मनोविज्ञान का विश्लेषण :

भारतीय साहित्य में बाल मनोविज्ञान का चित्रण उन भावनात्मक और मानसिक अवस्थाओं को व्यक्त करता है जो बच्चों के मन और उनके विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मोहन राकेश और सुरेन्द्र महान्ति, दोनों ने अपने लेखन में बाल पात्रों को जगह दी है, लेकिन उनके दृष्टिकोण और संवेदनाओं में स्पष्ट भिन्नता दिखाई देती है। मोहन राकेश का दृष्टिकोण अधिक आधुनिक और अस्तित्ववादी है, जबकि सुरेन्द्र महान्ति की कहानियों में पारिवारिक और सामाजिक संदर्भों में बच्चों की मनःस्थिति और उनके व्यवहार की संवेदनाएँ उभरकर आती हैं।

मोहन राकेश की कहानियों में बाल पात्रों का चित्रण प्रायः उनके आंतरिक संघर्षों और मनोवैज्ञानिक उलझनों के माध्यम से किया जाता है। उनके पात्र सामाजिक और पारिवारिक ताने-बाने के बीच फंसे हुए होते हैं और जीवन की जटिलताओं से जूझते हैं। राकेश ने बच्चों के भीतर के द्वंद्व और उनकी मानसिक उलझनों को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। मोहन राकेश की कहानी 'एक और ज़िन्दगी' में बाल मनोविज्ञान की झलक दिखाई पड़ता है। ...

'छोटी सी बात' कहानी एक बाल मनोविज्ञानाधारित कहानी है, जिसमें यशवीर के विद्यालय के वातावरण के साथ द्वंद्व का चित्रण देखने को मिलता है। मित्रों का आस्वाभाविक वातावरण दिखाना उसे उचित नहीं लगता और वह मानसिक तनावग्रस्त हो जाता है परन्तु मिस्टर वर्टन यशवीर की भावना को समझते हैं और उसे प्यार के साथ दो टाफी देते हैं और कहते हैं, "जा छोटी सी चीज, उदास मत होना।"[4]

'मरुस्थल' कहानी बाल मनोविज्ञान पर आधारित कहानी है जिसमें एक नौ साल की बालिका के चरित्र को उजागर किया गया है। पुरुष प्रधा समाज का प्रतिनिधित्व करते धनपत राय अपनी बेटी को पैसा उपार्जन का माध्यम(नाचने वाली) बनाना चाहता है। बच्ची अपनी समझ के अनुसार उसका समर्थन नहीं करती और अपनी

[4] नए बादल , छोटी सी बात, पृष्ठ-124

सहेली के घर जाना चाहती है क्योंकि वह लोगों के आनंद की वास्तु नहीं बनना चाहती है। शर्मा के कही बात- "रंडी की औलाद है, रंडियों के खून में नखरा होता है।"[5] इस प्रश्न पर वह अधिक मर्माहत होती है और पूछती रहती है कि आप बताइए,क्या में रंडी हूँ? मानसिक रूप से इंदु टूट जाती है और उसकी तबियत कभी ठीक हो ही नहीं पाती।

सुरेन्द्र महान्ति की कहानियों में बाल मनोविज्ञान अधिक सामूहिक और पारिवारिक ढांचे में बुना हुआ है। महान्ति ने अपने बाल पात्रों को सामाजिक और पारिवारिक जिम्मेदारियों और परंपराओं के संदर्भ में चित्रित किया है। उनके पात्र समाज और परिवार के बीच अपनी स्थिति को समझने की कोशिश करते हैं और इस प्रक्रिया में उनकी भावनाएँ और संवेदनाएँ उभरकर सामने आती हैं। महाँति की कहानी 'दश पुत्र' में बच्चे का अपने माता-पिता और समाज के प्रति कर्तव्यों का भावनात्मक संघर्ष स्पष्ट रूप से उभरता है। यहाँ बाल पात्र पारिवारिक दायित्वों और सामाजिक अपेक्षाओं के बीच अपनी जगह तलाशने का प्रयास करता है। महान्ति की कहानियों में बाल पात्रों की संवेदनाएँ पारिवारिक संरचना और सामाजिक नियमों से गहराई से जुड़ी होती हैं। उनका संघर्ष बाहरी होता है, जहाँ वे परिवार और समाज के दबाव को महसूस करते हैं और उसके अनुसार अपने व्यवहार और भावनाओं को ढालते हैं। 'जीवन-प्रभात' बाल मनोविज्ञान पर आधारित कहानी है। जिसमें संयुक्त परिवार के विघटन पर मंटू के मानसिक दशा काफी प्रभावित होती है। दादी माँ के गुज़र जाने से उनकी कमी को महसूस करना और माता-पिता से स्नेह का सांभर न मिलने से मिले दुःख कहीं न कहीं उसको तोड़ दिया है। सुरेन्द्र महान्ति ने इस कहानी के चार अवस्थाओं को चार कहानियों में परिवर्तित किया है। 'नमक का स्वाद', 'निर्मुली लता का फूल', 'जय-पराजय' इन तीनों कहानियों में मंटू के किशोरावस्था, यौवनावस्था और प्रौढ़ावस्था में बदलते मानसिक चेतन और अवचेतन मन का विवेचन देखने को मिलता है।

मोहन राकेश और सुरेन्द्र महान्ति की कहानियों में बाल मनोविज्ञान का चित्रण भिन्न दृष्टिकोणों से किया गया है। जहाँ राकेश के बाल पात्र मुख्यतः आंतरिक संघर्ष और मानसिक उलझनों से जूझते हैं वहीं महान्ति के बाल पात्र सामाजिक और पारिवारिक ढांचे के बीच अपना स्थान खोजने का प्रयास करते हैं। राकेश के पात्र अकेलेपन, असुरक्षा और मानसिक द्वंद्व का सामना करते हैं। महान्ति के पात्रों का संघर्ष सामूहिक और बाहरी होता है, जहाँ वे समाज और परिवार के नियमों के साथ तालमेल बिठाने का प्रयास करते हैं। राकेश की कहानियों में बाल पात्र अधिक संवेदनशील और मानसिक रूप से जटिल होते हैं, जो अपनी भावनाओं को समझने और व्यक्त करने में संघर्ष करते हैं।

निष्कर्ष :

मोहन राकेश और सुरेन्द्र महान्ति भारतीय साहित्य के दो महत्त्वपूर्ण स्तंभ हैं, जिनकी कहानियाँ मानवीय संवेदनाओं की गहराई को उजागर करती हैं। राकेश के पात्र आत्मकेंद्रित होते हैं, जो मानसिक द्वंद्व, अस्तित्ववादी संकट और जीवन की निरर्थकता से जूझते हैं। उनकी कहानियों में आधुनिकता, शहरीकरण और व्यक्ति की पहचान का संकट प्रमुख है। उनकी संवेदनाएँ आंतरिक संघर्षों और आत्मविश्लेषण पर केंद्रित होती हैं। इसके विपरीतमहान्ति की कहानियाँ सामूहिक और सामाजिक जीवन से जुड़ी हैं। उनके पात्र पारिवारिक और सामाजिक बंधनों में बंधे होते हैं, जहाँ परंपराओं, जिम्मेदारियों और सांस्कृतिक प्रभावों की झलक मिलती है। उनकी संवेदनाएँ स्पष्ट और यथार्थवादी हैं, जो पारिवारिक दायित्व और सामाजिक संरचना को दर्शाती हैं। तुलनात्मक रूप से, जहाँ राकेश अकेलेपन और मानसिक उलझनों को चित्रित करते हैं, वहीं महान्ति सामाजिक जटिलताओं को उभारते हैं। दोनों लेखकों का विशिष्ट दृष्टिकोण भारतीय साहित्य में उन्हें एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान करता है।

---

[5] नए बादल , मरुस्थल , पृष्ठ-96

संदर्भ-सूची :

1. गुप्ता, चमनलाल (1988). **मोहन राकेश के कथा साहित्य में मानवीय संबंध**. भावना प्रकाशन, नई दिल्ली
2. डॉ. पाल, सदन कुमार (2000). **मोहन राकेश की कहानियों में आधुनिकता बोध.** भावना प्रकाशन, नयी दिल्ली
3. डॉ. शर्मा, रूपिका (2006). **समाजचेता साहित्यकार: मोहन राकेश**. दीपक पब्लिशर्स, माई हीरा गेट, जालंधर
4. डॉ. सिन्हा, रघुवीर (1977). **हिंदी कहानी का समाजशास्त्रीय अध्ययन**. अक्षर प्रकाशन नई दिल्ली
5. राकेश, मोहन (2023). **मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियाँ**. राजपाल एन्ड सनज़, मदरसा रोड, कश्मीरी गेट
6. महान्ति, सुरेन्द्र. (1956**). महानिर्वाण**. कटक, स्टूडेंट स्टोर.
7. महान्ति, सुरेंद्र. (1980). **सबुज पत्र ओ धूसर गोलाप'**. कटक: न्यू प्रेस.
8. शईलेन्द्र. (1997). **कथा शिल्पी सुरेंद्र महान्ति'**. भुवनेश्वर: ओड़िशा साहित्य अकादमी
9. सिंह, कुमुद. (2005). **समाज, मनोविज्ञान और साहित्य: एक संगोष्ठी.** नई दिल्ली: विश्वविद्यालय प्रकाशन.
10. तिवारी, अनिल. (2018). **भारतीय कथा साहित्य में संवेदनाएँ**. दिल्ली: साहित्य महोत्सव प्रकाशन.

dharitriswain323@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 147–150

सुशीला टाकभौरे की कहानियों में स्त्री विमर्श

डॉ. निशा चौहान
सहायक आचार्या, हिंदी विभाग, राजकीय कन्या महाविद्यालय शिमला, हिमाचल प्रदेश। 171001

सारांश :–

स्त्री विमर्श समाज में स्त्री की स्थिति का विश्लेषण करता है–वह क्यों उत्पीड़ित है, कैसे शोषित होती है और किस प्रकार वह स्वयं को स्वतंत्र व आत्मनिर्भर बना सकती है। यह विमर्श स्त्री को केवल संवेदना का पात्र नहीं, बल्कि एक सशक्त, सोचने–समझने वाली सत्ता के रूप में प्रस्तुत करता है। सुशीला टाकभौरे हिंदी दलित साहित्य की एक सशक्त स्त्री स्वर हैं, जिनकी कहानियाँ स्त्री जीवन की जटिलताओं, संघर्षों और सामाजिक पितृसत्तात्मक संरचनाओं से टकराव को निर्भीक रूप में अभिव्यक्त करती हैं। उनके साहित्य में नारी चेतना केवल एक विचार नहीं, बल्कि अनुभवों से उपजा प्रतिरोध है। यह शोध आलेख उनके कथा–साहित्य में उपस्थित स्त्री विमर्श की विभिन्न परतों को उजागर करता है, जिसमें घरेलू हिंसा, जातिगत शोषण, लैंगिक असमानता, शैक्षणिक पिछड़ापन और आर्थिक पराधीनता जैसे मुद्दे शामिल हैं। यह अध्ययन कहानियों के माध्यम से सुशीला टाकभौरे की स्त्री दृष्टि, सामाजिक यथार्थ और साहित्यिक संवेदना का विश्लेषण करता है।

बीज बिन्दु :– स्त्री, संघर्ष, शोषण, आयाम, प्रतिरोध।

सुशीला टाकभौरे की कहानियों में स्त्री विमर्श का अभिप्राय दलित स्त्री की त्रिविध शोषण व्यवस्था–जाति, वर्ग और लिंग के आधार पर होने वाले दमन–की गहन और यथार्थ अभिव्यक्ति से है। उनकी कहानियाँ न केवल दलित स्त्री की व्यथा कहती हैं, बल्कि उसके भीतर प्रतिरोध और आत्मसम्मान की लौ को भी प्रज्वलित करती हैं। डॉ. शशिकांत सिंह के अनुसार "सुशीला टाकभौरे की कहानियाँ दलित स्त्री जीवन की जटिलताओं का केवल वर्णन नहीं करतीं, वे पाठक को उस पीड़ा का अनुभव भी कराती हैं।"[1]

पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की स्थिति :–

सुशीला टाकभौरे की कहानियाँ पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की स्थिति, अधिकार, संघर्ष और अस्मिता को चित्रित करती है। 'सारंग तेरी याद में' संवाद स्त्री की पारंपरिक भूमिका और पितृसत्तात्मक सोच को उजागर करती है–"बेटी दुःख–सुख तो अपनी किस्मत का लिखा लेख है..... पति के घर रहकर, उनके परिवार की सेवा करना ही नारी का धर्म है।"[2] सुशीला टाकभौरे की कहानियां पति के क्रूरतापूर्ण, पुरुषसत्तात्मक व्यवहार के सशक्त उदाहरण हैं, जो स्त्री के आत्म सम्मान, स्वतंत्रता और पहचान को कुचलने वाले दृष्टिकोण को उजागर करते हैं। 'सूखी रोटी 'कहानी में मीरा का यह संवाद–"दिन–रात काम करने के बाद भी वो कहता है : औरत का काम ही क्या है?"[3] घरेलू श्रम के प्रति पुरुष मानसिकता के अपमानजनक दृष्टिकोण स्पष्ट करता है। 'पगडंडी' कहानी

पति की बेरोजगारी और घरेलू हिंसा के दोहरे शोषण को उजागर करती है। कहानी की नायिका चमेली का दर्द इन पंक्तियों में देखा जा सकता है–'वो कमाता नहीं शराब पीकर मारता है३ फिर भी मैं उसी की कहलाती हूँ।'[4] 'दंश' कहानी का यह संवाद स्त्री की कामगार पहचान और उसके प्रति समाज के दोहरे मापदंड को उजागर करता है–'हमारी मेहनत से घर चलता है, फिर भी हमें दोयम दर्जे का माना जाता है'।[5] 'दीवार के उस पार' कहानी में शोभा की ये पंक्ति– 'मर्द होने का मतलब ही उसे खुदा समझ लेना पड़ा मुझे।"[6] पुरुष के ईश्वरीय दर्जे वाले व्यवहार को दर्शाती है, जो स्त्री को आत्म–गौरव से वंचित करता है।

छुआछूत और दलित स्त्री की गरिमा :-

सुशीला टाकभौरे की कहानियाँ छुआछूत की अमानवीय प्रथा को न केवल जातिगत भेदभाव के रूप में चित्रित करती हैं, बल्कि यह भी दिखाती हैं कि यह किस प्रकार दलित स्त्री की गरिमा, स्वाभिमान और आत्मनिर्भरता को बाधित करता है। 'हवन' कहानी में दुर्गा की ये पक्तियां–"हवन में बैठने के लिए कहा गया, पर जब मैंने हाथ में सामग्री ली तो सब पीछे हट गए : 'अस्पृश्या' का हवन कैसे?"[7] यह दृश्य दर्शाता है कि धार्मिक क्रियाओं में भी दलित स्त्री को भाग लेने का अधिकार नहीं मिलता, जिससे उसकी सामाजिक मान्यता और आस्था दोनों अपमानित होती हैं। 'पानी' कहानी में किशोरी की यह पंक्तियाँ –"गांव के कुएं से पानी लेने गई तो मुँह ढककर लौटा दिया गया : कहा, गंदा कर देगी।"[8] जल जैसे जीवनदायी संसाधन से भी दलित स्त्रियों को वंचित रखना छूआछूत की अमानवीयता दर्शाता है।

आर्थिक शोषण में दलित स्त्री की अस्मिता :-

सुशीला टाकभौरे की कहानियाँ दर्शाती हैं कि आर्थिक निर्भरता किस प्रकार दलित स्त्रियों को शोषण के दायरे में बनाए रखती है। ये पात्र मेहनत करती हैं, पर उन्हें वे अधिकार या स्वाभिमान नहीं मिलते जो उनके श्रम का उचित प्रतिफल हो। 'बकाया' कहानी में कामगर महिला का करुण स्वर आर्थिक शोषण को रेखांकित करता है– "हफ्तों की मजदूरी दबा ली गई, आवाज उठाई तो काम से निकाल दिया गया।"[9] मजदूरी न देना और शोषण करना स्त्रियों की आर्थिक बेबसी को दिखाता है। वही 'स्वावलंबन' कहानी में सविता का यह संवाद आर्थिक निर्भरता की गरिमा को दर्शाता है– "जब अपनी कमाई हाथ में आई, तो पहली बार खुद को इंसान समझा।"[10]

स्वर और प्रतिरोध :-

सुशीला की नायिकाएँ मूक पीड़ित नहीं हैं, वे अपनी स्थिति को समझती हैं और प्रतिरोध का स्वर अपनाती हैं।'वसूली' कहानी में सरकारी सफाई कर्मचारी महिला की यह पंक्ति–"साफ–सफाई करूं मैं, और तनख्वाह समय पर न मिले – ये कैसा न्याय?"[11] सरकारी व्यवस्था के प्रति विरोध को उजागर करती है। कहानी 'छौआ माँ' में छौआ माँ का यह संवाद– "अब हम किसी से नहीं डरेंगे। हम भी ईंट का जवाब पत्थर से देंगे। वे शेर है तो हम सवाशेर बनकर रहेंगे।"[12] दलित स्त्री के आत्मसम्मान और प्रतिरोध की भावना को दर्शाता है, जहाँ छौआ माँ सामूहिक प्रतिरोध का आह्वान करती हैं।

स्त्री अस्मिता की खोज :-

उनके पात्र सामाजिक बंदिशों को तोड़कर आत्म निर्णय की ओर अग्रसर होते हैं। 'सिलिया' कहानी में सिलिया का संवाद– "हम क्या इतने भी लाचार हैं, आत्म सम्मान रहित हैं? हमारा अपना भी तो कुछ अहं भाव है।"[13] दलित स्त्री के आत्मसम्मान और शिक्षा के माध्यम से सशक्तिकरण की आकांक्षा को प्रकट करता है। 'धूप

से भी बड़ा' कहानी में रमा की ये पक्तियां –"मैं सदा के लिए इस घर को छोड़कर जा रही हूं..... मैं बंटी से तलाक लेना चाहती हूं।"[14] रमा का यह निर्णय स्त्री के आत्मनिर्णय और पितृसत्तात्मक व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह का प्रतीक है। डॉ. मिथिलेश कुमार के अनुसार "टाकभौरे की भाषा में आक्रोश है, लेकिन वह आक्रोश विवेक से भरा हुआ है। वे न केवल दलित स्त्री के अनुभवों को स्वर देती हैं, बल्कि वे उसे एक वैचारिक आधार भी प्रदान करती हैं।"[15] अतः टाकभौरे का लेखन दलित स्त्री चेतना की अभिव्यक्ति है, जिसमें आत्मसम्मान, संघर्ष और सामाजिक बदलाव की आकांक्षा स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।[16]

निष्कर्ष :-

सुशीला टाकभौरे की कहानियाँ केवल अनुभव–सामग्री नहीं है, वह दलित स्त्री के संपूर्ण अस्तित्व का साहित्यिक दस्तावेज है। पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की स्थिति, अधिकार, संघर्ष और अस्मिता से जुड़ी है। उनके लेखन में पारिवारिक विघटन, सामाजिक बहिष्कार, धार्मिक मिथ, सांस्कृतिक जड़ता, आर्थिक शोषण और राजनीतिक उपेक्षा के विरुद्ध एक तीव्र प्रतिरोध दिखाई देता है। वे अपने अनुभवों को जिस साहस और सजगता से रचती हैं, वह उन्हें अन्य लेखिकाओं से विशिष्ट बनाता है। यह लेखन न केवल स्त्री विमर्श का विस्तार करता है, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की संभावनाओं को भी जन्म देता है।

संदर्भ सूची :-

1. डॉ0 शशिकांत सिंह– हिंदी दलित कहानियों में स्त्री का रूप, पत्रिका : समकालीन भारतीय साहित्य, अंक 162, पृष्ठ 49–50, वर्ष 2017)
2. सुशीला टाकभौरे कहानी : सारंग तेरी याद में (संग्रह : शब्दों का सफर), प्रकाशक : साहित्य उपक्रम, नागपुर, प्रकाशन वर्ष 2004, पृष्ठ संख्या 78
3. सुशीला टाकभौरे, कहानी : सूखी रोटी (संग्रह : शब्दों का सफर), प्रकाशक : साहित्य उपक्रम, नागपुर, प्रकाशन वर्ष 2004, पृष्ठ संख्या 88
4. सुशीला टाकभौरे, कहानी : पगडंडी, (संग्रह : दीवार के उस पार) प्रकाशक : प्रतिशोध प्रकाशन, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष 2007, पृष्ठ संख्या 34
5. सुशीला टाकभौरे, कहानी : दंश (संग्रह : माटी का बदन), प्रकाशक : बोधि प्रकाशन, जयपुर प्रकाशन वर्ष 2012, पृष्ठ संख्या 200–206
6. सुशीला टाकभौरे, कहानी : दीवार के उस पार (संग्रह : दीवार के उस पार), प्रकाशक : प्रतिशोध प्रकाशन, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष 2007, पृष्ठ संख्या 139
7. सुशीला टाकभौरे, कहानी : हवन (संग्रह : संघर्ष), पृष्ठ संख्या 133, प्रकाशक साहित्य सृजन, भोपाल, प्रकाशन वर्ष 2006
8. सुशीला टाकभौरे, कहानी : पानी (संग्रह संघर्ष), प्रकाशक साहित्य सृजन, भोपाल, प्रकाशन वर्ष 2006, पृष्ठ संख्या 101
9. सुशीला टाकभौरे, कहानी बकाया (संग्रह : माटी का बदन), प्रकाशक : बोधि प्रकाशन, जयपुर, प्रकाशन वर्ष 2012 पृष्ठ संख्या 110

10. सुशीला टाकभौरे, कहानी : स्वावलंबन, संग्रह : (शब्दों का सफर), प्रकाशक : साहित्य उपक्रम, नागपुर, प्रकाशन वर्ष 2004, पृष्ठ संख्या 138
11. सुशीला टाकभौरे, कहानी : वसूली (संग्रह : संघर्ष), प्रकाशक : साहित्य सृजन, भोपाल, प्रकाशन वर्ष 2006, पृष्ठ संख्या 91
12. सुशीला टाकभौरे, कहानी : छौआ माँ (संग्रह : दीवार के उस पार), प्रकाशक : प्रतिशोध प्रकाशन, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष 2007, पृष्ठ संख्या 21–30
13. सुशीला टाकभौरे, कहानी : सिलिया, (संग्रह : शब्दों का सफर), प्रकाशक : साहित्य उपक्रम, नागपुर, प्रकाशन वर्ष 2004, पृष्ठ संख्या 12–18
14. सुशीला टाकभौरे, कहानी : धूप से भी बड़ा (संग्रह : माटी का बदन), प्रकाशक : बोधि प्रकाशन, जयपुर, प्रकाशन वर्ष 2012 ,पृष्ठ संख्या 55–63
15. डॉ0 मिथिलेश कुमार– लेख : दलित कथा में स्त्री की उपस्थिति, पत्रिका : हंस, अंक : जुलाई।
16. डॉ0 संजय पासवान– (संपादित पुस्तक : दलित विमर्श : दृष्टि और दिशा, खंड 2, पृष्ठ 172, प्रकाशक प्रभात प्रकाशन, वर्ष 2013)

nc008194@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 151-158

Criminal justice system in India : challenges and measures

Pratap Singh
Research Scholar, Departmet of Law, Shri JJT University, Jhunjhunu, Rajasthan, India
Dr. Anil Kumar
Research Guide, Departmet of Law, Shri JJT University, Jhunjhunu, Rajasthan, India
Dr. Narendra Kumar Verma
Research Co-Guide, Departmet of Law, Seth Motilal Law College, Jhunjhunu, Rajasthan, India

Abstract :

The criminal justice system in India is a complex network of laws, procedures and institutions designed to ensure justice, law enforcement and rehabilitation. Despite its extensive legal framework, the system faces several challenges, such as delays in justice delivery, overcrowding in prisons, police inefficiency, lack of proper legal aid and societal biases affecting the impartiality of judicial processes. Additionally, issues like outdated laws, political influence and underfunding of institutions further hinder its effectiveness. These challenges not only undermine public trust but also violate fundamental rights, particularly the right to a fair and speedy trial. This paper highlights these challenges and suggests potential reforms, including judicial reforms, police training, modernization of the legal system, effective use of technology, improved legal aid for marginalized communities and prison reforms. Addressing these issues is crucial for ensuring the equitable and timely delivery of justice in India.

Keywords : Criminal Justice System, India, Challenges, Judicial Reforms, Police Inefficiency, Legal Aid, Overcrowding, Prison Reforms, Legal Framework, Technology in Justice

Introduction :

The criminal justice system in India is an intricate and multifaceted framework designed to maintain law and order, ensure justice and uphold the rule of law in the society. It is the cornerstone of any democracy, serving as a mechanism for ensuring fairness, justice and the protection of citizens' rights. The system in India is based on the rule of law, where each individual is treated equally before

the law and is entitled to a fair trial. It comprises three primary components: the police, the judiciary and the correctional system. However, despite its crucial role, the Indian criminal justice system faces numerous challenges, which impede its efficiency, effectiveness and fairness. These challenges range from outdated laws and procedural delays to issues related to corruption, overcrowded prisons, inadequate policing and the backlog of cases in courts.

India's criminal justice system is governed by a blend of laws, including the Indian Penal Code (IPC), Criminal Procedure Code (CrPC) and Evidence Act, among others. Over the years, these laws have undergone various amendments to meet the evolving needs of the society and address emerging criminal threats. However, the pace of these reforms has often been slow and they have struggled to keep up with the demands of modern-day society. Furthermore, despite the legal frameworks in place, the functioning of the system has often been marred by inefficiencies, delays and at times, systemic biases.

The criminal justice system in India operates under a complex and overburdened structure. Police stations across the country are understaffed, undertrained and overworked, which hampers their ability to effectively investigate crimes. Similarly, the judiciary, which is expected to deliver justice in a timely and transparent manner, is plagued by an enormous backlog of cases. It is estimated that there are millions of pending cases in the Indian judiciary, with many trials taking years or even decades to reach a conclusion. This delay in justice delivery has led to a phenomenon known as "justice delayed is justice denied," which undermines public faith in the system.

Moreover, the Indian criminal justice system is often criticized for its treatment of the marginalized and vulnerable sections of society. Issues such as police brutality, custodial deaths, caste-based discrimination and gender-based violence continue to plague the system, making it difficult for victims from disadvantaged backgrounds to seek justice. The conviction rate in criminal cases is often low, with many offenders walking free due to flaws in the investigation process or loopholes in the legal framework. These problems are further compounded by the existence of corruption within the police, judicial, and political systems, which prevents the law from being applied equitably.

Another critical issue is the overcrowding of prisons. India's prisons are operating well beyond their capacity, leading to poor living conditions, lack of proper healthcare and even violence among inmates. The prison system is unable to reform prisoners effectively and the rehabilitation of offenders remains a distant goal. The overcrowding issue is compounded by a lack of alternative sentencing mechanisms, such as community service or probation, which could help alleviate the burden on the prison system.

Despite these challenges, there have been several attempts to reform the Indian criminal justice

system. From the introduction of new laws and regulations to the establishment of special courts and fast-track mechanisms, various measures have been taken to address these challenges. The government's focus on digitization and the introduction of e-courts is a step in the right direction, aimed at speeding up the judicial process and increasing transparency. Additionally, numerous civil society organizations, activists, and legal experts have been pushing for comprehensive reforms to address the structural and systemic flaws within the system.

Criminal Justice System in India: Challenges and Measures :

The criminal justice system in India is one of the most significant pillars of governance, ensuring law and order in society. It is responsible for maintaining justice, upholding the rule of law, protecting the rights of individuals, and safeguarding public safety. The system is governed by several laws, institutions, and processes, but despite its crucial role, it faces numerous challenges. These challenges impact its effectiveness, leading to a backlog of cases, delays in trials and problems in achieving justice in a timely manner. However, efforts are continually being made to address these issues and reform the system.

Structure of the Indian Criminal Justice System :

India's criminal justice system is primarily based on the Constitution of India, which guarantees fundamental rights to every citizen. The framework consists of three key components :

- **Law Enforcement Agencies :** These include the police, who are tasked with maintaining law and order, investigating crimes and executing the arrests of accused persons.
- **Judiciary :** The judiciary, consisting of courts at various levels (district courts, high courts and the Supreme Court of India), plays the role of adjudicating criminal cases, ensuring fair trials and delivering judgments.
- **Correctional Facilities :** Prisons and reformatories are the places where those convicted of crimes serve their sentences. They also play a role in rehabilitating offenders to reintegrate them into society.

The Criminal Procedure Code (CrPC) and the Indian Penal Code (IPC) form the backbone of India's criminal justice system. These laws define the procedures and penalties for criminal offenses and are enforced through various institutions in the country.

Major Challenges in the Indian Criminal Justice System :

Despite having a well-established framework, the Indian criminal justice system faces several challenges that undermine its effectiveness and efficiency. These challenges include the following:

1. Delays and Backlog of Cases :

One of the most significant issues facing the criminal justice system in India is the

overwhelming backlog of cases. As of recent estimates, there are over 30 million pending cases in various courts across the country, with a significant portion of these cases being criminal. This has resulted in long delays in trials, causing frustration among the victims, accused persons and society at large.

The backlog is primarily due to :

- **Inadequate Infrastructure :** There are insufficient courts and judges to handle the ever-increasing number of cases.
- **Lack of Judicial Personnel :** India has one of the lowest judge-to-population ratios globally, with far fewer judges than needed to address the rising caseload.
- **Long Trial Processes :** Trials in India are often delayed due to adjournments, witness unavailability, bureaucratic hurdles and procedural inefficiencies.

This delay in the delivery of justice is often referred to as "justice delayed is justice denied," which undermines public faith in the system.

2. Police Reforms and Misuse of Power :

The Indian police force plays a pivotal role in the criminal justice system. However, the police often face criticism for inefficiency, corruption and misuse of power. Many police officers are undertrained, overworked and lack the necessary resources to investigate crimes thoroughly. In addition, there are widespread allegations of police brutality, custodial deaths and human rights violations.

The issues with the police force include :

- **Corruption :** Corruption in police departments hampers the fair investigation of crimes and the administration of justice.
- **Political Influence :** Political interference in police functioning often leads to the skewed application of the law, with biased investigations that can favor the rich and powerful.
- **Lack of Accountability :** There is often a lack of accountability for police officers who engage in illegal activities, leading to further erosion of public trust.

Police reforms are crucial to address these issues and ensure that law enforcement agencies uphold the rule of law impartially and effectively.

3. Overcrowded Prisons and Poor Conditions :

India's correctional facilities face significant challenges related to overcrowding and poor living conditions. With an increasing number of individuals being imprisoned, many jails are operating far beyond their capacity. The conditions in many of these prisons are substandard, with insufficient access to healthcare, education and basic amenities.

Overcrowding leads to :

- **Poor Prison Conditions :** Inadequate space, insufficient food, lack of sanitation and inadequate healthcare services are common in Indian jails.
- **Rehabilitation Challenges :** The overcrowding of prisons hinders efforts to rehabilitate offenders, leading to recidivism. Prisons should focus on rehabilitating offenders to prevent them from returning to a life of crime, but this is often not possible due to the conditions.
- **Increased Vulnerability :** Prisoners in overcrowded conditions are more vulnerable to exploitation, abuse and violence.

Reforming the prison system and improving conditions for prisoners is essential for the criminal justice system's success in rehabilitating offenders and reducing recidivism.

4. Judicial Corruption :

Judicial corruption is another critical issue within the Indian criminal justice system. While India's judiciary is considered to be independent, cases of judicial corruption have been reported. Corruption within the judiciary can lead to biased decisions, undermine public confidence in the system and result in wrongful convictions or acquittals.

- **Influence of Wealth and Power :** Wealthy individuals or influential figures may try to manipulate the judicial process, either through bribery or other forms of coercion.
- **Lack of Transparency :** In some cases, the lack of transparency in judicial processes can encourage corruption.

Efforts are being made to ensure greater transparency, accountability and ethical practices within the judiciary to eliminate these problems.

5. Inefficiencies in Legal Aid :

Access to legal aid is an essential aspect of ensuring justice for all, especially for marginalized sections of society. However, legal aid in India is often inefficient and many individuals do not have access to quality legal representation.

Key problems related to legal aid include :

- **Inadequate Legal Aid Services :** The quality and availability of legal aid are often limited, particularly in rural and underprivileged areas.
- **Bureaucratic Delays :** There are often delays in the allocation of legal aid, which can lead to further delays in cases.
- **Lack of Awareness :** Many people, particularly from lower socioeconomic backgrounds, are unaware of their right to free legal aid.

Improving legal aid services and ensuring that every citizen has access to competent legal

representation is a critical step toward achieving a fair and just system.

6. Inadequate Witness Protection :

Witnesses play a crucial role in ensuring that justice is served in criminal cases. However, witnesses in many cases face intimidation, threats, or even violence from perpetrators or other vested interests. This fear of retaliation often prevents witnesses from coming forward, which hampers the investigation and conviction process.

Inadequate witness protection programs and the fear of retribution are significant challenges that affect the quality of trials and undermine the justice system.

7. Gender-based Violence and Discrimination :

Gender-based violence, including sexual violence, remains a significant issue in India. The criminal justice system often faces criticism for its handling of cases involving sexual assault, domestic violence and other forms of gender-based discrimination. Women often find it difficult to report crimes due to social stigma, a lack of support, or fear of not being believed.

Challenges related to gender-based violence include :

- **Victim Blaming :** Often, victims of sexual violence face societal stigma and are blamed for the crimes committed against them.
- **Delayed Trials :** Cases of sexual assault and domestic violence are often delayed due to various procedural issues, leading to prolonged suffering for the victims.
- **Weak Enforcement of Laws :** Although laws related to sexual harassment, rape and domestic violence exist, they are not always enforced effectively, resulting in low conviction rates.

Strengthening the criminal justice system's approach to gender-based violence is essential to protect the rights of women and ensure that justice is served.

Measures for Reforming the Criminal Justice System :

Several steps can be taken to address the challenges facing the criminal justice system in India :

- **Judicial Reforms :** The creation of more courts, improving infrastructure and increasing the number of judges can help address the backlog of cases. The introduction of technology, such as virtual courts and e-filing, can further streamline the judicial process.
- **Police Reforms :** Implementing comprehensive police reforms to address corruption, improve training and ensure accountability is vital. The introduction of modern forensic methods and technological tools can improve investigations.
- **Prison Reforms :** Overcrowding in prisons must be addressed by decongesting the system, improving the quality of facilities and focusing on the rehabilitation of offenders. Programs for education, vocational training and psychological support can reduce recidivism.

- **Legal Aid Improvements :** Expanding the scope and reach of legal aid services, especially in rural and marginalized areas, can ensure that justice is accessible to everyone. Increasing public awareness about legal rights is also crucial.
- **Witness Protection :** Strengthening witness protection programs and ensuring that witnesses feel safe coming forward is critical to the successful prosecution of criminal cases.
- **Gender-sensitive Reforms :** The legal system must adopt more victim-centered approaches in cases of gender-based violence. The implementation of fast-track courts, ensuring proper training of law enforcement and judicial officers and providing support services for victims are essential steps.
- **Use of Technology :** Modernizing the criminal justice system with the use of technology can improve efficiency. This includes digitization of case records, use of AI for case management and improving communication between courts, police and correctional facilities.

CONCLUSION :

In conclusion, the criminal justice system in India faces numerous challenges, including delays in justice delivery, overcrowded prisons, inadequate police training and the slow pace of legal procedures. These issues not only hamper the effectiveness of the system but also erode public trust. However, several measures can be taken to address these challenges, such as introducing judicial reforms to speed up trials, modernizing the police force, increasing the use of technology in courts and improving prison conditions. Ensuring better training for law enforcement officers and adopting alternative dispute resolution mechanisms can also contribute to a more efficient and accessible justice system. With concerted efforts from the government, judiciary and civil society, India can overcome these obstacles and work towards a fairer, more efficient criminal justice system that upholds the rights of all citizens.

REFERENCES :

1. Agarwal, M. (2020) *Criminal justice system in India: Challenges and reforms*. Journal of Indian Law and Society, 15(2), 47-61.
2. Baxi, U. (2014) *The crisis of the criminal justice system in India*. Journal of Indian Law Review, 3(1), 19-30.
3. Bhattacharyya, D. (2019) *Challenges in the Indian criminal justice system: An analysis*. Journal of Criminal Law and Policy, 24(3), 115-132.
4. Ghosh, A. (2017) *Legal reforms and the criminal justice system in India*. Indian Journal of Legal Studies, 10(1), 21-38.
5. Indian Law Commission. (2018) *Report on the criminal justice system in India: Reforms*

and measures. Law Commission of India.

6. Muralidhar, S. (2016) *The state of criminal justice in India: A critical overview*. National Law University Journal, 14(2), 58-72.
7. Nair, P. K. (2021) *Prison reforms and the criminal justice system in India*. Indian Journal of Criminology, 36(4), 53-67.
8. Rajkumar, R. (2019) *Policing and the criminal justice system: Challenges in India*. International Journal of Criminal Justice, 19(1), 81-95.
9. Sharma, R. (2020) *Judicial delays and the Indian criminal justice system: Causes and solutions*. Journal of Law and Governance, 22(1), 1-14.
10. Srivastava, A., & Sharma, M. (2022) *Modernizing the criminal justice system: The need for legislative reform in India*. Indian Journal of Law and Society, 18(2), 45-60.

Corresponding Author :
Pratap Singh,
Email: advocateps05@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 159-163

A FEMINIST ANALYSIS OF FEMALE CHARACTERS IN VIJAY TENDULKAR'S PLAYS

BHOIR PRANJAL PRAJVAL KALPANA,
Dr. ANSHU SHARMA
DEPARTMENT OF ENGLISH, SHRI JAGDISHPRASAD JHABARMAL
TIBREWALA UNIVERSITY, VIDYANAGARI, JHUNJHUNU, RAJASTHAN

Abstract :

This paper examines the representation of female characters in the plays of Vijay Tendulkar, a seminal figure in modern Indian theater. By employing a feminist lens, the analysis reveals how Tendulkar critiques the patriarchal structures embedded within Indian society. His female characters, often portrayed as complex and multifaceted individuals, serve as both victims and agents of resistance against societal norms. Through plays such as *Ghashiram Kotwal*, *Kanyadaan*, and *Silence! The Court is in Session*, Tendulkar explores themes of oppression, sexual politics, and the quest for identity, highlighting the struggles and resilience of women in a male-dominated world. This study argues that Tendulkar not only reflects the societal constraints faced by women but also advocates for their empowerment and autonomy. By delving into the dynamics of power, gender, and societal expectations, this analysis contributes to a deeper understanding of the feminist discourse within Indian literature and the significant role of Tendulkar's work in challenging traditional narratives.

Keywords : Feminist, Analysis, Female Characters, Vijay Tendulkar's Plays

INTRODUCTION :

Vijay Tendulkar, a luminary in contemporary Indian theater, has made significant contributions to the dramatic arts through his incisive portrayal of social issues, particularly concerning gender dynamics. His plays often delve into the complexities of human relationships and societal structures, reflecting the harsh realities of life in post-independence India. Tendulkar's exploration of female characters is particularly noteworthy, as he adeptly unveils the multifaceted roles women play within

patriarchal society. This analysis aims to unpack the feminist dimensions of female characters in Tendulkar's works, emphasizing how they navigate their identities, resist oppression, and assert their agency against the backdrop of cultural and societal constraints.

To understand Tendulkar's portrayal of female characters, it is essential to contextualize his work within the framework of feminist theory. Feminism, at its core, advocates for the social, political, and economic equality of the sexes. It examines the power dynamics that perpetuate gender-based oppression and seeks to highlight the voices and experiences of women that have historically been marginalized. Tendulkar's plays emerge during a time when feminist movements in India were gaining momentum, advocating for women's rights, education, and empowerment. The socio-political landscape of India during the late 20th century, marked by movements for social justice and gender equality, influenced Tendulkar's artistic vision and thematic choices.

Female Characters in Tendulkar's Plays :

- **Sakharam in "Sakharam Binder"**

In "Sakharam Binder," Tendulkar presents Sakharam, a complex female character who defies traditional gender roles. She is a widow who takes on the responsibility of her own life and decisions, showcasing her independence. However, her relationship with Sakharam exposes the darker aspects of her struggle. The play critiques the patriarchal norms that dictate women's lives, illustrating how Sakharam's strength is often undermined by societal expectations.

Sakharam is emblematic of the women who must navigate a male-dominated world. Her resilience and ability to assert her desires contrast sharply with the limitations imposed upon her by society. Tendulkar's portrayal of her character reveals the intricacies of female agency and the oppressive nature of societal norms.

- **Indumati in "Ghashiram Kotwal"**

Indumati, the daughter of Ghashiram, is another compelling female character in "Ghashiram Kotwal." Her character embodies the conflict between tradition and modernity. She is torn between her loyalty to her father and her desire for autonomy. Tendulkar uses Indumati to explore the theme of female sexuality and the societal constraints that inhibit women from expressing their desires.

Indumati's journey reflects the struggles of women who are often caught between familial obligations and personal aspirations. Her character serves as a critique of the patriarchal system that restricts women's freedom and highlights the need for agency in the face of societal pressures.

- **Mina in "Kanyadaan"**

In "Kanyadaan," the character of Mina represents the ideal of a modern Indian woman. She is educated, assertive, and seeks to carve her own path in a society that often seeks to confine women to

traditional roles. Mina's love story with a man from a different caste explores the complexities of love, identity, and societal acceptance. Her character is a testament to the evolving nature of women's roles in contemporary society.

Tendulkar uses Mina's character to challenge the caste system and highlight the struggles of women in negotiating their identities within it. Her strength and determination to pursue her dreams despite societal backlash underscore the importance of female agency in the quest for equality.

- **Kamla in "Kamala"**

Perhaps one of Tendulkar's most striking portrayals of a female character is Kamla in the play "Kamala." The story revolves around Kamla, a tribal woman who is objectified and commodified. Through her character, Tendulkar critiques the exploitation of women and the dehumanizing aspects of patriarchal society. Kamla's situation is a powerful commentary on the intersection of gender and class, illustrating how societal structures can strip women of their humanity.

Kamla's struggle for dignity and recognition reflects the harsh realities faced by many women in society. Tendulkar's exploration of her character highlights the urgent need for social reform and the recognition of women's rights. Kamla embodies the resilience of women who fight against oppression, making her a powerful symbol of resistance.

- **Tukaram's Wife in "Tughlaq"**

In "Tughlaq," the character of Tukaram's wife provides a nuanced perspective on the impact of political power on women's lives. Although she plays a minor role, her presence is significant in illustrating how political upheaval affects the domestic sphere. Through her character, Tendulkar highlights the often-overlooked experiences of women in times of political turmoil.

Her struggles reflect the broader societal changes occurring in India and the often-ignored perspectives of women in historical narratives. Tendulkar's portrayal of her character emphasizes the importance of recognizing women's experiences in the context of political change.

Themes and Issues :

Gender and Power :

Tendulkar's female characters often confront and challenge the patriarchal structures that seek to control them. Through their narratives, he highlights the complexities of gender relations and the struggles for power and autonomy. These women embody the fight against societal constraints and represent the resilience required to navigate oppressive systems. Their journeys reveal the nuanced dynamics of power and the ways in which women negotiate their identities within them.

Identity and Social Class :

The intersection of gender and class is a recurring theme in Tendulkar's works. His female

characters often grapple with their identities in relation to their social status. For instance, Kamla's portrayal underscores the exploitation faced by women from marginalized communities, while Mina's character reflects the challenges of upward mobility and social acceptance. Tendulkar uses these characters to critique the rigid social hierarchies that shape women's lives and to advocate for a more equitable society.

Sexuality and Agency :

Tendulkar's female characters also navigate issues of sexuality and desire, challenging societal norms around female sexuality. Indumati's struggles with her desires and societal expectations highlight the complexities of women's sexuality in a patriarchal context. Similarly, Mina's pursuit of love across caste lines emphasizes the importance of agency and choice in matters of the heart. Through these characters, Tendulkar explores the ways in which women assert their desires and navigate the challenges imposed by society.

Conclusion :

In conclusion, Vijay Tendulkar's exploration of female characters in his plays offers a rich tapestry for feminist analysis. His nuanced portrayal of women grappling with societal expectations, subverting gender norms, and navigating complex power dynamics provides a profound commentary on the status of women in contemporary Indian society. Through a lens of intersectionality and diversity, Tendulkar's works invite readers and audiences to reflect on the challenges faced by women from various backgrounds, ultimately advocating for a deeper understanding of their experiences and struggles.

Tendulkar's contributions to feminist discourse in literature and theater remain relevant, as they resonate with ongoing conversations about gender equality and women's rights in India and beyond. As we continue to engage with his works, we are reminded of the importance of amplifying women's voices and experiences, fostering empathy and understanding in the pursuit of social justice and equality. This analysis seeks to shed light on the complexity of Tendulkar's female characters, contributing to a broader dialogue on feminism and the representation of women in literature. Through a careful examination of his plays, we uncover not only the challenges faced by women but also their resilience, agency, and capacity for transformation within a patriarchal society.

In the subsequent sections, we will delve into specific plays, analyzing the portrayal of female characters in depth, exploring their struggles, triumphs, and the implications of their narratives in the context of feminist theory. This exploration aims to illuminate the enduring significance of Tendulkar's work and its relevance in contemporary feminist discourse, highlighting the intricate interplay between

gender, culture, and society in shaping women's identities and experiences.

REFERENCE :

1. Das, K. (2016). Gender and the power of speech in Vijay Tendulkar's plays. Journal of Language and Literature, 7(1), 12-20. https://doi.org/10.15640/jll.v7n1a2
2. Deshpande, S. (2006). Vijay Tendulkar: A playwright of social consciousness. In J. A. R. V. Arora & N. G. R. Varma (Eds.), Modern Indian Drama: A Critical Anthology (pp. 115-128). New Delhi: Sahitya Akademi.
3. Khatri, A. (2020). Feminism in Tendulkar's Sakharam Binder: A critical analysis. The Indian Journal of English Literature, 5(2), 56-67.
4. Kher, S. (2014). The representation of women in Vijay Tendulkar's plays: A feminist perspective. International Journal of Research in Humanities, Arts and Literature, 2(4), 43-50.
5. Mukherjee, A. (2007). Subversion of patriarchy in Tendulkar's Ghashiram Kotwal. Journal of Indian Writing in English, 35(1), 23-30.
6. Naik, M. (2013). Feminist themes in the plays of Vijay Tendulkar. Indian Journal of Modern Drama Studies, 8(1), 33-42.
7. Pandey, R. (2015). The female voice in Tendulkar's theatre: A feminist critique. *The* Criterion: An International Journal in English, 6(1), 234-241.
8. Sinha, D. (2019). Voices of resistance: Feminism and female characters in Vijay Tendulkar's plays. Journal of South Asian Literature, 54(2), 83-98.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 164–168

इक्कीसवीं सदी की स्त्री कविताओं में प्रतिरोध का स्वरूप

चंद्रकांत यादव, शोधार्थी
डॉ. दीनानाथ मौर्य, शोध निर्देशक
हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

स्त्रियों की सामाजिक स्वतंत्रता, पुरुषों की बराबरी, आरक्षण तथा अन्य अधिकारों को लेकर पुरुषों का स्त्रियों के प्रति जो विचार और नजरिया है उसको लेकर हिंदी कविता में एक प्रतिरोध है। स्त्रियां शताब्दी–दर–शताब्दी शोषित होती रही हैं। कभी किसी युद्ध का कारण बनी तो कभी वह संपत्ति या वस्तु की तरह समझी गई। कभी पुरुषों के मनोरंजन हेतु समझी गई तो कभी श्रृंगार के निमित्त समझी गई। रीतिकाल में स्त्रियों की स्थिति श्रृंगार विशेष रूप में वर्णित है। इसी कारण विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने रीतिकाल को श्रृंगार काल ही कहा है। इससे स्पष्ट होता है कि रीतिकाल में स्त्रियों को केवल श्रृंगार का प्रतिरूप समझा गया। पुरुषों की बराबरी और स्वतंत्रता उनके लिए एक स्वप्न था। समय बढ़ता गया परंतु उनकी स्थितियों में कोई सुधार नहीं हुआ। विभिन्न कालों में कविताएँ लिखी तो गई परंतु केवल स्त्रियों के सहानुभूति में, प्रतिरोध की शायद ही कहीं एकाध कविता दिखी हो। छायावाद की महीयसी कवयित्री महादेवी ने अपनी आलोचना के माध्यम से स्त्रियों के पक्ष में क्रांतिकारी कार्य किया। उसके पश्चात तमाम कवि और कवयित्रियों ने स्त्री समर्थन और प्रतिरोध की कविताएँ लिखी और स्त्रियों–महिलाओं को पुरुषों और समाज की दासता से मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करने का प्रयास किया है। वर्तमान समय में स्त्रियों के संदर्भ में जिस प्रकार की कविताएँ लिखी जा रही हैं उसमें स्त्रियों का जो स्वर है उनमें बदले हुए तेवर दिखाई देते हैं। आज इक्कीसवीं सदी में स्त्रियों के समर्थन में प्रतिरोधी चरित्र की कविताएँ लिखीं जा रही हैं। ऐसी लेखिकाओं में अनामिका, कात्यायनी, गगन गिल, नीलेश रघुवंशी पद्मा सचदेव व निर्मला पुतुल आदि प्रमुख कवयित्रियाँ हैं।

इक्कीसवीं सदी की प्रमुख कवयित्रियों में अनामिका जी एक प्रमुख हस्ताक्षर हैं। स्त्री विमर्श पर उनका लेखन अद्‌भुत और बेजोड़ है। अनामिका जी की कविता 'बेजगह' एक शांत प्रतिरोध की कविता है जहाँ लड़का–लड़की, स्त्री–पुरुष में फर्क साफ दिखाई देता है। समाज की दो आँखें हैं जो लड़कों के लिए अलग और लड़कियों के लिए अलग रवैया अपनाता है। पुरुष प्रधान समाज में उस रवैया और मानसिकता को इन्होंने 'बेजगह' कविता में व्यक्त किया है। यह समाज लड़कों को पढ़ने, खेलने, घूमने और सोने के लिए अलग कमरा जैसी सारी सुविधाएँ उपलब्ध कराती है। वही लड़कियों को खाना बनाने, झाड़ू–पोछा, घर गृहस्थी के जिम्मेदारियों तक ही सीमित समझता है। इसके बावजूद उन्हें घर का एक कोना भी नसीब नहीं होता। इस भेदभाव का प्रतिरोध कवयित्री ने अपनी कविता बेजगह के माध्यम से किया है :

"याद था हमें एक एक अक्षर / आरम्भिक पाठों का –
राम, पाठशाला जा ! / राधा, खाना पका
राम, आ बताशा खा! / राधा, झाड़ू लगा
भैया अब सोएगा! / जाकर बिस्तर बिछा
अहा, नया घर है! / राम देख यह तेरा कमरा है / 'और मेरा?'
ओ पगली / लड़कियाँ हवा, धूप, मिट्टी होती है
उनका कोई घर नहीं होता।"[1]

कात्यायनी जी चर्चित कवयित्री हैं जिन्होंने अपने लेखन से स्त्रियों के लिए एक नए आयाम प्रदान किए हैं। अपनी कविता सात भाईयों के बीच चंपा कविता के माध्यम से उन्होंने स्त्री विरोधी मान्यताओं के प्रतिरोध का जो आख्यान रचती हैं वह विलक्षण है। चंपा रूपक के माध्यम से उन्होंने स्त्री महिलाओं तथा लड़कियों के प्रतिरोध का विधान रचती हैं वह काबिले तारीफ है। सात भाइयों के बीच चंपा अपने पिता और भाइयों के लिए काली छाया की तरह थी। जिसे वे अपने लिए बोझ समझते थे। समाज में हर घर में जन्मी चंपा से मुक्त होने के लिए समाज उनके साथ क्या क्या नहीं करता बल्कि हर घृणित कार्य करता है फिर भी चंपा इस बार चंपा पुष्प रूप में नहीं बल्कि अमरबेल के रूप में प्रस्तुत है। 21वीं सदी में वह अब पूरे मजबूती से उपस्थित है–

"सात भाइयों के बीच / चंपा सयानी हुई।
ओखल में धान के साथ / कूट दी गयी।
भूसी के साथ कूड़े / पर / फेंक दी गयी।
वहाँ अमरबेल बनकर उगी / झरवेरी के सात कँटीले झाड़ों के बीच /
चंपा अमरबेल वन सयानी हुई / फिर से घर आ धमकी"।[2]

पुरुष सत्तात्मक समाज में स्त्रियों का स्थान हमेशा पुरुषों से नीचे ही रहा है। समाज की मानक कसौटी भी केवल पुरुषों को ही श्रेष्ठ बताता रहा है। परिवार की सबसे प्रमुख इकाई भी पुरुष वर्ग ही रहा है। चाहे वहाँ संपत्ति की बात हो निर्णय लेने की बात हो, अधिकार की बात हो, सब पुरुषों की मानी जाती है। इस समाज ने स्त्रियों के साथ हमेशा छल ही किया है और ताज्जुब की बात है की स्त्रियाँ भी छलती आई है। इसका प्रभाव स्त्रियों के जन्म से ही दिखाई देता है। पुरुष वर्ग का स्त्रियों पर पुरूष वर्ग का दबाव बना ही रहा है जिसके कारण एक स्त्री को दूसरे स्त्री के खिलाफ होना पड़ा और उनसे दूरी बनानी पड़ी। इस प्रकार स्त्रियाँ एक दूसरे के लिए अभिशाप हो गयी। घर परिवार में स्त्रियों के जन्म लेने भर मात्र से पूरे परिवार को डंक मर जाने वाली स्थिति हो जाती है। इसी कारण स्त्रियाँ भी अपने गर्भ से पुरुषों की कामना करती है और पुत्री के जन्म लेने से डरती है। आज भी एक स्त्री एक स्त्री के खिलाफ है। समाज ने उन्हें मानसिक रूप से एक स्त्री को एक स्त्री के खिलाफ करने को मजबूर किया है। समाज की यह मानसिकता परम्परा के रुप में स्थापित हो गई। इस तरह पुरुष समाज ने उन्हें इस परंपरा का वाहक बना दिया। इसलिए नीलेश रघुवंशी जी अपनी कविता में लिखती है कि–

"एक स्त्री ने स्त्री को जन्म दिया
स्त्री की स्त्री से नाल एक स्त्री ने काटी

एक स्त्री ने स्त्री को जमीन में गाड़ दिया
पितृसत्ता का कैसा भयानक कुचक्र कि
स्त्री ने ही स्त्री का समूल नाश किया।"[3]

इस प्रकार नीलेश रघुवंशी जी अपनी कविता के माध्यम से पितृसत्ता को कोसती है। यह पितृसत्ता का जहर समाज में ऐसा घुला हुआ है कि स्त्रियाँ बिना किसी अपराध के भी अपराधी हो गयी। लड़की जन्मने पर कलंकिनी और कुल नाशक के रूप में जानी गयी। इस पुरुष समाज ने एक स्त्री को मानव से कलंकिनी, हत्ध्यारिन और डाकिनी बना दिया, वरना एक स्त्री दूसरी स्त्री की हत्या क्यों चाहेगी। अपनी इस कविता के द्वारा कवयित्री ने समाज के पुरुष वर्ग का विरोध किया है।

इस युग में कवि और कवयित्रियों ने अपने कविताओं के माध्यम से इसके खिलाफ प्रतिरोध दर्ज कराया है। वरिष्ठ कवयित्री अनामिका जी ने अपनी कविता 'पचास बरस' में उन्होंने स्त्रियों के दुर्गति का चित्रण किया है। हमारे समाज की स्त्रियाँ किस बोझ तले और किस विचारधारा तले दबी हुई है जो अपनी आत्मा, देह और अपने अस्तित्व को भुलाकर जाने किस उद्देश्य के लिए अपनी आहुति दे रही है। इस नई सदी में एक स्त्री को एक स्त्री की भांति जीवन जिए कई वर्ष हो गए होंगे। जिसका जिक्र अपनी कविता में करती है । कवितांश कुछ इस प्रकार है–

"वह न पद्मावती थी, न हेलेन, न क्लियोपेट्रा!
नहरे खिंच आई थी उसके आँखों के नीचे,
क्या जाने कौन खेत थे जो उन्हें सींचने थे!"[4]

कार्यों के बोझ और पुरुष प्रधान समाज के नियमों से दबी–शोषित स्त्रियां जिनमें न सजने–सँवरने का शौक बचा है और न ही उनके आँखों में सुख चौन की नींद बची। पारिवारिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए उन्हें स्वयं के सुख दुःख का ध्यान नहीं रहा। अनामिका जी पूरे पुरुष समाज से स्त्रीत्व की परिभाषा पूछती हैं कि क्या जीवनभर घर– परिवार की करना और बेसुध होकर घर परिवार को जिम्मेदारी को उठाना और घर के लिए ही जीना और घर के लिए ही मरना ही स्त्रीत्व है? और यह आज भी बदस्तूर जारी है। चारु गुप्ता जी लिखती हैं कि "पिछली लगभग एक शताब्दी से स्त्री मुक्ति आंदोलन की सशक्त उपस्थिति के बावजूद इस शताब्दी की शुरुआत में भी दुनिया भर में लाखों स्त्रियाँ अपने बुनियादी अधिकारों से वंचित हैं। मर्दवाद और पितृसत्ता ने असमानता और दमन का सिलसिला जारी रखा है।"[5]

स्त्री समाज की आधी दुनिया का जीवन भी कुछ इसी प्रकार बीत रहा था। ऐसे में निर्मला पुतुल जी की कविता की उक्ति श्रेष्ठ प्रतिरोध व्यक्त करती है जो इस नयी सदी के पुरुष और पुरुषसत्तात्मक समाज को फटकारती है। कवयित्री निर्मला पुतुल जी स्त्रियों के आधी दुनिया के संसार, दुःख और अस्तित्व का बोध कराती है, जहाँ एक स्त्री को न मायके में जगह मिलता है, न ससुराल में, न समाज में न परिवार में, न बाजार में, न शहर में, न गाँव में, न घर में, कहीं इज्जत नहीं मिलता है। स्त्री को मानसिक यंत्रणा झेलनी पड़ी और वे सदैव मानसिक यंत्रणा की शिकार हुई है। स्त्री समाज अपना अस्तित्व खोजती हुई निराश ही हुई है। उनका कोई निश्चित ठौर ठिकाना नहीं है। इस बात को कवयित्री निर्मला पुतुल जी अपनी कविता में अभिव्यक्त करती हैं। कविता कुछ इस प्रकार है–

"बता सकते हो
सदियों से अपना घर तलाशती
एक बेचैन स्त्री को
उसके घर का पता?"[6]

इसके अतिरिक्त स्त्रियों के पक्ष में प्रखर प्रतिरोध करने वाले कवि रमाशंकर यादव 'विद्रोही' की कविता 'औरत' है जो शताब्दियों से शोषित हो रही स्त्रियों का आख्यान है। यह कविता शोषित हो रही स्त्रियों के हिमायती और समाजक अभिभावकीय रुप में है। वे न केवल स्त्रियों के प्रति पुरुष और पुरुष सत्तात्मक समाज के दोहरे चरित्र को प्रदर्शित करते है, बल्कि उनके कलुषित विचारों व नियमों की अवहेलना करते है। साथ ही उन कुरीतियों और रुढियों का भी विरोध करते है। वे अपनी कविता 'औरत' में आदिकाल से वर्तमान काल तक की यात्रा तय करते हुए सामाजिक नियमों को सवालों के कटघरे में खड़ा करते हैं। ऐसे सामाजिक नियमों के विद्रूपता, विषमता को प्रदर्शित करते हैं। उनकी इस कविता में कमोबेश विरोध की ज्वाला भी फूट पड़ती है। कविता कुछ इस प्रकार है –

"इतिहास में वह पहली औरत कौन थी
जिसे सबसे पहले जलाया गया
मैं नहीं जानता/लेकिन जो भी रही होगी
मेरी माँ रही होगी
लेकिन मेरी चिंता यह है कि/भविष्य में
वह आखिरी औरत कौन होगी
जिसे सबसे अंत में जलाया जायेगा
मैं नही जनता
लेकिन जो भी होगी
मेरी बेटी होगी–
मैं यह होने नहीं दूँगा।''[7]

विद्रोही जी अपने इसी प्रतिरोधी चरित्र की कविता के माध्यम से स्त्रियों के खिलाफ होने वाले बर्बर अत्याचार को रोकना चाहते हैं। वे इसे खत्म करना चाहते हैं। स्त्री–पुरुष को बराबर और स्त्रियों के ऊपर हुए अत्याचार, जुल्म और स्त्री विरोधी रूढ़ियों को खत्म करना चाहते हैं। हिन्दी साहित्य के आरम्भ से लेकर बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक भारतीय समाज में स्त्रियों के बारे में जो मानक तैयार किया गया था, अब वह पूरी तरह से खारिज किया जा रहा है। स्त्रियों ने पुरूष सत्तात्मक समाज द्वारा बनाई हुई परम्परा को तोड़ते हुए प्रतिरोध के मार्ग की ओर रुख किया है। उन्होंने अपने खिलाफ अबतक हो रहे षडयंत्र की वास्तविकता को पहचान लिया है। वे जागरुक भी हैं और और सचेत भी। वे इस बाबत आंदोलनों पर है कि उन्हें भी इस समाज का ही मनुष्य समझा जाए जिसमें पुरूषों की ही भांति सभी सामाजिक अधिकार प्राप्त हो। कवि 'आत्मचेतस स्त्रियाँ' कविता में लिखते हैं कि–

"जनता की मूर्तियां तोड़कर

निकल आयी है बाहर, पूरी तरह सचेष्ट
धरना दे रही हैं पुरुषों के दिमागों में
मांग है कि उन्हें भी मनुष्य समझा जाये।''[8]

इस नई सदी में स्त्रियों या महिलाओं के संदर्भ में प्रतिरोधी चरित्र की रचनाएँ न केवल कवयित्रियों ने वरन कवियों ने भी तमाम रचनाएँ की है। उदाहरण हेतु सुभाष राय जी की कविता 'आत्मचेतस स्त्रियाँ', अरुण कमल जी की कविता 'एक नवजात शिशु को प्यार', राजेश जोशी की कविताएँ 'रैली में स्त्रियाँ' या फिर आलोकधन्वा की कविता 'भागी हुई लड़कियाँ, आदि कविताएँ स्त्री संदर्भ की प्रतिरोधी चरित्र की कविताएँ हैं जो 21वीं सदी प्रमुख रचनाएँ हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अनामिका, खुरदुरी हथेलियाँ, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली,पहला संस्करण 2024, पृष्ठ 15,16
2. कात्यायनी, सात भाइयों के बीच चम्पा, परिकल्पना प्रकाशन, लखनऊ, संस्करण 2020, पृष्ठ 29
3. रघुवंशी, नीलेश, खिड़की खुलने के बाद, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2004
4. अनामिका, अनुष्टुप, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2019, पृष्ठ 71
5. उपाध्याय, रमेश, (संपादक), आज का स्त्री आंदोलन, शब्द संधान प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2011, पृष्ठ 48
6. पुतुल, निर्मला, नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण 2012, पृष्ठ 01
7. यादव, रमाशंकर (विद्रोही), नयी खेती, नवारुण प्रकाशन, गाजियाबाद, दूसरा संस्करण 2018, पृष्ठ 41
8. राय, सुभाष, सलीब पर सच, बोधि प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण 2018, पृष्ठ 100

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 169-172

वेद प्रतिपाद्य ब्रह्म, साक्षात्/परम्परया मौलिक विश्लेषण

डॉ. राधेश्याम मिश्र
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग,
केन्द्रीय हिमालयीय संस्कृति शिक्षण संस्थान, दाहुंग, (संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार) अरूणाचल प्रदेश।

संक्षेपिका

सहस्त्रशीर्षा पुरुष सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात्।
स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्।।
पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।[१]

श्रुतियों के आधार पर आचार्य महर्षि वेदव्यास ने वैदिक वाङ्मय को संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् इन चार भागों में विभक्त किया गया है। विश्व के समस्त विषयों का गहन विचार वैदिक वाङ्मय में प्राप्त होतें हैं। विचारों के वैविध्य और विषयों की अनेकता होते हुए भी समस्त वेदों का वेद्य परमात्मतत्व ही है।महावाक्यों के अखण्डार्थबोध में चारों वेदों से क्रमशः तत्वमसि,प्रज्ञानं ब्रह्म,अहं ब्रह्मास्मि, और अयमात्मा ब्रह्म को संग्रहीत किया गया है। वैदिक संहिताओं और उपनिषदों में प्रतिपाद्य विषय की एकवाक्यता है।प्रस्थानत्रयी के भाष्यकारों और टीकाकारों ने वैदिक संहिताओं से सन्दर्भो को उद्धृत करके अपने अपने मतवादों ओर विचारों को पुष्ट करते हुए गौरव की अनुभूति करते हैं।

विषय–वैदिक वाङ्मय के अन्तर्गत विश्व का कोई भी ऐसा विषय नहीं है जिस पर गहन विचार प्राप्त न होता हो।विषयों की विविधता और व्यापकता की जटिलताओं को ध्यान में रहकर आचार्य महर्षि वेदव्यास ने वेद को चार भागों में विभक्त करके प्रस्तुत किया । आचार्य महर्षि वेदव्यास के इस विभाजन का सुस्पष्टाधार कठोपनिषद् में वर्णित है।उपनिषद् की यह श्रुति वेद के विषय को चार भागों में विभक्त कर रही है।

क–चारों वेदों को सत्यरुप में जानना।

ख–सभी प्रकार के कर्मो का विचार करना।

ग–उपासना का विचार

घ–ऊँ विषयकविचार और उसका ज्ञान करना।

अर्थात् विज्ञान और ज्ञान का बोध वैदिक वाङ्मय का अभिप्राय है। विज्ञान के अन्तर्गत विश्व के समस्त पदार्थों का यथार्थ बोध जिसका विवेचन वैदिक संहिताओं में आता है। कर्म या कर्मकाण्ड जिसका विशेष विवेचन ब्राह्मण–ग्रन्थों में किया गया है तथा उपासना अथवा भक्ति जो आरण्यकों का विवेच्य विषय और ज्ञान के अन्तर्गत परमात्मा का विचार जिसका विवेचन उपनिषदों का प्रतिपाद्य है।इन विभागों कों संहिता ,ब्राह्मण,आरण्यक और उपनिषदों के रुप में प्रस्तुत किया जाता है ।इस विभाग के आधार पर ऐसा प्रतीत होने लगा कि ये चारों विभाग चार अलग–अलग विषयों के प्रतिपादन में लगे हैं। जहाँ संहिताओं में देवताओं की स्तुतियाँ ,ब्राह्मणग्रन्थों में कर्मकाण्ड सम्बन्धी विवेचन किया गया है वहीं आरण्यक ग्रन्थों में कर्म एवं भक्ति का समुच्चय तथा वेदान्त या उपनिषदों में परमात्मा विषयक विचार किया गया है।सूक्ष्मरुप से विचार करनें पर यह पुनः स्पष्ट होता है कि संहिताओं ,ब्राह्मणग्रन्थों और आरण्यकों का वर्ण्य–विषय उपनिषद् वाङ्मय के वर्ण्य–विषय से पृथक् हैं।इस पृथकता को मनीषियों ने कर्मकाण्ड और ज्ञानकाण्ड के नाम से दो स्वरुपों में उपदिष्ट किया है। इसे ही पूर्वमीमांसा और उत्तरमीमांसा तथा अपरा परा विद्या के नाम से विभूषित किया जाता है।परवर्ती आचार्यों ने इस विषय को प्रबल किया जाता है।परवर्ती आचार्यों ने इस विषय को प्रबल आधार प्रदान करते हुए पृथक्–पृथक् सूत्र ग्रन्थों की रचना करके यह सुस्पष्ट कर दिया है कि वेद को कर्म और ज्ञान इन दो भागों में प्रमुखता से विभक्त माना गया है।[२]

आचार्य जैमिनि ने जैमिनि सूत्र या मीमांसासूत्र का " अथातो ब्रह्मजिज्ञासा" से आरम्भ करके कर्मकाण्ड विषय का विवेचन किया है।आचार्य जैमिनि की यह अवधारणा है कि वेद के प्रत्येक वाक्य कर्मकाण्ड का ही बोध कराते हैं।जिन वेदवाक्यों में कर्मकाण्ड का उपदेश प्राप्त नहीं होता है वे अनर्थक हैं।[३]चूँकि वेदवाक्य परमात्मा के श्वास–प्रश्वास से उद्धृत हुए हैं।अतःउनमें आनर्थक्य का प्रसंग मानना सर्वथा असंगत है।

वेदों का परम प्रतिपाद्य कहीं साक्षात् एवं कहीं परम्परया ब्रह्म ही है–

"यस्मान्न जातःपरोऽअन्योऽअस्ति यऽआविवेश भुवनानि विश्वा।

प्रजापतिः प्रजया संरराणत्रीणि ज्योतीषि सचते स षोडशी"।।[४]

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्।

पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धःस्वस्तये।।[५]

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्यजातः पतिरेक आसीत्।

स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।[६]

अभि त्व शूर नोनुमोऽदुग्धा इव धेनवः।

ईशानमस्य जगतः स्वदृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः।।

न त्वावा अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते।

अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे।।[७]

उपयुक्त वेदमन्त्रों का भाषानुवाद क्रमशः –जिस परब्रहम से अन्य दूसरा कोई भी उत्तम पदार्थ प्रगट नहीं है,जो सब जगह व्याप्त हो रहा है,वही समस्त संसार का पालक/अध्यक्ष है।अग्नि,सूर्य और विद्युत इन तीन ज्योतियों को प्रजा के प्रकाश होने के लिए जिसने बनाया है और जिसका नाम षोडशी है।

अर्थात्–चराचर के स्वामी यजमान की बुद्धि को प्रसन्न करने वाले उस सर्वेश्वर को हम लोग रक्षा के लिए पुकारते हैं।जिसके द्वारा हमारा भरण–पोषण किया जाता है।रक्षा करने वाला वह परमेश्वर हम लोगों के कल्याण के लिए हो।

अर्थात्–सर्वप्रथम प्रजापति हुए और उत्पन्न होते ही जगत् के एकमात्र स्वामी हो गये ।उन्होंने ही भूलोक और द्युलोक को व्यवस्थापित किया।

अर्थात्–इसी प्रकार अधः– श्लोक के द्वारा भी उसी परमात्मा का वर्णन किया गया है।

को अद्धा वेद क इह प्र वोचत्कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः।

अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथ को वेद यत् आबभूव।।[८]

न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते।

न पञ्चमो न षष्ठ सप्तमो नाप्युच्यते।।

नाष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते।

तमिदं निगतं सहः स एष एक वृदेक एव।।

सर्वे अस्मिन्देवा एकवृतो भवन्ति।।[९]

स नो बन्धुजनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।

यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीय धामन्न ध्यैरयन्त।।[१०]

अर्थात् सभी मनुष्यों को यह जानना चाहिए कि परमेश्वर ही हमारा बन्धु बान्धव हैं सभी प्रकार का दुःख दूर करने वाला है।वही सब कामों को उत्पन्न करता है। मनीषी लोग मोक्ष प्राप्त करके तृतीय धाम अर्थात् उसी परमात्मा के साथ सर्वोत्तम सुख को प्राप्त होते हैं।ऋग्वेद संहिता में मुक्ति विषयक इस प्रकार के विचार युक्त नाना मन्त्रों का उल्लेख मिलता है[११]

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।

समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।[१२]

सम्प्रति नैतिकता,धर्म और श्रम निष्ठा पर आधारित वैदिक धर्म अनेक प्रकार की विषमता,वैमनस्य,कटुता से सन्त्रस्त मानवता की रक्षा कर सकता है।वेद समाज में सुख शान्ति एवं ऐश्वर्य की भागीदारी प्रवाहित करना चाहता है।अतः हमें सत्य सनातन आर्यधर्म के प्राणप्रद संदेशों के मौलिक सिद्धान्तों को मनसा वचसा कर्मणा अपनाये बिना और उनके आधार पर भारतीय समाज का पुनः निर्माण किए बिना हम उसके प्रकाशमान स्वरुप को जगत् के सामने प्रकट नहीं कर सकते।इन सिद्धान्तों को अपनाने की हमें नूतन दृढ प्रतिज्ञा इन शब्दों में करनी चाहिए–

ऊं ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृथ्वी ध्रुवं विश्वमिदं जगत्।

ध्रुवसः पर्वता इमे ध्रुवा स्याम व्रते वयम्।।

सन्दर्भ–

[१] –यजुर्वेद

[२] विदन्तेगिः धर्ग ब्रह्मणि इति वेदः।

[३] जैमिनिसूक्त1/2/1 आम्नायस्य क्रियार्थत्वादानर्थक्यमतदर्थानाम्।

[४] –यजुर्वेद8/36

[५] –ऋग्वेद,विश्वदेवासूक्त मन्त्र–05

[६] –ऋग्वेद–अध्याय/8 मन्त्र/1

[७] –सामवेद–उत्तरार्चिक

[८] –ऋग्वेद–10/129/मन्त्रसंख्या11

[९] –अथर्ववेद–/अनुवाक्/4/मं 16–18–20–21

[१०] –यजुर्वेद/अध्याय 8/मं1

[११] –यज्ञेन यज्ञं यजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वेसाध्याः सन्ति देवाः।।ऋग्वेद2/27/11

[१२] –तैत्तिरीयोपनिषद्1/11/8

मो.8794215341
mishra9radhcshyam@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 173–181

The Hermeneutics of Vedic Action: An Examination of *Vidhi* , *Niṣedha*, and *Arthavāda* in *Mimāṁsā* Philosophy

Dr. Gauranga Das
Assistant Professor, Department of Philosophy
Kalimpong College, Kalimpong, West Bengal, India, Pin Code: 734301

Abstract :

This study explores the core ideas of the *Mimaṁsā* school of Indian philosophy, specifically *Vidhi* (injunctions), *Niṣedha* (prohibitions), and *Arthavāda* (corroborative claims). *Mimaṁsā*, the main foundation for Vedic interpretation, offers a rigorous hermeneutical approach to comprehending *dharma*, mostly through ritualistic action. In this essay, each idea is defined, its classifications and functions are examined, and its complex linkages are examined. It also looks at the *Mimaṁsā* principles of interpretation, emphasizing academic debates and their significant ramifications for ancient Indian jurisprudence, ceremonial practice, ethical behavior, and Vedic hermeneutics. This study attempts to provide a thorough knowledge of how these three categories collectively direct human behavior and mold the perception of religious and legal obligations by combining textual evidence.

Keywords : *Mimaṁsā*, *Vidhi* , *Niṣedha* , *Arthavāda*, Vedic Hermeneutics, *Dharma*, Indian Philosophy, Ritualism, Jurisprudence.

1. Introduction to *Mimaṁsā* Philosophy :

1.1. Overview of the *Mimaṁsā* School and its Core Purpose :

One of the six orthodox schools (*darśan*s) of traditional Indian philosophy is the *Mimaṁsā* school, commonly referred to as *Purva-Mimaṁsā* or *Karma-Mimaṁsā*. Its

primary goal is the careful interpretation of the Vedic injunctions, which are regarded as the oldest and most authoritative texts in Hinduism. *Mimaṁsā* offers a strong set of guidelines for understanding the Vedas in addition to a deep philosophical defense of the practice of Vedic rites, going beyond simple textual examination. Its theoretical and practical contributions to Indian philosophy are highlighted by this dual focus. *Mimāṁsā* philosophy, developed by Śabara and Kumārila Bhaṭṭa, provides a systematic approach to interpreting Vedic texts [1, 2]. This article examines the role of *vidhi*, *niṣedha*, and *arthavāda* in shaping the hermeneutics of Vedic action.

Clarifying the nature of *dharma* is the main goal of the *Mimaṁsā* school. According to this conceptual paradigm, *dharma* is a tangible collection of ceremonial duties and privileges rather than an abstract idea. It is thought that the world's harmony and the accomplishment of each performer's unique objectives depend on the accurate and appropriate execution of these rites. The claim that dharma cannot be accurately ascertained by traditional methods like perception or reasoning is a fundamental epistemological principle of *Mimaṁsā*. Because the Vedas are regarded as everlasting, authorless (*apauruṣeya*), and completely infallible, this stance requires a complete reliance on revelation. This position makes the Vedas the only reliable and self-confirming source of information about moral behavior. The entire *Mimaṁsā* system is based on this fundamental idea, which means that correctly interpreting Vedic statements is crucial for directing human behavior because only these holy writings provide the means to comprehend and carry out one's responsibilities.

1.2. Historical Context and Key Figures :

Mimaṁsā, a fundamental philosophy that influenced *Vedānta* and Hindu law, is considered the oldest of the six traditional darshans. The founding text, *Mimaṁsā-sūtra*, is attributed to Jaimini and is thought to have been written in the fourth century BCE. Key figures like Śabarasvamin and *Kumārila Bhatta* contributed to the foundation of later *Mimaṁsā* philosophy. *Mimaṁsā* was a potent intellectual force in ancient India, addressing real-world challenges in carrying out Vedic *Yajña*s. The analytical foundation of *Mimaṁsā*'s interpretive framework is Jaimini's classification of Vedic texts into five main categories: *Vidhi* (obligatory positive texts), *Niṣedha* (obligatory negative texts), *Arthavāda* (non-obligatory explanatory texts), *Nāmadheya* (general definitional texts), and *Mantra* (esoteric Vedic texts used in rituals).

2. *Vidhi* : The Vedic Injunctions

2.1. Definition, Etymology, and Primary Meanings :

Mimaṁsā, a philosophy in Vedic texts, defines *Vidhi* as a prescriptive rule that encourages action. It differs from other rules like *parisāṁkhyā* and *niyama*, which are exclusive rules. *Vidhi* is a statement that directs ritualistic performance, demonstrating a strong philosophical commitment to following Vedic instructions. *Mimaṁsā*'s belief that action is the essence of human existence and *Vidhi* 's definition of "a statement that induces one to act" emphasizes the intrinsically performative nature of Vedic authority, rather than just understanding the text. The primary purpose of Vedic precepts is to inspire and direct human behavior.

2.2. Classification and Types of *Vidhi* :

Pūrva Mimaṁsā, created by Jaimini, categorizes *Vidhi* as an obligatory positive text, imposing obligations and penalties. *Vidhi* is divided into four primary forms: *Utpatti Vidhi* , *Viniyoga Vidhi* , *Prayog Vidhi* , and *Adhikāra Vidhi* s. *Utpatti Vidhi* prescribes actions for the first time, *Viniyoga Vidhi* establishes the relationship between rites, *Prayog Vidhi* controls the process of events, and *Adhikāra Vidhi* s regulates personal competence and rights. *Quasi-Vidhi* s, like niyamas and parisaṃkhyās, control or limit preexisting practices.

2.3. Role and Significance in Vedic Rituals and *Dharma :*

Vidhi s, the foundation of the *Mimaṁsā* understanding of Dharma, emphasizes the link between moral behavior and adherence to Vedic principles. These instructions guide individuals towards actions that advance spiritual and cosmic harmony. The attentive performance of *Vidhi* s is essential for spiritual growth and enlightenment. The success of *Yajña*s is believed to produce *apūrva*, or invisible power, leading to desired outcomes. The philosophical debate within *Mimaṁsā*, particularly between the *Kumārila* and *Prabhākara* schools, highlights the complex nature of moral obligation and human motivation. *Mimaṁsā* academics conducted in-depth ethical research into human behavior and motivations.

3. *Niṣedha* : The Vedic Prohibitions

3.1. Definition, Etymology, and Primary Meanings :

The basic definition of *Niṣedha* is the exact opposite of an injunction (*Vidhi*). It stands for a negative precept or prohibition, which forbids or restricts behavior that is thought to be harmful or detrimental. The *Sanskrit* words that mean "holding back," "restraining," "prevention," "prohibition," "negation," and "denial" are the origin of the word " *Niṣedha* ." According to *Mimaṁsā*, a real *Niṣedha* happens when a specific activity is first suggested or impliedly feasible but then expressly forbidden. Often

employed to denote *pratisedha*, a form of prohibition, the particle "*Na*" (meaning "not") can occasionally appear as "a" or "an" in compound phrases. *Niṣedha* refers to prohibitive statements in Vedic texts that restrict or prohibit certain actions[1]. These statements are essential for understanding the limits of ritual action.

3.2. Classification and Types of *Niṣedha :*

Niṣedha , a binding negative text in *Mimaṁsā* philosophy, is divided into two forms: *Paryudāsa,* which restricts actions for *yajña* execution, and *Niṣedha*, which forbids behavior across various circumstances and people. Examples include the general prohibition against consuming certain substances, the ethical prohibition of not damaging another, and the prohibition against lying. *Niṣedha* in *Dharmaśāstra* means "prohibiting inimical acts".

3.3. Function and Ethical Implications of Prohibitions :

Niṣedha is a principle in HIndu ethics that discourages harmful actions by outlawing them. It aims to prevent negative consequences by promoting moral behavior. *Niṣedha*'s reward, *Anarthya Nivrtti*, signifies the cessation of harm, fulfilling the human aim of averting negative outcomes. However, despite the prohibition, individuals still commit sin or suffer negative consequences. *Niṣedha* influences moral decisions by defining permissible actions. It contrasts with *Vidhi* , which emphasizes positive behaviors and their benefits. The *Mimaṁsā* framework for dharma covers both positive and negative actions to achieve well-being and prevent negative outcomes.

4. *Arthavāda*: Explanatory and Corroborative Statements

4.1. Definition, Etymology, and Primary Meanings :

Arthavāda, meaning "statement of meaning" or "declaration of purpose," is a text that explains and supports ideas. It is a phrase that praises or denounces an action prescribed by a *Vidhi* or forbidden by a *Niṣedha* . *Arthavāda*'s persuasive qualities, rather than factual accuracy, give it truth value. Its main goal is to increase or decrease the propensity to perform a deed or prohibition. *Mimaṁsā*'s understanding of human psychology and language suggests that persuasive language is necessary for compliance with *dharma*. *Arthavāda* refers to explanatory passages in Vedic texts that provide context and justification for ritual actions[2]. These passages are crucial for understanding the purpose and significance of rituals.

4.2. Classification and Types of *Arthavāda :*

Arthavāda was classified by Jaimini as a "non-obligatory explanatory text." It differs from direct instructions in that it serves to explain and provide context, frequently

related to a particular *Vidhi* or *Niṣedha* , without really imposing duties. Importantly, *Arthavāda* sections make up the majority of the Veda, especially in the *Brāhmana* texts, highlighting their widespread occurrence and significance in the Vedic corpus as a whole.

Primary Types (based on glorification/condemnation) :

StutiparaArthavāda (GlorificatoryArthavāda) : This kind encourages the performance of an act by praising it after it has been enjoined by a Vidhi Vakya (injunctive sentence). "Vayu is verily the swiftest deity," for instance, is used to praise a Vayu-related edict.

NindaparaArthavāda (Condemnatory *Arthavāda*): This kind discourages people from committing an act that has been forbidden by a prohibitory sentence by denouncing it. "*Saha Arodit*," which is used to deter an illegal act, is one example.

Further Categorizations (as per *Arthasangraha* and Dr. P. V. Kane) :

Arthavāda is a system of knowledge that consists of three types: *Guṇavada*, *Anuvāda*, and *Bhutārtha Vāda*. *Guṇavāda* contradicts common experience or accepted methods, symbolizing a secondary quality. *Anuvāda* restates or reproduces information from other sources, demonstrating its relation to other truths. *Bhutārtha Vāda* declares a fact or event from the past, not refuted by other *Pramāna*s.

Additional Types (from *Mimaṁsā-paribhāṣā*) :

Parakrti and *Purākalpa* are two types of narratives in Vedic texts, with Parakrti describing an admirable act and *Purākalpa* referencing ancient events. *Kumārila Bhatta*'s hermeneutical principle suggests that passages following *Vidhi* passages have a weaker authoritative force, while those preceding *Vidhi* s have a greater one. This hierarchical view of Vedic authority is based on textual arrangement and interpretation. *Mimaṁsā* interpreters were sensitive to the structural subtleties of Vedic texts, understanding that a passage's meaning encompasses its literal substance, intended purpose, and persuasive strength.

4.3. Function and Non-Literal Interpretation of *Arthavāda :*

Arthavāda texts, central to *Mimaṁsā*, cannot be understood independently if interpreted in isolation. They become useful and significant when linked to injunctive statements, as stated in Jaimini's *Mimaṁsā* I.2.7. *Arthavāda* passages acquire significance by endorsing *Vidhi* and *Niṣedha* , rather than being meaningless. Understanding *Arthavāda* requires context and tone, as it is not intended to be taken literally. The principle of *Mimaṁsā, Nyāya* emphasizes *Arthavāda*'s supplementary role within the *Mimaṁsā* system, supporting the main *Niṣedha* and *Vidhi* claims. Its function is to

encourage, clarify, support, and occasionally clear up ambiguities, preserving the Vedic orders' infallibility and direct prescriptive authority.

5. Interrelationship and Hermeneutical Principles

5.1. The Dynamic Relationship between *Vidhi* , *Niṣedha* , and *Arthavāda :*

The *Mimaṁsā* hermeneutical approach divides Vedic literature into three categories: *Vidhi* (obligatory positive), *Niṣedha* (obligatory negative), and Arthavāda (non-obligatory explanatory). *Arthavāda*, a non-substantive text, provides background, justification, and support for the substantive commands of *Vidhi* and *Niṣedha* . It strengthens and reaffirms these commands, promoting obedience. The interaction between *Vidhi* , *Niṣedha* , and *Arthavāda* forms a dynamic system of Vedic instruction, ensuring compliance by providing background information, inspiration, and assistance in resolving conflicts. This comprehensive approach to textual interpretation acknowledges the need for explicit instructions and strong arguments for following them, promoting profound comprehension and devotion to *dharma*.

5.2. *Mimaṁsā* Principles of Interpretation :

In order to address the inherent contradictions, ambiguities, and incongruities within the extensive and intricate Vedic texts, the *Mimaṁsā* school established a highly scientific and methodical body of interpretive rules known as the *Mimaṁsā* rules. Because of their innate logical consistency and rationality, these ideas were eventually widely and significantly used in a variety of other domains, most notably in grammar, general philosophy, and ancient Indian law (*Dharmaśāstra*).

Six Axioms of Interpretation (Elementary Principles) : These foundational axioms guide the initial approach to textual meaning :

The *Sarthakyata* axiom emphasizes the importance of a document's purpose, while the *Lāghava* axiom suggests choosing constructions that produce clearer meanings. The *Arthaikatva* axiom suggests a single meaning for words or statements in specific contexts. The *Guṇapradhān* Axiom requires changes to subordinate elements to maintain consistency. The *Sāmanajasya* Axiom suggests bringing disparate texts together, assuming discrepancies are variations in application rather than contradictions. The *Vikalpa* axiom is used in cases of irreconcilable conflicts between legal standards or texts, but is avoided by *Mimaṁsāka*s due to its "eight faults."

Four General Principles of Interpretation: These principles provide further guidance for extracting meaning from texts :

The *Śruti* Principle supports literal interpretations when the text's meaning is clear and consistent with the intended aim. The *Linga* Principle infers meaning from contextual clues, while the *Vākya* Principle emphasizes coherence and syntactical order. The *Prakaraṇa* Principle aligns interpretation with the main goal by placing individual clauses within the text's thematic framework.

Other Key Principles :

The *Mimāṁsā*'s interpretive principles, including the *Bādha* Principle, *Atidesh* Principle, and *Anusanga* Principle, are a methodical approach to textual interpretation. These principles are used in contemporary Indian courts and are considered superior to Western legal concepts. They address the intricacies and ambiguities present in Vedic literature, focusing on the subtleties of meaning, context, and intent in legal and religious texts. These principles demonstrate a rich intellectual heritage and their relevance in contemporary Indian courts.

5.3. Scholarly Debates and Divergent Interpretations :

The Bhatta school, which was formed by *Kumārila* Bhatta, and the *Prabhākara* school, which was founded by *Prabhākara*, were the main sources of internal scholarly disputes within the *Mimaṁsā* school, which was by no means a monolithic doctrine. These discussions demonstrate how dynamic and ever-changing *Mimaṁsā* thinking is.

Key Differences between *Kumārila* and *Prabhākara* :

Kumārila and *Prabhākara*'s interpretation of the *Mimaṁsā* system was influenced by philosophical distinctions. *Kumārila* focused on a thorough examination of dharma as revealed in the Vedas, while *Prabhākara* delved into the significance of all Vedic literature. They differed in their views on ethics, epistemology, semantics, and authority of Vedas. *Kumārila* endorsed the teleological view, which posits that all moral commands are intended to produce a desired benefit, while *Prabhākara* promoted the "duty for its own sake" theory, which argues that the sense of obligation alone should be the right motivation. They also differed in their conceptions of meaning, with *Kumārila* arguing that words can express meaning independently, while *Prabhākara* believed that sentences are the basic building blocks of meaningful discourse. The *Mimaṁsā* system was not static but dynamic, characterized by ongoing critical analysis and improvement.

6. Applications and Broader Implications

6.1. Role in Vedic Ritual Performance :

The *Mimaṁsā* school focuses on performing Vedic rites (*Yajñas*) correctly, as this is the most efficient way to understand and fulfill dharma, leading to salvation. *Vidhi*

declarations provide clear instructions for the rites, while *Niṣedha* words guide against harmful actions. Arthavāda texts provide explanatory and motivating effects, ensuring adherence and deeper understanding of the rituals. *Mimaṁsā*'s conception of ritual efficacy is based on the idea of *Apūrva*, which creates an invisible energy that directly results in desired spiritual and material effects. The school's deep involvement with *Vidhi* , *Niṣedha* , and *Arthavāda* demonstrates its philosophical belief that dharma is realized through painstaking ritual action.

6.2. Influence on Ancient Indian Law and Jurisprudence :

Mimaṁsā principles, originating from religious exegesis, were widely applied in ancient Indian law, particularly in *Dharmaśāstra* writings. Their logical, rational, and scientific nature allowed them to settle disputes and ambiguities in legal codes and traditions. Modern legal scholars argue that *Mimaṁsā* principles are superior to Western legal principles due to their greater detail, methodical methodology, and relevance to statute law and judgment interpretation. *Mimaṁsā* maxims, such as *Nashtashvadagdha Ratha Nyāya, Atidesh* principle, and *Anusanga* principle, have been used in modern Indian court rulings to reconcile contradictory legal precedents, extend rules from related circumstances, and make statutes more democratic and equitable.

6.3. Ethical Framework and Concept of *Dharma :*

Mimaṁsā's ethical system is based on *Vidhi* and *Niṣedha* , which guide individuals towards *dharma* and avoid sinful actions. The system is deontological, focusing on following rules and obligations. However, the academic exchange between *Kumārila* and *Prabhākara* highlights the importance of "good outcomes" in driving ethical conduct. *Mimaṁsā* emphasizes the interconnectedness of moral behavior, ritualistic performance, and the ultimate goal of redemption. Adhering to *Vidhi* 's rules is tied to spiritual development and long-term well-being, supported by the concept of *apūrva*.

7. Conclusion :

7.1. Summary of Key Findings :

Vidhi , *Niṣedha*, and *Arthavāda* have been clarified in this study paper as essential elements of the *Mimaṁsā* school's hermeneutical framework. *Niṣedha* signifies prohibitions against harmful deeds, *Vidhi* stands for required injunctions guiding constructive behavior, and *Arthavāda* offers corroborating and explanatory remarks that strengthen the authority and persuasive power of the first two. In order to create a coherent system of Vedic instruction, the study examined their various classifications,

purposes, and complex interactions. *Arthavāda* is essential, though not required, in encouraging adherence and resolving interpretation difficulties.

The study brought to light the extraordinary complexity of *Mimaṁsā*'s interpretive principles, which exhibit a rigorous logical approach to textual exegesis. These principles include *Sārthakyata*, *Lāghava*, *Sāmanjasya*, *Śruti*, *Linga*, *Vākya*, *Atidesh*, and *Anusanga*. Additionally, the internal scholarly debates within *Mimaṁsā*, especially between the *Prabhākara* and *Kumārila* schools, highlight the philosophical tradition's dynamic and intellectually vibrant nature by demonstrating its ongoing engagement with important issues of textual authority, ethics, and epistemology.

7.2. Enduring Relevance of *Mimaṁsā* Hermeneutics :

Ancient India's *Mimaṁsā* system, which was based on the careful interpretation of Vedic ceremonies, left behind a strong and organized framework for comprehending scriptural authority and directing human behavior. Because of its persistent logical soundness, practical utility, and adaptability in resolving complex legal problems, its principles—which were first devised for religious texts—have transcended their original sphere and exerted a deep and ongoing influence on modern Indian jurisprudence. The in-depth examination of *Vidhi* , *Niṣedha* and *Arthavāda* provides priceless insights into the nature of religious duty, the subtleties of ethical reasoning (such as the debate between teleology and deontology), and the nuanced influence of language on human motivation and action. *Mimaṁsā*'s lasting influence ultimately stems from its distinctive contribution to Indian intellectual thought, which successfully bridges the gap between ritual practice and in-depth philosophical investigation. It also offers a thorough, practical manual for leading a life in accordance with dharma in order to achieve both material and spiritual rewards.

References :

1. Śabara. (1903). *Mimāṁsā Sūtra Bhāṣya*. Translated by G. Jha.
2. Kumārila Bhaṭṭa. (1899). *Ślokavārttika*. Translated by G. Jha.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 182–187

Recycle and Reuse of Waste Construction Materials

Mr. Utkarsh Singh (Head of Department)
Ms. Astha Singh (Asst. Professor)
Himalayan Institute of Technology And Management, Lucknow, U.P.

ABSTRACT :-

Rapid urbanization in India generates vast quantities of construction and demolition (C&D) waste—estimated at over 150 million tonnes annually—posing environmental and logistical challenges (Chini & Riggs, 2005; CPCB, 2016). This paper investigates strategies for recycling and reusing C&D waste—masonry debris, concrete rubble, brick chips, and reclaimed asphalt—into value-added construction products. A comprehensive experimental programme evaluated (1) recycled aggregate concrete (RAC) with up to 50% coarse recycled aggregate (CRA); (2) mortar and bricks incorporating 20–40% recycled brick aggregate (RBA); and (3) cold-mix asphalt using 30% reclaimed asphalt pavement (RAP). Mechanical (compressive, flexural, tensile strength), durability (water absorption, chloride ingress), and performance (Marshall stability, flow) tests were conducted per Indian Standards (IS) and ASTM protocols. Results show that RAC with 30% CRA retains = 90% of control concrete strength, RBA-mortar at 30% replacement achieves = 85% of control mortar strength, and RAP-asphalt meets Ministry of Road Transport & Highways (MORTH) requirements for low-volume roads. Life-cycle assessment (LCA) indicates embodied CO2 reductions of 15–25% across all recycled mixes. The study demonstrates the technical feasibility and environmental benefits of integrating C&D waste into mainstream construction, and proposes a roadmap for standardization and large-scale adoption in India.

KEYWORDS :-

Construction and demolition waste; recycled aggregate concrete; recycled brick aggregate; reclaimed asphalt pavement; sustainability; life-cycle assessment; India

1. INTRODUCTION :-

The burgeoning construction sector in India has led to approximately 20–25% annual growth in C&D waste generation, now exceeding 150 Mt/year—surpassing municipal solid waste in many metros (CPCB, 2016; MoHUA, 2018). Traditionally, C&D waste is landfilled, squandering resources and emitting greenhouse gases. Internationally, recycling rates approach 60–80% in the EU and Japan (Chini & Riggs, 2005; Tam et al., 2008). In contrast, India lags with <10% recycling, due to informal disposal practices, lack of standards, and technological barriers (Kumar et al., 2017).

Objectives :

1. Evaluate mechanical and durability performance of :

– Recycled aggregate concrete (RAC) with 0–50% coarse recycled aggregate (CRA).

- Mortar and bricks with 20–40% recycled brick aggregate (RBA).

- Cold-mix asphalt with 30% reclaimed asphalt pavement (RAP).

2. Conduct life-cycle assessment (LCA) to quantify embodied CO2 reductions.

3. Identify technical, regulatory, and operational enablers for mainstream adoption.

2. LITERATURE REVIEW

2.1 Recycled Aggregate Concrete (RAC) :

RAC utilizes crushed concrete from demolished structures. Poon et al. (2001) demonstrated that up to 30% CRA yields compressive strengths = 90% of control. Siddique and Kaur (2011) found 50% CRA can be used in nonstructural applications with acceptable durability. More recent Indian studies (Kumar & Min, 2019; Rao et al., 2020) confirm that proper crushing, grading, and washing of CRA reduces adhered mortar, improving performance.

2.2 Recycled Brick Aggregate (RBA) :

Brick rubble, high in silica, can replace natural sand or fine aggregate. Khajuria and Ramaswamy (2003) reported mortar cubes with 20% RBA achieved 85% of control strength. RBA bricks at 30% replacement fulfill ASTM C652 specifications for Class MX bricks (Sharma & Shrestha, 2018). Indian investigations (Yadav et al., 2018; Singh & Kumar, 2021) highlight that controlled firing and use of hydraulic lime binders enhance durability in RBA-mortar.

2.3 Reclaimed Asphalt Pavement (RAP) :

RAP consists of aged bituminous mix from road overlays. Incorporation rates of 20–40% in cold-mix asphalt have been shown to meet MORTH specifications for stability and flow (Peshkin & Roesler, 2010; Agrawal et al., 2019). Warm-mix technologies further improve workability (Martínez-Boza et al., 2017).

2.4 Life-Cycle Assessment (LCA) :

LCA studies (Gursel et al., 2014; Hernández & De Brito, 2020) indicate embodied carbon savings of 10–30% when using recycled materials, factoring in reduced quarrying and landfill emissions. Indian LCA studies are nascent but promising (Joshi & Chandra, 2022).

3. EXPERIMENTAL METHODOLOGY :

3.1 Materials and Mix Designs

1. **RAC Mixes (M0–M4) :** OPC 43 grade; natural coarse aggregate (NCA) replaced with CRA at 0%, 15%, 30%, 40%, and 50% by volume; fine aggregate: natural sand; w/c = 0.45; target 28 d strength = 30 MPa.
2. **Mortar & Bricks (B0–B3) :** OPC : lime binder (70:30); natural sand replaced with RBA at 0%, 20%, 30%, 40%; brick tile units cast per IS 2222.
3. **Asphalt Mixes (A0, A1) :** Cold-mix base: 60/70 penetration-grade bitumen; coarse and fine aggregates; 0% and 30% RAP by weight.

3.2 Specimen Preparation :

i. **RAC :** Cubes (150 mm) and cylinders (150×300 mm), cast and demolded after 24 h, water-cured.

ii. **Mortar :** Cubes (50 mm) and bricks (230×110×75 mm), air-cured per IS 3495.

iii. **Asphalt :** Marshall specimens (101.6×63.5 mm), compacted with 75 blows/direction (ASTM D6927).

3.3 Testing

(a) Mechanical :

Compressive strength : IS 516 (1959) for concrete; IS 2250 (1981) for mortar.

Flexural strength : IS 516 for RAC beams.

Tensile splitting : IS 5816 (1999) for RAC.

(b) Brick : Water absorption, efflorescence (IS 3495).

(c) Asphalt : Marshall stability & flow: ASTM D6927.

(d) Durability :

Water absorption & sorptivity : ASTM C642.

Chloride penetration : RCPT ASTM C1202.

i. **LCA :** Cradle-to-gate assessment using SimaPro; IPCC 2013 GWP 100a method.

4. RESULTS

4.1 RAC Performance

CRA (%)	Compressive Strength (MPa)	28 d Water Absorption (%)	RCPT (Coulombs)
0	31.2 ± 1.1	4.2 ± 0.2	2,400 ± 120
15	30.1 ± 1.2 (- 3.5%)	4.5 ± 0.3	2,600 ± 150
30	28.5 ± 1.3 (- 8.7%)	5.0 ± 0.3	2,900 ± 180
40	26.4 ± 1.4 (- 15.4%)	5.6 ± 0.4	3,200 ± 200
50	24.0 ± 1.5 (- 23.1%)	6.2 ± 0.5	3,600 ± 220

Observations : Up to 30% CRA yields > 90% of control strength and acceptable durability. ANOVA confirms strength and absorption differences significant at $p < 0.05$.

4.2 Mortar & Brick Performance

RBA (%)	Mortar Strength (MPa)	Brick Water Absorption (%)	Brick Efflorescence Grade
0	12.5 ± 0.5	12.0 ± 0.6	Mild
20	11.0 ± 0.6 (- 12%)	13.5 ± 0.7	Moderate
30	10.6 ± 0.7 (- 15%)	14.8 ± 0.8	Moderate
40	9.8 ± 0.8 (- 22%)	16.5 ± 0.9	Severe

Observations : Mortar cubes up to 30% RBA meet IS 2250 compressive requirements; bricks meet Class MX up to 30% replacement.

4.3 Asphalt Performance

Mix	Marshall Stability (kN)	Flow (mm)	Air Voids (%)
A0	10.5 ± 0.4	3.2 ± 0.1	4.5 ± 0.2
A1	9.8 ± 0.5 (- 7%)	3.5 ± 0.2	5.0 ± 0.3

Observations : A1 meets MORTH criteria for low-volume roads (stability = 8 kN; flow 2–4 mm).

4.4 LCA Results

Mix	Embodied CO2 (kg CO_2e/m^3)	Reduction vs. Control
M0/RAC	330	—
M2[30%]	290 (- 12%)	- 12%
B2[30%]	310 (- 6%)	- 6%
A1	250 (- 24%)	- 24%

5. DISCUSSION

5.1 Optimal Replacement Levels :

RAC with up to 30% CRA retains structural performance with minimal durability trade-offs,

aligning with global best practices (Poon et al., 2001; Siddique & Kaur, 2011). Mortar and bricks with up to 30% RBA meet Indian standards, though efflorescence at 40% RBA suggests a practical cap at 30% (Khajuria & Ramaswamy, 2003). Cold-mix asphalt with 30% RAP delivers acceptable stability for low-traffic applications (Agrawal et al., 2019).

5.2 Durability Considerations :

Increased absorption and chloride ingress in higher CRA/RBA mixes underscore the need for surface treatments (silane sealers) or blended mineral admixtures (Ghafoori & Dhir, 1999; Rashad, 2013).

5.3 Environmental Benefits :

LCA confirms embodied CO2 reductions of 12–24%, reinforcing the environmental imperative for recycling C&D waste in construction (Gursel et al., 2014; Joshi & Chandra, 2022).

5.4 Implementation Roadmap :

i. **Standardization :** Develop Indian Standards for CRA, RBA, and RAP specifications (BIS codes).

ii. **Processing Infrastructure :** Establish decentralized recycling yards with beneficiation equipment (jaw crushers, trommel screens).

iii. **Policy Incentives :** Mandate minimum recycled content in public projects (e.g., 20% CRA in government-funded housing).

iv. **Quality Control :** Implement certification schemes for recycled aggregates akin to "Green Label" products.

6. CONCLUSIONS AND RECOMMENDATIONS :

1. **Technical Feasibility :** Up to 30% replacement of natural aggregates with CRA or RBA, and 30% RAP in cold-mix asphalt, yields products meeting Indian structural and performance standards.

2. **Durability Management :** Surface sealers and blended SCMs can mitigate increased permeability and chloride ingress in recycled mixes.

3. **Environmental Impact :** Recycling C&D waste can reduce embodied CO2 by up to 24%, contributing to India's climate mitigation goals.

4. **Policy and Practice :**

- Revise BIS codes to incorporate recycled material guidelines.
- Provide fiscal incentives (tax breaks, subsidies) for recycled construction products.
- Promote public-private partnerships to establish recycling facilities.

By mainstreaming recycled construction materials, India can alleviate landfill burdens, conserve

virgin resources, and move toward a circular economy in the built environment.

REFERENCES :

1. Chini, A. R., & Riggs, W. (2005). Economic Impact of Increasing Recycled Crushed Concrete Aggregate in Concrete. Portland Cement Association.
2. Central Pollution Control Board (CPCB). (2016). Report on Construction and Demolition Waste Management. CPCB, New Delhi.
3. Ministry of Housing and Urban Affairs (MoHUA). (2018). Solid Waste Management Rules. Government of India.
4. Poon, C. S., Kou, S. C., & Lam, L. (2001). "Influence of Recycled Aggregate on Structural Concrete." Cement and Concrete Research, 31(3), 354–357.
5. Siddique, R., & Kaur, I. (2011). "Strength and Durability Properties of Concrete Containing Scrap-Tire Rubber." Journal of Cleaner Production, 19(6–7), 676–682.
6. Khajuria, A. S., & Ramaswamy, A. (2003). "Use of Recycled Brick Aggregate in Concrete." Journal of Materials in Civil Engineering, 15(5), 456–460.
7. Sharma, R., & Shrestha, S. (2018). "Performance of Recycled Brick Aggregate Masonry Units." Construction and Building Materials, 187, 116–123.
8. Agrawal, S., Singh, G., & Kumar, P. (2019). "Characterization of Cold-Mix Asphalt with RAP for Rural Roads." Indian Journal of Transport Management, 43(2), 89–99.
9. Ghafoori, N., & Dhir, R. K. (1999). "Development of Pervious Concrete with Optimum Performance." Journal of Materials in Civil Engineering, 11(2), 129–137.
10. Rashad, A. M. (2013). "Lithium-Based Treatments to Concrete." Construction and Building Materials, 40, 1133–1147.
11. Gursel, A. P., Masanet, E., Horvath, A., & Stadel, A. (2014). "Life-Cycle Assessment of Building Materials: The Impacts of Common Materials." Resources, Conservation and Recycling, 87, 74–79.
12. Joshi, R., & Chandra, S. (2022). "LCA of Recycled Aggregate Concrete in India." Environmental Progress & Sustainable Energy, 41(1), e13645.
13. Tam, V. W., Tam, C. M., & Wang, Z. (2008). "Reuse of Recycled Aggregate for the Production of Concrete Blocks." Construction and Building Materials, 22(5), 1033–1040.
14. Kumar, A., & Min, W. (2019). "Properties of Concrete with Recycled Concrete Aggregate." Journal of Cleaner Production, 227, 792–805.
15. Rao, R. S., Singh, K. B., & Ramachandran, K. (2020). "Durability Performance of RAC in Coastal Environment." Journal of Materials in Civil Engineering, 32(4), 04020055.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 188–192

वैश्वीकरण और हिन्दी भाषा का भविष्य

डॉ. गजानन्द मीणा
सहायक आचार्य, हिन्दी, भगवान आदिनाथ जयराज मारवाडा राजकीय महाविद्यालय, नैनवा।

वैश्वीकरण अथवा 'भूमण्डलीकरण' वास्तव में अंग्रेजी के 'ग्लोबलाइजेशन' का हिन्दी रूपान्तर है। जो भारतीय सन्दर्भो और सरोकारों के अर्थ से भिन्न अर्थ देता है। सूचना प्रौद्योगिकी, विज्ञान, अन्तरिक्ष, परमाणु–उर्जा के क्षेत्र में उन्नति करके मानव ने भौतिक सुख–सुविधाएँ तो अर्जित की है किन्तु मानवीय मूल्यों और मानसिक सन्तुष्टि का अभाव हो गया है। डॉ जार्ज कुट्टी वट्टोत के अनुसार – ''आधुनिक युग विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का युग है। भूमण्डलीकरण तथा विश्व बाजारवाद के इस युग में मनुष्य केवल उपभोग की वस्तु बना बनाया जाता है मानवीय मूल्यों का क्षरण तथा अमानवीयता का प्रचार आज बड़े पैमाने पर हो रहे है।''(1) भारत में विदेशी कम्पनियों के सामान चकाचौंध के साथ बिक रहे है। भारतीय जनता उत्तम और मंहगा खरीदने में ही सन्तोष करने लगी है। हमारे साहित्य, संस्कृति, शिक्षा यहां तक कि जीवन शैली तथा विचारधारा पर भी पश्चिमी प्रभाव परिलक्षित होने लगा है। ''हमें यह मानने में संकोच नही होना चाहिए कि यूरोपीय और पश्चिमी औद्योगिक पूंजीवादी राष्ट्रों ने अपने आर्थिक सांस्कृतिक तथा मीडिया परक वर्चस्व द्वारा मानवीय तथा प्राकृतिक साधनों पर अपना स्वामित्व जमाने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी जिससे व्यापार के लिए दुनिया को एक करके तथा कृत्रिम, झूठा और आकर्षणनुमा संसार रच कर निहित स्वार्थों को पूरा किया जा सके।''(2)

भले ही वैश्वीकरण अथवा भूमण्डलीकरण एक आकर्षक और लुभावना नाम है। मगर इसके पीछे अवधारणा अत्यन्त स्वार्थपरक और शोषण परक है। इस दृष्टि से उपभोगतावादी प्रवृति को विकसित किया जा रहा है। आर्थिक दृष्टि से हर देश दूसरे देश को अपनी सामग्री बेचने की मंडी के रूप में देखता है और अपना मुनाफा कमाने की ताक में अपने सम्बन्ध स्थापित करने में कोई कसर नही छोडता है। अन्ततः वैश्वीकरण अथवा भूमण्डलीकरण का अन्तिम लक्ष्य पूंजीवाद और समृद्धिवाद ही है। माधव सोनटके के अनुसार ''वैश्वीकरण का आदर्श रूप भले ही मोहक हो लेकिन उसका यथार्थ रूप वह नही है। आज वैश्वीकरण 'नवपूंजीवाद' साम्राज्यवाद है।''(3) इसी सन्देहास्पद अवधारणा के वशीभूत कुछ देश स्वयं को इस बाजारीकरण से अलग रखना चाहते हैं।

भारत में भी एफ.डी.आई. को लेकर इसी तरह की असमंजस की स्थिति पैदा हो गई थी। भूमण्डलीकरण अथवा वैश्वीकरण की अवधारणा अभी तक अर्थव्यवस्था के गिर्द ही प्रचलित है। ''वैश्वीकरण से स्थानीय अर्थ–व्यवस्था सम्पूर्ण विश्व के दायरे में आती जा रही है और इसमे सभी अर्थ व्यवस्थाओं के समरूप की क्षमता है। परन्तु सभी इसका समुचित लाभ नही उठा पा रहे हैं और विश्व के विभिन्न हिस्सो में आर्थिक विकास एक तरफा हो रहा है। कई देश अपनी अर्थव्यवस्था को बचाने का प्रयत्न कर रहे है।''(4)

मशीनीकरण, सूचना प्रौद्योगिकी, वैज्ञानिक अनुसन्धानो और भौतिक प्रगति की सुख सुविधाओं के कारण मनुष्य का जीवन द्रुतगति से चलने लगा है। प्रकृति पर विजय पा लेने का दम्भ उसे पतन के गर्त में धकेल रहा है। मानव का मानव से विश्वास उठ रहा है। आज का मानव इतना व्यस्त हो गया है कि उसे अपनों के विषय में तो क्या अपने विषय में भी सोचने की फुर्सत नही है। ''आज मानव के पास समय का अभाव हो गया है। वह निरन्तर उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होता चला जा रहा है। यही कारण है कि आज मानव मानव से दूर होता जा रहा है। हम दावा करते हैं कि वैज्ञानिक प्रगति ने हमें एक दूसरे के निकट ला दिया है। हम महीनो का सफर घण्टों में तय कर सकते हैं। कुछ सैकिण्डो में ही दूसरों से बात कर सकते हैं। मगर हमारी दूसरों के प्रति आत्मीयता कितनी है? शायद यह सोचने के लिए भी हमारे पास समय नही है।''[5] भौतिकवादी चिन्तन और विकास की अवधारणा को अपना कर तो हमने बहुत उन्नति की है मगर आत्मिक और आध्यात्मिक चिन्तन में बहुत पीछे रह गए हैं। मानवीय संवेदनाओं और अनुभूतियों की सुरक्षा अर्थव्यवस्था और बाजारीकरण से कहीं अधिक आवश्यक है। ऋग्वैदिक शब्द 'विश्वग्राम' भूमण्डलीकरण की अवधारणा को परिलक्षित नही करता है विश्वग्राम में भारतीय संस्कृति के उद्घोष 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का विश्वव्यापी सन्देश है। व्यापारीकरण की भावना कदापि नही– उसमें स्वार्थपरकता और साम्राज्यवाद जैसा भाव हो ही नही सकता। ''उस भव्य विश्वग्राम में सबके सब एक दूसरे के परम हितैषी थे। सभी दृष्टियों से सुरक्षित, रागद्वेष से पूर्णतया मुक्त अत्यन्त प्रसन्न और प्रफुल्लत रहने वाली अभेद प्रतीति के अनन्यतम परिचायक थे वे। आज के वर्ल्ड विलेज की नकली अवधारणा से उसका अन्तर अन्तर निर्हित वैशिष्टय स्वतः स्पष्ट है।''[6]

भारतीय उदारवादी मानवीय सद्भावना विश्व विख्यात है। हमारी संस्कृति दूसरों के प्रति सम्मान और आत्म सम्मान की रक्षा करना सिखाती है। भूमण्डलीकरण की संकीर्णवादी, अर्थसम्पन्न और संचयवादी अवधारणा के कारण अब भारत में भी दोहरे मापदण्ड हो गये हैं। यही कारण है कि हम केवल भारतीय होने का दम्भ करते हैं हमारी जीवन शैली पाश्चात्य संस्कारों से आक्रान्त है। आज हम देखते है कि ''एक आस्थावादी भारत है तो दूसरा पूंजीवादी यां पूंजी संचयवादी भारत। एक सामाजिक समन्वयवाद में विश्वास रखता है तो दूसरा वैयक्तिकता में। एक वसुधैव कुटुम्बकम्' की मान्यता को स्वीकृति देता है तो दूसरा 'वसुधैव स्व' सम्पति' को स्वीकार करता है। आज सम्पूर्ण भारत इन दो मान्यताओं के बन्धन में है। भारतीय चिन्तन की विशिष्टता त्यागवाद की है और पश्चिमी व्यवस्था वैयक्तिक संग्रह तथा भोगवाद पर आधारित है।"[7] हमारे चिन्तको और दार्शनिकों ने विदेशों में जाकर उन्हे ज्ञान और अध्यात्मबल के विषय में आत्मिक उन्नति का पाठ पढाया। उन्हे योग द्वारा ईश्वरीय सत्ता का आभास कराया। मगर विदेशों में जाकर बाजारीकरण कभी नही किया। राष्ट्रवादी चिन्तक स्वामी विवेकानन्द ने तो पूरे विश्व को अपना जानकर ही अमेरिका निवासियों को अपनी भाई–बहन मान लिया था।

हमारे चिन्तन के अनुसार तो सब का पिता वह ईश्वर ही है तो फिर हम सब भाई–बहन ही तो हैं। यहीं उनका संदेश अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आज भी विख्यात है। यही भारतीय 'विश्वग्राम' और वसुधैव कुटुम्बकम् की परिकल्पना है। ''स्वामी जी का प्रारम्भिक उद्देश्य राष्ट्रवाद था। वे एक महान राष्ट्रवादी नेता थे किन्तु उनका राष्ट्रवाद संकीर्ण दृष्टिकोण का न था। वह विशिष्ट रुप से अन्तर्राष्ट्रीयवाद की ओर कदम बढाये हुए था जो वर्तमान संयुक्त राष्ट्र संघ के आदर्श का कुछ पुट भी लिए हुए था।''[8] भारतीय परम्पराएं, संस्कृति और साहित्य विश्वभर में अपनी सानी नही रखती है। विश्वभर में आध्यत्मिक क्षेत्र में उन्नति के शिखर को छूने वाला भारत

''सर्वथा विश्वकल्याण की भावना से अनुप्राणित हार्दिकता, विशालता, संवेदनशीलता, परोपकारिता सेवा भाव से मुक्त अतिशय उदार दृष्टिकोण का निष्कलुष दृष्टान्त है।''[9]

जहाँ तक भाषा, साहित्य और शैक्षणिक विकास की बात है, हिन्दी भारत की गौरवमयी भाषा है। हिन्दी से ही 'हिन्दुस्तान' शब्द अस्तित्व में आया और 'आर्यवर्त्त' से भारत और अब हिन्दोस्तान के नाम से जाना जाने वाला भारत कब इण्डिया बन गया, किसी को पता ही न चला। यही 'वैश्वीकरण' का दौर है जो भाषा एवं क्षेत्र की सीमाओं को तोड़ कर पूरे विश्व को एक परिवार एवं बाजार के रूप में परिलक्षित कर रहा है। जहां तक हिन्दी भाषा का प्रश्न है हम देखते है कि सिनेमा और मीडिया के माध्यम से हिन्दी अपनी जड़ें दूर–दूर तक फैला रही है। विदेशों के विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन–अध्यापन सुचारू ढंग से हो रहा है। विदेशी लोग हिन्दीं सीखने और बोलने में गर्व अनुभव करने लगे है। 'सोनिया गांधी जैसी इटली की महिला को हिन्दी में भाषण देते हम सबने सुना है। हिन्दीं के विश्व स्तर पर विस्तृत होने के ऐसे अनेक उदाहरण है। गार्साद तासी, जार्ज इब्राहिम गिर्यसन मैक्समूलर जैसे विदेशी–विद्वानों ने हिन्दीं भाषा और साहित्य का शोध कार्य आरम्भ कर हिन्दीं को एक नई दिशा प्रदान की। ईस्ट इण्डियां कम्पनी और ईसाई मिशनरियों ने भी अपना सामान बेचने और धर्म प्रचार करने के लिए हिन्दीं को ही उपयुक्त माध्यम चुना। सभी समुदायों के धर्म प्रचारकों ने भी हिन्दीं में ही अपने उपदेश देना उचित समझा। इसी से हिन्दीं का विकास सम्भव हुआ। आज हिन्दीं व्यापार की भाषा बनती जा रही है। विश्व स्तर पर अपना सामान बेचने हेतु विदेशी कम्पनियां हिन्दीं में विज्ञापन देती है। लिपि भले रोमन हो, भाषा हिन्दीं ही होती है। "स्मरण रहे कि हिन्दीं चरित्र निर्माण की भाषा है। मानवीय संस्कृति की अनन्यतम पहचान है। उसकी महत्ता को अक्षुष्ण बनाएं रखना है।"[10]

हिन्दीं केवल सामान बेचने की भाषा न होकर भावों के संवादों की भाषा है। भारतीय संस्कृति की धरोहर को विश्व स्तर पर सम्प्रेषित करने का सरलतम और सहजतम माध्यम है। ''प्रवासी भारतीय हिन्दीं भाषा को अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक अस्मिता की भाषा समझकर उस धरोहर को सुरक्षित रखना चाहते है। अमेरिका, यूरोप, रूस आदि देशों में हिन्दीं के प्रति शैक्षिक अभिरूचि के साथ प्रयोजनपरक दृष्टि भी है। हिन्दीं का अध्ययन और अध्यापन जिन देशों में हो रहा है अपने–अपने देश के अध्यापक एवं शोधार्थियों को हिन्दीं का गहन अध्ययन तथा अध्यापन कला के विशेष प्रशिक्षण के लिए भारत भेज रहे हैं।"[11] भारत के लिए यह सम्मान जनक बात है कि जिस हिन्दीं को हमारे भक्तों, सन्तों, गुरुओं, पीरों ने अपनी वाणी से गौरवान्वित किया आज वह पूरे विश्व की प्रथम भाषा के रूप में गौरवशालिनी भाषा का स्वरूप धारण कर अपनी पहचान बनाने की राह पर अग्रसर है। कुछ विद्वानों ने तो यह स्वीकार भी कर लिया है कि हिन्दीं अब प्रथम विश्वभाषा के रूप में अपना अस्तित्व बना चुकी है। सम्भवतः विश्वभर में सभी क्षेत्रों में हिन्दीं की लोकप्रियता और उपयोगिता इसी कारण बढ़ी है।

''यही कारण है कि राष्ट्रभाषा हिन्दीं, चीनी और अंग्रेजी को पीछे छोड़ते हुए विश्व की प्रथम भाषा हो गई हैं जो सर्वाधिक आम जनता द्वारा स्वेच्छा से बोले जाने वाली भाषा है।''[12] राज्यभाषा के रूप में भी हिन्दीं को बहुत सम्मान जनक स्थान मिला है केन्द्रीय संस्थानों और कार्यालयों में हिन्दीं में कामकाज होने से हिन्दीं प्रगति के पथ पर अग्रसर हुई है। हिन्दीं साहित्य के सृजन में भी विभिन्न आयाम मुखरित हुए है। प्रकाशन एवं मुद्रण कला ने भी हिन्दीं को लोकप्रिय होने और विश्व स्तर पर प्रसारित होने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। बाजारीकरण के वैश्वीकरण स्वरूप ने हिन्दीं को एक अनिवार्यता का रूप प्रदान किया है। जो भी हो वैश्विक स्तर

पर हिन्दीं का गौरव बढ़ा है। आज टंकण और संगणक (कम्प्यूटर) ने हिन्दीं की वैज्ञानिकता को प्रमाणित कर दिखाया है। हिन्दीं से बढ़कर कम्प्यूटर के लिए कोई दूसरी इसके समान उपयुक्त भाषा नहीं है।

"अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दीं की स्थिति के बारें में यह कहना अतिश्योक्ति न होगी कि मारिशस, फीजी, सुरीनाम, त्रिनिदाद आदि अनेक देशों में काफी बड़ी संख्या में लोग हिन्दीं सीखने के लिए लालायित है।''[13] आज वैज्ञानिक उन्नति ने भाषा का वैज्ञानिक आधार प्रदान करके हिन्दीं भाषा के अनेक साफटवेअर तैयार किये है। अब कम्प्यूटर बोलकर बताएगा कि आपने हिन्दीं में क्या लिखा है, और भी अनेक ऐसे उपयोगी हिन्दीं साफटवेअर तैयार हो रहे है जो हिन्दी भाषा को विश्व की प्रथम भाषा बनाने में सहयोगी सिद्ध होगे। ''हिन्दी भाषा प्रेमियों के लिए यह एक सुखद घटना या शुभ संकेत है कि भविष्य में कम्प्यूटर हिन्दीं भाषा के इशारे पर काम करेगा। हम हिन्दी में बात करेंगे तो कम्प्यूटर आज्ञा का पालन करेगा।''[14] अनुवाद के क्षेत्र में कम्प्यूटर में अनेक शोधकार्य हो रहे है। भले ही संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में हिन्दी को अनेक विघ्नबाधाओं का सामना करना पड़ रहा हो लेकिन विश्व के अनेक देशों में लोगों के हृदयों में अपना स्थान बनाने में 'हिन्दी भाषा' सफल हो रही है।

हिन्दी भारतीय जीवन शैली के अनूकूल एक ऐसी भाषा है जो हमारी सभ्यता, संस्कृति, कला, साहित्य और राष्ट्रीय एकता को बिम्बित करती है। विभिन्न प्रान्तों, जनसमुदायों और लोककलाओं की वाहिनी यह भाषा अनेक विदेशी भाषाओं को आत्मसात् करने की क्षमता सिद्ध कर चुकी है। चीनी और अंग्रेजी जैसी विश्व व्यापिनी भाषाओं को वैज्ञानिकता, उच्चारण, कम्प्यूटर और प्रसारण के क्षेत्र में पछाड़ कर निरन्तर अविरल गति से विकास और लोकप्रियता के पथ पर आगे बढ़ रही है। निस्सन्देह हिन्दीं भाषा का गौरव और अस्तित्व अक्षुष्ण है और सदैव रहेगा। हमें भविष्य में हिन्दीं साहित्य के प्रबुद्ध लेखकों, विद्वानों, आलोचकों और शोधकर्ताओं के वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में किये जा रहे कार्यों के प्रति आशावान रहना चाहिए कि वे हिन्दी को विश्वस्तर पर वैश्विक भाषा का पद दिलाने में कोई कसर नहीं रखेगें। हमें भी इस यज्ञ में अपने हिस्से की आहूति अवश्य डालनी होगी।

पाद टिप्पणियाँ :-

1. जार्ज कुटटी वट्टोत, विज्ञान प्रौद्योगिकी एवं वैश्वीकरण के युग में साहित्कारों के बढ़ते दायित्व, शोध पत्रिका केरल हिन्दी साहित्य अकादमी, तिरुवन्नतपुरम, जनवरी 2007, पृ. 9
2. श्याम बाबू शर्मा, भूमण्डलीकरण और हिन्दी, अनभै – अनभै प्रकाशन, नई दिल्ली, अप्रैल–जून 2010, पृ. 78
3. माधव सोनटके, वैश्वीकरण और हिन्दी भाषा, विवरण पत्रिका, हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद, अगस्त 2008, पृ. 13
4. शुभा जौहरी, वैश्वीकरण तथा महिला सशक्तिकरण की दशा एवं दिशा, कृतिका, इंटीग्रेटड सैन्टर फार वर्ल्ड स्टडीज जालौन (उ.प्र.), जुलाई–दिसम्बर 2008, पृ. 24
5. निर्मल कौशिक कामायनी कौशिक, भारत का सांस्कृतिक गौरव, ऐजूकेटर्स सोसाइटी फरीदकोट, 2011, पृ. 15
6. सीताराम झा श्याम, भूमण्डलीकरण और हिन्दी, हिन्दुस्तानी, हिन्दुस्तानी ऐकेडमी, इलाहाबाद, जुलाई–सितम्बर, 2006, पृ. 4

7. कीर्तिकुमार सिंह, वर्तमान भारतीय परिवेश और शैक्षिक मूल्यवत्ता का केन्द्र बिन्दु, हिन्दुस्तानी ऐकेडमी इलाहाबाद, 2008, पृ. 11
8. आनन्द यादव, युगपुरुष स्वामी विवेकानन्द वाणी, लक्ष्मी प्रकाशन, दिल्ली, अज्ञात, पृ. 17
9. सीताराम झा श्याम, भूमण्डलीकरण और हिन्दी, हिन्दुस्तानी, हिन्दुस्तानी ऐकेडमी, इलाहाबाद, जुलाई सितम्बर, 2006, पृ. 4
10. सीताराम झा श्याम, भूमण्डलीकरण और हिन्दी, हिन्दुस्तानी, हिन्दुस्तानी ऐकेडमी, इलाहाबाद, जुलाई सितम्बर, 2006, पृ. 8
11. शेषा रत्नम, वैश्वीकरण की दिशा में हिन्दी, विवरण पत्रिका, अगस्त 2008, हैदराबाद, हिन्दी प्रचार सभा, पृ. 19
12. डा. धनंजय कुमार राष्ट्रभाषा हिन्दी के विविध आयाम, कृतिका, जुलाई–दिसम्बर, 2008, उरई–जालोन, पृ. 165
13. डा. कांचन वाहेती, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी की स्थिति, विवरण पत्रिका, सितम्बर–2010, हैदराबाद, हिन्दी प्रचार सभा, पृ. 9
14. भाऊ साहिब सोनटकके हिन्दी भाषा का भविष्य, विवरण पत्रिका दिसम्बर, 2009, हैदराबाद, हिन्दी प्रचार सभा, पृ. 6

पता – 603, स्वराज एनक्लेव, बोरखेड़ा, कोटा, पिन – 324005
मो. 7597429188

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 193–197

Swami Dayanand Saraswati : A National Maker

Himani Meena
Asst. Professor (English), Government College, Nagar Fort, Distt. Tonk (Raj.) Pin Code : 304024

Abstract :-

Swami Dayanand is considered as one of the most significant and reformers of 19th century. Born in 1824, Swami Dayanand had revolutionary ideas regarding Nation, freedom and religion. He contributed significantly to the reshaping of Indian society. He was an ardent champion of Nationalism. He injected a sense of pride and dignity in every Indian by unfolding the glorious cultural heritage of this land before them. "Indian for Indians" was his doctrine. He wanted to get rid of European influence. He stood for National unity. He revealed that mutual feuds, lack of education, untouchability, impurity in life, negligence in studying the Vedas etc. were certain reasons for the downfall of the Indians. When these evils will be relegated to distant background, then Nationalism will emerge among the Indians. He put emphasis on the Veda and praised the culture of the Vedas in no uncertain terms. He gave the slogan— "Go back to the Vedas". He also emphasized that until and unless India broke the shackles of economic and political slavery of the Europeans, it cannot achieve independence. For the first time, he had uttered the word "Swaraj" and put emphasis on "Swadeshi" or self-reliance. Thus, he was a champion of Indian Nationalism.

Dayanand, a great socio-religious reformer, scholar, educationist political thinker, patriot, writer and a great architect of modern India. In the galaxy of the great men who rescued the countrymen from the clutches of degeneration and despondency in the 19th century, his name shines and shines almost like a star. He undoubtedly possessed a sharp intellect and rational thinking. He worked relentlessly to bring a new life to his fellow countryman through a stupendous program of social reconstruction and religious reformation. He heralded a new era of cultural regeneration and political emancipation. He lifted his countrymen from the depth of ignorance and inertia. He visited every corner of the country from Cape Comorin to the Himalyas and from Calcutta to Bombay.

He outrightly condemned and rejected the evils and vulgarities spread by the Brahmins due to their vested interests in the name of religion. He openly challenged the orthodox Pandits to prove if

they could justify polytheism, pantheism, idolworship, casteism, untouchability, sati, child marriage, purdah, forced widowhood, infanticide and other superstitions degenertating Hinduism.

His inspiring political message had a marvelous effect. Not only during his lifetime, but even after his death. We find them (The Arya Samajists) following their master with utmost devotion. They joined the national movement in large numbers all over India. He gave a serious thought to three important problems faced by his countrymen namely, illiteracy, economic poverty and political dependence.

The present paper is an attempt to understand the concept of Nation, Freedom and Religion in the philosophy of Swami Dayanand. He is considered as one of the most significant and seminal thinkers and reformers of 19th century. He had revolutionary ideas regarding Nation, freedom and religion and contributed significantly to the reshaping of Indian society. His writings and speeches now frequently contained references to political nationalism, to political independence, and to the evils of the British Raj.2 We as a Nation have not been able to play our part in the national and international affairs despite our invaluable culture, enormous population and diverse natural resources.

He contributed significantly to the development of India so much so that former President of India, S. Radhakrishnan, called him "One of the makers of Modern India". He was very much aware of the social, moral and religious degradation of their country in the late 19th century and he took revolutionary steps to introduce drastic reforms such as widow remarriage, the abolition of child marriages, and of the custom of Sati.

India has produced great thinkers and reformers like Swami Dayanand, Swami Vivekananda, Sri Aurobindo, Mahatma Gandhi, Raja Ram Mohan Roy and Madan Mohan Malviya. Their thought and work changed the fate of the Indian society. Around 70 years after independence, India is still in the twilight zone of political turmoil, economic imbalance, social turbulence and ideological confusion. By establishing Arya Samaj, instilled among Indians the sense of superiority, understanding of a rich cultural heritage and united them in one thread of Nationalism. Dayanand's message of going back to Vedas made Indians realize their deep cultural roots. The Arya Samaj which is spreading all over the Punjab and in the United provinces, represents in one of its aspects a revolt against Hindu orthodoxy, but it represents equally a revolt against western ideals.3 His views significantly inspired later thinkers like Mahatma Gandhi, who employed the spirit of nationalism awakened by Swami Dayanand in Indian freedom struggle. Gandhi's views on religion, freedom and nationalism were more or less like those of Swami Dayanand. Like Dayananda, Gandhi also believed in Swaraj (i.e. Self-rule).

Nationalism :-

Dayanand was an ardent champion of Nationalism. He injected a sense of pride and dignity in

every Indian by unfolding the glorious cultural heritage of this land before them. "Indian for Indians" was his doctrine and he wanted to get rid of European influence. He stood for national unity.4 He revealed that mutual feuds, lack of education, untouchability, impurity in life, negligence in studying the Vedas etc. were certain reasons for the downfall of the Indians. When these evils will be relegated to distant background, then nationalism will emerge among the Indians.

He also emphasized that until and unless India broke the shackles of economic and political slavery of the Europeans, it cannot achieve independence. For the first time, he had uttered the word "Swaraj" and put emphasis on "Swadeshi" or self-reliance. Thus, Swami Dayanand was a champion of Indian Nationalism.

Believer of Democracy :-

Dayanand was a firm believer in the concept of democracy. He vehemently condemned imperialism and colonialism. He believed in the process of election. An elected body according to him, would definitely protect the interest of the common men. A ruler should not be an autocrat or impose his whims and caprices over the people. He cited Veda and told that everybody was equal before the law—the king and the subjects. In his words, the relationship between the ruler and the ruled should be based on mutual respect and responsibility. The ruler should treat their people as their own sons and daughters, the latter should respect the former as their father. He was well aware of the fact that absolute power tends to corrupt a man. So, he was against it. He championed liberalism and democracy and advocated about the decentralization of power.

Nation building through language :-

Dayanand was a nation builder. The necessity of a common language for fostering national unity was felt by him. He had observed that Hindi was spoken largely by the people of India. So he wrote 'Satyartha Prakash' in Hindi. He also write the commentaries on the Vedas in Hindi. This endeavor of Dayanand facilitated the common men to go through the inner meaning of the Veda. Thus, Hindi became the Lingua Franca in the country. Its importance was largely felt during the freedom struggle. Swami Dayayanad Said, "There can come noting but poverty and pain when the foreigners rule over and trade in our country."

Veda – The mine of knowledge :-

Dayanand put emphasis on the Veda. He founded the Arya Samaj in 1857. Which loomed large on the intellectual and social sense of late nineteenth century Northern India. He praised the culture of the Vedas in no uncertain terms. He gave the slogan "Go back to the Vedas". He discerned how the Vedas contained the message of equality, parity and several reforms. The Vedas contain scientific knowledge, several reforms, philosophy and doctrines of morality. He emphasized that the Indian

society can be reformed and reconstructed by following the Vedic practices. Thus, he re-established the importance of Veda on a solid foundation. The Indians and westerns now became attracted more and more towards the Vedas, its study and interpretation. He was a man consumed by dream of a better life for all.

Reforms through Arya Samaj :-

Dayanand established 'Arya Samaj' in 1875.Through it, he carried on several reforms. It emphasized that :-

1. God is omnipotent and the creator of the world.
2. Veda is the mine of knowledge and every Arya must read it.
3. One must prefer truth instead of lie.
4. Through oblation the religious practices should be made.
5. The Samaj shall do stuti, prarthana and upasana.
6. The Arya Samaj will work for the interest of the society.
7. The duty of the Samaj is to serve for the interest of the universe.
8. It is determined to put an end to illiteracy and spread education.
9. One should not believe in the theory of incarnation and idolatry.
10. Man should have faith on the theory of Karma and rebirth.

Through these principles, Dayanand carried out several reforms in social, religious and charitable fronts.

Suddhi Movement :-

Dayanand was deeply moved by the conversion of the Hindus to the Christianity or Islam. He appeared as a savior of Hinduism. He took steps to return back the Hindus into the fold of Hinduism, those who had accepted Christianity or Islam due to adverse circumstances. Thus, he initiated a movement which was very famous as the 'Suddhi Movement'. By this he brought back the converted Hindus from Christianity or Islam to the fold of Hinduism again. In this respect the Shuddhi Sabha was largely instrumental in removing the bolt of untouchability from the Indian society.

This 'Suddhi Movement' of Dayanand mainly checked the attitudes of Christian Fathers who were converting the poorer section of the Hindus to their religion. This made the mind of the Hindus strings and checked its further deterioration. Thus, Dayanand appeared as a savior of Hinduism.

Conclusion :-

Swami Dayanand Saraswati was condemned variously for his conservatism. He glorified Veda and Hindu culture even at the cost of Christianity and Islam. Further, he tried to establish blindly the superiority of the Aryas. In the next turn, he took for granted the Vedic polity as a perfect one and

failed to find fault in it. However, he never criticized any religious belief. Even, he never directly inspired any Indians to fight against the British authorities.

His ideas of 'Swadeshi' and 'Swaraj' later on inspired Bal Gangadhar Tilak, Lala Lajpat Rai and Aurobindo Ghosh. His Suddhi movement established a new milestone in the realm of Hindu reformative movement. His burning patriotism inspired many Indian leaders. Paying tribute to him, Subhas Chandra Bose remarked "Swami Dayanand Saraswati is certainly one of the most powerful personalities who has shaped modern Indian and is responsible for its moral regeneration and religious revival."

Indeed, the reforms of Swami Dayanand Saraswati had inspired the Indians immensely. The reforms carried by him through the Arya Samaj are certainly memorable. Through various social, religious and other reforms, he established the superiority of the Veda. The Anglo-Vedic Colleges established by Dayanand Saraswati, later on, played a vital role for the spread of education in the nook and comer of our country.

References :-

1. Madame Blavatsky, quoted in Munshi Ram and Ramdev. The Arya Samaj and its Democracy: A vindication (Lahore) 1910, p.12.
2. Valentine Chirol, Indian Unrest, London, 1907, p. 27
3. K.C. Yadav (Ed), The Auyobiography of Dayayanad Saraswati, Manohar Publications, New Delhi, 1987, p. 68
4. Saraswati, D, Autobiography, Hope India publication, Gurgaon, pp.11-45, 67-83.
5. www.Wikypediaencyclopedia.com
6. Jordens, J.T.F, Deyanana Sarswati : His Life and Ideas, oxford University Press, New York, 1979.
7. Pandey, Dhanpati, Builders of Modren India Swami Dayayanad Saraswati, Publication Divison, Ministry of information and Brodcasting, Government of India. New Delhi, 1985, P.104.
8. The Indian Express, March 3, 2015.
9. Yadav. K.C (ED), The Autobiography of Dayanand Saraswati, Manohar Publication, New Delhi, 1987, p.68

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 198–203

हरियाणा में जनसांख्यिकीय का भूमि उपयोग पर प्रभाव

सुमित श्योराण, शोधार्थी
डॉ. आलोक कुमार बंसल, भोध निर्दे ाक
भूगोल विभाग, श्री जगदी ा प्रसाद झाबरमल टिबडेवाला वि वविद्यालय, राजस्थान–333001

भोध सार :–

यह शोध पत्र हरियाणा राज्य में जनसांख्यिकीय परिवर्तनों और उनके भूमि उपयोग पैटर्न पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करता है। पिछले कुछ दशकों में हरियाणा ने तीव्र जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण और ग्रामीण–शहरी प्रवासन का अनुभव किया है, जिसने कृषि भूमि, शहरी क्षेत्रों, वनाच्छादन और औद्योगिक विस्तार पर महत्वपूर्ण दबाव डाला है। इस अध्ययन का उद्देश्य इन जनसांख्यिकीय प्रवृत्तियों की पहचान करना, उनके परिणामस्वरूप भूमि उपयोग में हुए परिवर्तनों की जाँच करना और सतत भूमि उपयोग योजना एवं प्रबंधन के लिए नीतिगत सिफारिशें प्रस्तुत करना है। अध्ययन विभिन्न सरकारी रिपोर्टों, जनगणना डेटा, और अकादमिक अध्ययनों से प्राप्त द्वितीयक डेटा का उपयोग करता है। प्रारंभिक निष्कर्ष बताते हैं कि कृषि भूमि का गैर–कृषि उपयोगों में रूपांतरण, अनियोजित शहरी विस्तार और बुनियादी ढांचे के विकास से पर्यावरणीय और सामाजिक–आर्थिक चुनौतियाँ उत्पन्न हुई हैं।

प्रस्तावना :–

भारत में, जनसांख्यिकीय परिवर्तन एक सतत प्रक्रिया है, जिसमें जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, ग्रामीण–शहरी प्रवास और आयु संरचना में बदलाव जैसे पहलू शामिल हैं। हरियाणा, भारत के तेजी से विकसित हो रहे राज्यों में से एक है, जिसने पिछले कुछ दशकों में अभूतपूर्व जनसांख्यिकीय बदलाव देखे हैं। यह राज्य दिल्ली के निकटता और एक मजबूत कृषि तथा औद्योगिक आधार के कारण विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इन परिवर्तनों का राज्य के प्राकृतिक संसाधनों, विशेषकर भूमि उपयोग पर गहरा प्रभाव पड़ा है। शहरीकरण की बढ़ती दरें और औद्योगिक विकास की आवश्यकता ने कृषि भूमि पर दबाव डाला है, जिससे भूमि रूपांतरण की दर में वृद्धि हुई है। हरियाणा में कृषि और औद्योगिक क्षेत्र अच्छी तरह से विकसित हैं, और इसकी अर्थव्यवस्था तेजी से बढ़ रही है – प्रति व्यक्ति आय भारत के सोलह प्रमुख राज्यों में तीसरी सबसे अधिक है। हरियाणा के उत्कृष्ट कृषि विकास का श्रेय मुख्य रूप से हरित क्रांति को दिया जाता है। 1967–1978 की अवधि में शुरू की गई, इसने कई विकासशील देशों में कृषि के गहनता और विस्तार का नेतृत्व किया और भारत में यह बहुत सफल रही। हरित क्रांति के प्रमुख पहलू कृषि भूमि का विस्तार और दोहरी फसल प्रणाली (प्रति वर्ष दो फसल मौसम) और आनुवंशिक रूप से सुधारे गए बीजों को अपनाना था – यानी गेहूं, चावल, मक्का और बाजरा की उच्च उपज

वाली किस्में (HYV)। ये प्रथाएँ आज भी हरियाणा में भूमि उपयोग को आकार दे रही हैं। हरियाणा के शुष्क और अर्ध–शुष्क कृषि पारिस्थितिकी क्षेत्रों में भूमि उपयोग में परिवर्तन और इस बात की जाँच करता है कि ये परिवर्तन किस हद तक सतत विकास के लक्ष्यों के अनुरूप हैं। अधिक विशेष रूप से, यह जनसंख्या, प्रौद्योगिकी, कीमतों और सार्वजनिक नीतियों की भूमिकाओं के संदर्भ में भूमि उपयोग पैटर्न की खोज करता है, और कृषि के गहनीकरण के पारिस्थितिक परिणामों, विशेष रूप से जल संसाधनों पर, का विश्लेषण करता है। यह अध्ययन यह निर्धारित करने के लिए सामाजिक–आर्थिक संकेतकों की भी जांच करता है कि उन्नत कृषि प्रौद्योगिकी द्वारा लाई गई सफलता का सामाजिक लाभों में अनुवाद किया गया है या नहीं। अंत में, यह देश के लिए खाद्य सुरक्षा प्रदान करने में हरियाणा की भूमिका को देखता है, स्थानीय उपभोग के लिए कृषि वस्तुओं की मांग और क्षेत्र के बाहर के बाजारों की मांग के बीच अंतर करता है। जनसांख्यिकीय परिवर्तनों और भूमि उपयोग के बीच का संबंध जटिल और गतिशील है। हरियाणा में बढ़ती जनसंख्या को आवास, उद्योग, बुनियादी ढाँचा और सेवाओं की आवश्यकता है, जिससे कृषि योग्य भूमि का गैर–कृषि उपयोगों में रूपांतरण हो रहा है। यह रूपांतरण खाद्य सुरक्षा, पर्यावरणीय स्थिरता और ग्रामीण आजीविका के लिए गंभीर चुनौतियाँ प्रस्तुत करता है। अनियोजित शहरीकरण और तेजी से होने वाला भूमि उपयोग परिवर्तन अक्सर जल निकायों के अतिक्रमण, प्रदूषण और जैव विविधता के नुकसान का कारण बनता है। इसलिए, हरियाणा में जनसांख्यिकीय परिवर्तनों के भूमि उपयोग पैटर्न पर पड़ने वाले सटीक प्रभावों को समझना और उन्हें संबोधित करने के लिए प्रभावी रणनीतियाँ विकसित करना महत्वपूर्ण है।

शोध पत्र के प्रमुख उद्देश्य :–

1. हरियाणा में प्रमुख जनसांख्यिकीय परिवर्तनों (जैसे जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, प्रवासन) के रुझानों का विश्लेषण करना।
2. इन जनसांख्यिकीय परिवर्तनों के परिणामस्वरूप हरियाणा में भूमि उपयोग पैटर्न (कृषि, शहरी, औद्योगिक, वन) में हुए बदलावों का आकलन करना।
3. भूमि उपयोग में इन परिवर्तनों के पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक निहितार्थों का मूल्यांकन करना।
4. हरियाणा में सतत भूमि उपयोग योजना और प्रबंधन के लिए व्यवहार्य नीतिगत सिफारिशें प्रस्तुत करना।

भारत में, जनसांख्यिकीय बदलावों ने तीव्र गति से भूमि उपयोग पैटर्न को प्रभावित किया है। शहरी क्षेत्रों के विस्तार ने उपजाऊ कृषि भूमि को निगल लिया है, जिससे खाद्य सुरक्षा पर दबाव बढ़ रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर प्रवासन ने न केवल शहरी क्षेत्रों में भूमि पर दबाव डाला है, बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में भी श्रम की कमी और कृषि भूमि के परित्यक्त होने जैसे मुद्दों को जन्म दिया है।

हरियाणा के संदर्भ में, राज्य की कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था और दिल्ली से इसकी निकटता ने इसे अद्वितीय जनसांख्यिकीय और भूमि उपयोग परिवर्तनों का केंद्र बनाया है। पिछले कुछ दशकों में, हरियाणा ने अपनी जनसंख्या में लगातार वृद्धि देखी है। भारत की जनगणना के अनुसार, हरियाणा की शहरी जनसंख्या 2001 में 28.92% से बढ़कर 2011 में 34.88% हो गई, जो तेजी से शहरीकरण का संकेत है। यह शहरीकरण अक्सर नियोजित तरीके से नहीं हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप अनौपचारिक बस्तियों और भूमि के अवैध अतिक्रमण में वृद्धि हुई है। कुछ अध्ययनों ने हरियाणा में विशेष रूप से राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (NCR) के आसपास के जिलों

जैसे गुरुग्राम और फरीदाबाद में कृषि भूमि के आवासीय और वाणिज्यिक उपयोग में रूपांतरण पर ध्यान केंद्रित किया है। ये अध्ययन दर्शाते हैं कि कृषि लाभप्रदता में गिरावट और अचल संपत्ति के उच्च मूल्यों ने किसानों को अपनी भूमि बेचने के लिए प्रेरित किया है। हालांकि, इन परिवर्तनों के पर्यावरणीय परिणाम, जैसे भूजल स्तर में कमी और प्रदूषण, को अभी भी व्यापक रूप से संबोधित करने की आवश्यकता है। यह साहित्य समीक्षा दर्शाती है कि जनसांख्यिकीय परिवर्तन और भूमि उपयोग के बीच एक सुस्थापित संबंध है। हालांकि, हरियाणा के विशिष्ट संदर्भ में, विशेष रूप से कृषि भूमि के गैर–कृषि उपयोगों में रूपांतरण के व्यापक पर्यावरणीय और सामाजिक–आर्थिक प्रभावों पर अधिक विस्तृत विश्लेषण की आवश्यकता है, और यही यह शोध संबोधित करने का प्रयास करेगा।

कार्य प्रणाली :–

यह अध्ययन हरियाणा में जनसांख्यिकीय परिवर्तनों और भूमि उपयोग पर उनके प्रभावों का विश्लेषण करने के लिए द्वितीयक डेटा स्रोतों पर आधारित एक वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण अपनाता है। अध्ययन क्षेत्र यह शोध अध्ययन हरियाणा राज्य पर केंद्रित है, जो भारत के उत्तरी भाग में स्थित है। हरियाणा एक कृषि प्रधान राज्य है, जो देश के खाद्यान्न उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान देता है, लेकिन इसने हाल के दशकों में तेजी से औद्योगीकरण और शहरीकरण भी देखा है, खासकर राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के भीतर आने वाले जिलों में। डेटा स्रोत इस अध्ययन के लिए डेटा विभिन्न विश्वसनीय द्वितीयक स्रोतों से एकत्र किया गया है भारत की जनगणना : विभिन्न दशकों की जनगणना रिपोर्टों से हरियाणा की जनसंख्या वृद्धि, घनत्व, शहरीकरण दर, ग्रामीण–शहरी जनसंख्या वितरण और जनसांख्यिकीय विशेषताओं (जैसे लिंग अनुपात, साक्षरता दर) से संबंधित डेटा।

हरियाणा सरकार के विभाग :–

शहरी स्थानीय निकाय, टाउन एंड कंट्री प्लानिंग, वन विभाग और उद्योग विभाग की रिपोर्टें और प्रकाशन, जो शहरी विस्तार, औद्योगिक क्षेत्रों और वनाच्छादन से संबंधित जानकारी प्रदान करते हैं। इस बढ़ती हुई आबादी को आवास, पानी, स्वच्छता और अन्य बुनियादी सुविधाओं के लिए अधिक भूमि की आवश्यकता है।

शहरीकरण के रूझान :–

हरियाणा में शहरीकरण की दरें तेजी से बढ़ी हैं। 2001 में, राज्य की शहरी जनसंख्या ख्यहां प्रतिशत शहरी जनसंख्या डेटा डालें, थी, जो 2011 तक बढ़कर यहां प्रतिशत शहरी जनसंख्या डेटा डालें, हो गई। यह वृद्धि विशेष रूप से राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (NCR) के जिलों जैसे गुरुग्राम, फरीदाबाद, सोनीपत और पानीपत में देखी गई है, जो औद्योगिक और वाणिज्यिक गतिविधियों के केंद्र बन गए हैं। शहरीकरण के इस फैलाव (Urban Sprawl) ने शहरों के बाहरी इलाकों में कृषि भूमि को आवासीय और वाणिज्यिक उपयोगों में परिवर्तित कर दिया है।

ग्रामीण–शहरी प्रवासन :–

आर्थिक अवसरों की तलाश में ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी केंद्रों की ओर बड़े पैमाने पर प्रवासन ने शहरी क्षेत्रों में भूमि पर अत्यधिक दबाव डाला है। यह प्रवासन अक्सर शहरी झुग्गियों के विस्तार और अनियोजित बस्तियों के विकास की ओर ले जाता है, जिससे बुनियादी ढांचे और सेवाओं पर दबाव पड़ता है। ख्यहां प्रवासन से संबंधित कोई उपलब्ध डेटा या प्रवृत्तियां शामिल करें, यदि उपलब्ध हो तो।

आयु संरचना और कार्यबल :–

राज्य की आयु संरचना में परिवर्तन, जिसमें युवा कार्यबल का एक बड़ा हिस्सा शामिल है, रोजगार के अवसरों की मांग को बढ़ाता है, जिससे औद्योगिक और वाणिज्यिक विकास के लिए भूमि की आवश्यकता होती है। जनसांख्यिकीय परिवर्तनों का भूमि उपयोग पर प्रभाव :कृषि भूमि पर प्रभाव हरियाणा में जनसांख्यिकीय दबाव और शहरी–औद्योगिक विस्तार के कारण कृषि भूमि का गैर–कृषि उपयोगों में तेजी से रूपांतरण हुआ है।

फसल पैटर्न में बदलाव :–

शहरी क्षेत्रों के पास, कुछ कृषि योग्य भूमि को सब्जियों या डेयरी फार्मिंग जैसे उच्च मूल्य वाली फसलों या गतिविधियों की ओर स्थानांतरित किया जा सकता है, लेकिन कुल मिलाकर कृषि भूमि का शुद्ध नुकसान होता है।

खाद्य सुरक्षा : कृषि भूमि के लगातार नुकसान से राज्य की खाद्य सुरक्षा क्षमता पर दीर्घकाली प्रभाव पड़ सकता है, क्योंकि यह राज्य देश के लिए एक प्रमुख खाद्य उत्पादक है।

जल संसाधन : विडंबना यह है कि हरियाणा कुछ क्षेत्रों में संसाधनों के दोहन और अन्य क्षेत्रों में जलभराव और मिट्टी की लवणता बढ़ने के कारण बढ़ते जल स्तर के कारण घटते जल स्तर के खतरे का सामना कर रहा है। शुष्क क्षेत्र की तुलना में अर्ध–शुष्क क्षेत्र में जल स्तर में गिरावट अधिक स्पष्ट है। अर्ध–शुष्क क्षेत्र, जिसमें भूजल की अच्छी गुणवत्ता है, सिंचाई और पीने के उद्देश्यों के लिए लगभग 80 प्रतिशत पानी भूमिगत स्रोतों से प्राप्त करता है। इसके विपरीत, शुष्क क्षेत्र में रेगिस्तान और सूखा–प्रवण क्षेत्र शामिल हैं और भूजल की गुणवत्ता खराब है। शुष्क क्षेत्र में सिंचाई के लिए उपयोग किए जाने वाले पानी का लगभग 76 प्रतिशत सतही जल नहरों से प्राप्त होता है।

जल स्तर में गिरावट :–

पिछले ढाई दशकों में हरियाणा में सिंचित फसलों के लिए फसल पैटर्न में बदलाव देखा गया है। गेहूं की खेती के लिए समर्पित क्षेत्र में 150 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई है, और धान की खेती के लिए उपयोग किए जाने वाले क्षेत्र में, जो अत्यधिक पानी की आवश्यकता वाली फसल है, तीन गुना वृद्धि हुई है। 1970 के दशक के उत्तरार्ध में धान के लिए लाभकारी मूल्य नीतियों की शुरुआत के बाद, चावल की खेती के लिए समर्पित क्षेत्र का विस्तार हुआ, जिसके परिणामस्वरूप भूजल संसाधनों का दोहन हुआ। ग्रामीण क्षेत्र में बिजली के उपयोग के लिए सब्सिडी और भूजल के उपयोग के लिए नियामक उपायों की कमी ने केवल दोहन को बढ़ाया और भूजल के अकुशल उपयोग को बढ़ावा दिया।

परिणामस्वरूप, जल स्तर में तेजी से गिरावट आई, खासकर अर्ध–शुष्क क्षेत्र में। राज्य स्तर पर, अधिक भूजल का दोहन किया जा सकता है, क्योंकि केवल 68 प्रतिशत संसाधनों का उपयोग किया जा रहा है (एम. सी. अग्रवाल, 1995)। हालाँकि, अर्ध–शुष्क क्षेत्र में सालाना औसतन 0.3–0.6 मीटर की गिरावट आ रही है, जो दर्शाता है कि भूजल का उपयोग पुनर्भरण से अधिक है। यमुनानगर, करनाल, कुरुक्षेत्र और अंबाला जिलों में अत्यधिक निष्कर्षण के संकेत मिले हैं और अन्य जिलों में जल स्तर में गिरावट की दर चिंताजनक है। कुरुक्षेत्र में जल स्तर 1974 में 8.2 मीटर से घटकर 1994 में 17.8 मीटर हो गया (तालिका 6–18)। जल स्तर में गिरावट की घटना अर्ध–शुष्क क्षेत्र तक ही सीमित नहीं है। शुष्क क्षेत्र महेंद्रगढ़ में जल स्तर 1974 में 19.7 मीटर से घटकर

1994 में 30.4 मीटर हो गया उदाहरण के लिए, टाटा एनर्जी रिसर्च इंस्टीट्यूट (टेरी) के अनुसार, करनाल और पानीपत जैसे जिलों में भूजल को फिर से भरने की लागत क्रमशः 371 मिलियन रुपये (+8.5 मिलियन) और 169 मिलियन रुपये (+3.9 मिलियन) होने की संभावना है।

शहरी भूमि उपयोग पर प्रभाव :-

तेजी से शहरीकरण ने हरियाणा के शहरों की भौतिक सीमा का विस्तार किया है।

अनियोजित शहरी विस्तार : शहरों के बाहरी इलाकों में अनियोजित विकास, अक्सर कृषि भूमि पर अतिक्रमण करते हुए, कुशल भूमि उपयोग योजना की कमी को दर्शाता है। इससे यातायात की भीड़, वायु प्रदूषण और आवश्यक सेवाओं के लिए दूरी बढ़ जाती है।

आवासीय और वाणिज्यिक विकास : बढ़ती शहरी आबादी को पूरा करने के लिए बड़ी संख्या में आवासीय कॉलोनियों, शॉपिंग मॉल, कार्यालय भवनों और अन्य वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों का विकास हुआ है, जो महत्वपूर्ण भूमि क्षेत्र पर कब्जा कर रहे हैं।

बुनियादी ढाँचा : परिवहन नेटवर्क (सड़कें, राजमार्ग), जल आपूर्ति और सीवरेज सिस्टम, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं के लिए भूमि की बढ़ती आवश्यकता।

वन भूमि और पर्यावरण पर प्रभाव : जनसांख्यिकीय दबाव ने पर्यावरण पर भी प्रभाव डाला है।

वनाच्छादन : हरियाणा में वन क्षेत्र तुलनात्मक रूप से कम है। शहरीकरण और औद्योगिक गतिविधियों के विस्तार से शेष वन क्षेत्रों और हरियाली पर और दबाव पड़ा है।

जल संसाधन : भूमि उपयोग परिवर्तन, विशेषकर ठोस सतहों (कंक्रीट, सड़कें) में वृद्धि, भूजल पुनर्भरण को कम कर सकती है और शहरी बाढ़ की घटनाओं को बढ़ा सकती है। औद्योगिक और शहरी अपशिष्ट जल प्रदूषण से जल निकायों पर भी दबाव पड़ता है।

जैव विविधता : प्राकृतिक आवासों के नुकसान और विखंडन से जैव विविधता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

औद्योगिक और वाणिज्यिक भूमि का विस्तार : हरियाणा सरकार की औद्योगिक नीतियों और दिल्ली के करीब होने के कारण औद्योगिक क्षेत्रों का तेजी से विस्तार हुआ है।

विशेष आर्थिक क्षेत्र और औद्योगिक मॉडल टाउनशिप के विकास ने रोजगार के अवसर पैदा किए हैं लेकिन भूमि रूपांतरण में भी योगदान दिया है।

निष्कर्ष :-

इस शोध पत्र के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि हरियाणा में तीव्र जनसांख्यिकीय परिवर्तन ने राज्य के भूमि उपयोग पैटर्न पर गहरा और बहुआयामी प्रभाव डाला है। जनसंख्या में वृद्धि, विशेषकर शहरीकरण और ग्रामीण–शहरी प्रवासन के कारण, कृषि भूमि का गैर–कृषि उपयोगों (आवासीय, वाणिज्यिक, औद्योगिक और बुनियादी ढाँचा) में बड़े पैमाने पर रूपांतरण हुआ है। यह रूपांतरण न केवल खाद्य सुरक्षा के लिए खतरा पैदा करता है, बल्कि अनियोजित शहरी फैलाव, पर्यावरणीय गिरावट (जैसे जल संसाधनों पर दबाव, प्रदूषण) और सामाजिक–आर्थिक असमानताओं को भी जन्म देता है। जबकि आर्थिक विकास के लिए शहरीकरण और औद्योगीकरण आवश्यक हैं, वर्तमान प्रवृत्तियाँ एक सतत भविष्य के लिए गंभीर चुनौतियाँ प्रस्तुत करती हैं। कृषि

भूमि का नुकसान एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय है, और प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव बढ़ रहा है। नीतिगत सिफारिशें हरियाणा में जनसांख्यिकीय परिवर्तनों के कारण उत्पन्न भूमि उपयोग संबंधी चुनौतियों का समाधान करने और सतत विकास को बढ़ावा देने के लिए समग्र भूमि उपयोग योजना और मास्टर प्लान का कार्यान्वयन : व सभी जिलों और शहरी क्षेत्रों के लिए दीर्घकालिक, एकीकृत भूमि उपयोग मास्टर प्लान विकसित और सख्ती से लागू किए जाने चाहिए, जो जनसांख्यिकीय अनुमानों और पर्यावरणीय संवेदनशीलता को ध्यान में रखें। शहरी विकास को पहले से नामित शहरीकरण क्षेत्रों तक सीमित रखना चाहिए और कृषि भूमि पर अतिक्रमण को कम करना चाहिए।

कृषि भूमि संरक्षण नीतियाँ – उच्च उत्पादकता वाली कृषि भूमि को गैर–कृषि उपयोगों में परिवर्तित होने से रोकने के लिए कठोर नीतियाँ बनाई जानी चाहिए। कृषि में निवेश को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और किसानों के लिए वैकल्पिक आजीविका के अवसर प्रदान किए जाने चाहिए।

संदर्भ सूची :-

1. Sharma, R. K. (2018). Geography and Economy of Haryana. New Age Publishers.
2. Gupta, S., & Singh, V. (2020). Urbanization and Agricultural Land Conversion in Haryana : A Geographical Analysis, Indian Journal of Geography, 35(2), 112-128.
3. Government of India, Ministry of Home Affairs. (2011). Census of India 2011, Haryana Volume. New Delhi : Publication Division.
4. Kumar, A., & Singh, P. (2019). Demographic Transition and its Impact on Land Use in North India- Journal of Demography and Development, 10(1), 45-60.
5. National Sample Survey Office (NSSO). (Year of Report). Report on Land and Livestock Holdings. Ministry of Statistics and Programme Implementation, Government of India.
6. Haryana Government. (n.d.). Department of Town and Country Planning. Retrieved from https://tcpharyana.gov.in/ (Actual URL needed).
7. Singh, J. (2017). Urban Sprawl and its Environmental Implications in Haryana. PhD Thesis, University of Delhi.
8. Mishra, R. K., & Devi, S. (2021). Impact of Industrialization on Agricultural Land in Gurugram District, Haryana. Environmental Science and Policy Journal, 15(3), 201-215

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 204–208

स्वातन्त्र्योत्तर नारी के प्रेम–संवेदना का यथार्थ ('यही सच है' के सन्दर्भ में)

डॉ. रत्ना चटर्जी
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, अन्नदा महाविद्यालय, हजारीबाग–825301

'यही सच है' कहानी नई प्रेम संवेदना की कहानी है। स्वाधीनता के बाद शहरी मध्यवर्ग के युवक–युवती किस प्रकार प्रेम की नवीन परिभाषा गढ़ने लगे, यह कहानी उस सच को भली प्रकार दर्शाती है तथा पाठक में नई प्रेम–संवेदना का अहसास जगाती है। यह कहानी 'प्रेम भावना' को जीवन यथार्थ की ठोस भूमि पर प्रतिष्ठित करती है। स्वतंत्रता पश्चात प्रेम सम्बन्धों में नए आयामों और नई जीवन स्थितियों के पैदा होने से प्रेम के प्रति मनुष्य की धारणा में नया परिवर्तन उपस्थित हुआ है। आधुनिकता व तर्क–वितर्क यानि बौद्धिकता को तो महत्वपूर्ण ठहराया ही, स्वतंत्रता ने भारतीय जीवन धारा में आत्मनिर्णय को महत्वपूर्ण बना दिया। अब वह समय नहीं रहा, जब कोई किसी की याद में आजीवन रोये या उसी के पीछे जीवन बिता दे। भौतिकता और बढ़ती हुई स्वार्थपरता ने प्रेम को सुख के साथ जोड़ दिया।

कहानी 'यही सच है' के माध्यम से मन्नू भंडारी ने प्रेम के नए स्वरूप तथा स्त्री–पुरुष के भावबोध में अंतर को प्रस्तुत किया है। उन्होंने परम्परागत प्रेम का सहारा न लेते हुए प्रेम में वर्तमान चुनौती को स्वीकार करते हुए प्रेम को व्याख्यायित किया है – 'यही सच है में यद्यपि पुराने प्रेम त्रिकोण को ही उठाया गया है लेकिन इसके पीछे दृष्टि नवीन है। इसमें प्रेम का स्वरूप नितांत नया और आधुनिक है। शाश्वत न होकर क्षणिक, वायवी न होकर वास्तविक है और अशरीरी न होकर शारीरिक है।'[1]

'यही सच है' कहानी की नायिका दीपा जिस तरह संजय और निशीथ के सम्पर्क में आकर अलग–अलग तरह से अपने प्रेम की व्याख्या करती है तथा जिस तरह दोनों के साथ को 'यही सच है' मानकर जीती है या जीना चाहती है, वह आधुनिक प्रेम सम्वेदना के उस सच की ही स्थापना करता है जिसमें किसी के लिए कहीं भी जगह हो सकता है– धोखेबाज निशीथ के लिये भी और लापरवाह हितैषी संजय के लिए भी। उसका मन निशीथ में बसता है और तन संजय के साथ के लिए व्यग्र रहता है। वह खुद इस स्थिति से दुखी है – 'इसी तरह की असंख्य बातें दिमाग मे आती हैं, जो जो मैं संजय से कहूंगी। कह सकूंगी यह सब? लेकिन कहना तो होगा ही। उसके साथ अब एक दिन भी छल नहीं कर सकती। मन से किसी और की आराधना करके तन से उसकी होने का अभिनय करती रहूं? छी।' इस प्रकार दीपा का प्रेम भावनात्मक न होकर स्वार्थ केंद्रित यथार्थश्रित है। 'यही सच है' का मन्तव्य भी यही है –उपलब्ध क्षण का सच, उपलब्ध व्यक्ति का सच – जो है उसका सच।

दीपा मानती है कि उसकी भावुकता यथार्थ में बदल गयी है– 'वह क्यों नहीं समझता कि आज हमारी भावुकता यथार्थ में बदल गयी है सपनों की जगह हम वास्तविकता में जीते हैं। हमारे प्रेम को परिपक्वता मिल गयी है जिसका आधार पाकर वह अधिक गहरा हो गया है, स्थायी हो गया है।' यह यथार्थ स्वार्थ केंद्रित है।

निशीथ के प्रति दीपा के खिंचाव का कारण प्रेम उतना नहीं है जितना कि स्वार्थ–सिद्धि। वह एक विचित्र दशा में जीती है– नकार और स्वीकार की द्वंदपूर्ण स्थिति में। वह आत्मविश्लेषण करती हुई कहती है–'विचित्र स्थिति मेरी हो रही थी। उसके अपनत्व भरे व्यवहार को मैं स्वीकार भी नहीं कर पाती थी, नकार भी नहीं पाती थी।' यह स्वीकार नकार का द्वंद इसलिए नहीं समाप्त हो पाता है क्योंकि वह सोचती है कि निशीथ उसके इंकार के कारण उसकी नौकरी को संभव बनाने की कोशिश ही न छोड़ दे – 'मैंने कई बार चाहा कि संजय की बात बता दूं,पर बता नहीं सकी। सोचा, कहीं यह सब सुनकर वह दिलचस्पी लेना कम न कर दे।उसके आज भर के प्रयत्नों से ही मुझे काफी उम्मीद हो चली थी। यह नौकरी मेरे लिये कितनी आवश्यक है। मिल जाये तो संजय कितना प्रसन्न होगा, हमारे विवाहित जीवन के आरंभिक दिन कितने सुख में बीतेंगे।'

जब निशीथ उसे बताता है कि उसका चुना जाना करीब–करीब तय हो गया है तब उसे वह बहुत दिनों बाद 'एक बार फिर बड़ा प्यारा सा लगा'। क्या यह स्वार्थ पूर्ति से उपजी प्रेम भावना नहीं है? वास्तव में दीपा का प्रेम भावनात्मक न होकर अवसरवादी है, क्षणजीवी है। वह भोक्तावादी जीवन दृष्टि का परिणाम है। दीपा निशीथ के प्रति उतने समय तक ही आकृष्ट रहती है जितनी देर तक उसके पास रहती है। कानपुर पहुंचकर संजय के साथ 'चुम्बित–प्रतिचुम्बित' की दशा पाकर वह आत्मविभोर हो जाती है और वापस संजय की ओर आकृष्ट हो जाती है।

आजादी के बाद लिखी गयी यह एक ऐसी कहानी है जिसकी प्रेम संवेदना स्वाधीनता प्राप्ति के बाद की स्त्री के स्वाधीन विचार का परिणाम है। यह स्वाधीन भारत में स्वतंत्रता के अनुभूति से भरी दीपा नाम की युवती की अंर्तद्वंदपूर्ण आत्मकथा सी है जो स्वतंत्र वातावरण में ही आत्मनिर्णय की स्वतंत्रता अर्जित कर पाती है। यह स्वाधीनता भी उसके अकेलेपन में और ज्यादा प्रभावी हो जाती है। दीपा के सामने प्रेम के सम्बंध में जो भी द्वंद हैं वह मनोवैज्ञानिक यथार्थ है किन्तु वह द्वंद किसी मूल्य निष्ठा से नहीं उपजा है। आजादी के बाद मूल्य केवल टूटे–बिखरे नहीं समाप्त भी हुए। एक तरह की मूल्यहीनता को भी मूल्य मानने की स्वतंत्रता को बढ़ावा मिला है। सच को झूठ और झूठ को सच मानने की द्वंद को जीती है दीपा। और जीत जाती है दीपा की व्यवहारिक बुद्धि।

डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी ने बहुत सही लिखा है –'यही सच है का मतलब यह है कि झूठ और सच का वह निर्णय किसी नैतिक या सौंदर्य बोधीय आधार पर नहीं हुआ है। एक आवेग पर हुआ और आवेश प्रायः क्षणिक ही होता है। व्यक्ति को निर्णय में झोंक देता है। सच नेपथ्य में पड़ा रहता है और झूठ सच के रूप में प्रतिष्ठित हो जाता है।' 'यही सच है' शीर्षक सच का झुठापन स्थापित करता है। यही सच है गहन व्यक्तित्व द्वंद का। जो हो जाये, उसी को सच मानना पड़ता है। शायद मानना भी चाहिए क्योंकि व्यवहार बुद्धि यही तो है। इस कहानी का प्रेम व्यवहार बुद्धि को प्रश्रय देता है और उस प्रेम संवेदना को नकारता है जो यह मानकर चलती है कि 'अति सूधो स्नेह को मारग है जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं।' इस प्रकार का प्रेम रीति स्वच्छन्द धारा के कवियों के भीतर था, छायावाद उससे आगे बढ़ा और प्रेम के कल्पना–लोक में खो गया।

आजादी के बाद प्रेम धरातल पर आया और स्वार्थ लिप्त होकर अपनी अकेली दुनिया में सिमट गया। यह

लोक से न्यारा तो नहीं है लेकिन लोक के बीच रहकर ही लोक से बेखबर अपने मे लिप्त अपने स्वार्थ सिद्धि का जश्न मनाते हुए। इसमें मन का द्वंद तो है पर तन का सुख ऊपर है। महत्वपूर्ण यह है कि यह प्रेम उस स्त्री का है जो घर की चारदीवारी से मुक्त हुई है तथा जिसे अपने ढंग से जीने की स्वतंत्रता मिली है। इस प्रेम में पुरुष को नहीं, स्त्री को अहमियत हासिल हुई है। कम से कम वह स्वीकार–अस्वीकार का अधिकार तो पा गयी है। निश्चय ही कहानीकार मन्नू भंडारी ने दीपा के माध्यम से इस कहानी में आधुनिक बोध में उभरती नारी के लिए व्यक्तित्व, आर्थिक निर्भरता में स्वच्छंद जीवन, अहंभाव, नए अस्तित्व की खोज का अंकन हुआ है। 'यही सच है' ऊपरी तौर पर प्रेम के गहरे द्वंद की कहानी प्रतीत होती है जहां एक युवती अपने दो प्रेमियों के बीच 'चुनाव' न कर पाने की यातना से जूझ रही है। किंतु सूक्ष्म स्तर पर स्त्री की उस आदिम मानसिकता की कहानी है जिसका सच यह है कि वह उसी पुरुष का 'वरण' करती है जो आगे बढ़कर उसका हरण कर सके। अतः कहानी में द्वंद ही नहीं मूल प्रवृति की अभिव्यक्ति है।'[2]

यह कहानी परम्परागत प्रेम सम्बन्धों से अलग हटकर लिखी गयी है। जहां पहले की प्रेम कहानियों में एक आदर्श नैतिक मूल्य दिखाई पड़ते हैं, वहीं मन्नू भंडारी के इस कहानी में सर्वथा उनका अभाव है। दीपा के प्रेम का दर्शन बहुत कुछ उपभोक्तावादी संस्कृति से जुड़ा हुआ है। प्रेम में भोग का तर्क ही नहीं होता, उसमें त्याग का एक स्थायी आदर्श भी होता है। प्रेम के क्षणों में केवल तन ही नहीं सक्रिय होता वरन हृदय और मन भी सक्रिय होता है। इस कहानी के विषय में राजेंद्र यादव जी लिखते हैं – 'जब मैंने मन्नू की कहानी 'यही सच है' कि एक और ढंग से व्याख्या करते हुए बताया कि यह प्यार और भावनात्मक अंतर्द्वंद्व की या दो प्रेमियों को स्वीकारती लड़की की कहानी नहीं, वरन 50–60 के बीच की उस खंडित मानसिकता की कहानी है जहां भारतीय मन अपने को दो मनस्थितियों में एक साथ बंटा पाता था, एक ओर उसका अतीत था (पहला प्रेमी) जो आज भी उसके लिए सच था और दूसरी ओर या वर्तमान – दोनों उसके लिए समान सच थे और उसे एक को चुनना था।'

'भौतिकतावादी युग के व्यक्तित्व की प्रमुख प्रवृत्ति द्वंदात्मकता है। आज के युग में वैसे तो प्रत्येक व्यक्ति द्वंद्व की स्थिति में रहता है किंतु मध्यवर्गीय व्यक्ति की कल्पनाओं और वास्तविक स्थिति दोनों में अंतर के कारण वह लगातार द्वंदात्मक स्थितियों से जूझ रहा है चाहे वह सामाजिक या आर्थिक स्थिति हो, चाहे किसी पर विश्वास करने की। आज हर तरह से व्यक्ति असुरक्षित महसूस करता है।'[3] दीपा भी इसी द्वंद में जीती है। वह कलकत्ता में जब निशीथ से मिलती है तब उसे संजय से अपने प्रेम सम्बंध के बारे में बता देना चाहती है लेकिन वह सफल नहीं हो पाती है– 'कोई है जो मुझे कचोटे डाल रहा है। क्यों नहीं मैं बता देती कि नौकरी के बाद मैं संजय से विवाह करूंगी, मैं संजय से प्रेम करती हूं, वह भी मुझसे प्रेम करता है! वह बहुत अच्छा है, बहुत ही! वह मुझे तुम्हारी तरह धोखा नहीं देगा।'

जब नौकरी के इंटरव्यू के लिए दीपा कलकत्ता जाती है तब वह फिर निशीथ के प्रेम के लिए आतुर हो जाती है और चाहती है कि निशीथ उसे अपना ले किन्तु वह उदासीन एवं तटस्थ बना रहता है। दीपा कानपुर वापस पहुंच पुनः संजय के प्रेम में डूब जाती है। इस प्रकार वह संजय व निशीथ के प्रेम के बीच डोलती हुई अंतर्द्वंद के हिचकोले खाती है। दीपा के मन में निशीथ के प्रति स्वाभाविक प्रेम है। वह अठारह वर्ष की उम्र में किया गया पहला प्यार है जो उन्मादक और तन्मय करने वाला है। कलकत्ता में निशीथ से मिलने पर दीपा को

लगता है कि निशीथ का प्यार ही सच्चा है, वास्तविक है। संजय को वह प्रियतम नहीं पूरक मानती है। वह सोचती है– 'प्रथम प्रेम ही सच्चा प्रेम होता है, बाद में किया हुआ प्रेम तो अपने को भूलने का, भरमाने का प्रयास मात्र होता है।' कानपुर लौटने संजय से मिलने पर जब अपने ललाट पर संजय के अधरों का स्पर्श महसूस करती है तब उसे लगता है कि – 'यह स्पर्श, यह क्षण ही सत्य है, वह सब झूठ था, मिथ्या था, भ्रम था।' इस प्रकार इस कहानी में क्षण की पूर्णता को चित्रित किया गया है, जो अस्तित्ववादी चिंतन का प्रभाव है। इस कहानी में दीपा के माध्यम से लेखिका मन्नू भंडारी ने क्षण की मनस्थितियों को ईमानदारी के साथ अभिव्यक्त किया है। जिस क्षण को वह जो महसूस करती है वही क्षण अपने लिए सत्य है। 'एक से एक जुड़ी घटनाओं का लम्बा सिलसिला, दो पात्रों और घटनाओं के बीच इतनी विश्वसनीयता से गूंथा हुआ है विपरीत स्वभाव वाले दो व्यक्तियों के बीच असमंजस में घिरी नायिका के द्वंद का सटीक मनोवैज्ञानिक विश्लेषण बेहद सजगता और बारीकी से उभरकर सामने आता है और पाठकों के दिमाग पर अपनी छाप छोड़ जाता है जो आमतौर पर मन्नूजी की विशिष्टता भी है।'[4]

लेकिन दीपा जब यथार्थ की भूमि पर आती है तब वह संजय को ही स्वयं को समर्पित कर देती है। कुछ समय तक वह निर्णय–अनिर्णय की स्थित के द्वंद में अवश्य रहती है किंतु अंत में संजय की होकर यह साबित कर देती है कि जो उसका है वह भी उसी की होकर रहेगी।

'यही सच है' कहानी का वैचारिक आधार कमजोर दिखता है। यहाँ दीपा के मन का द्वंद ही प्रमुख दिखता है जो अलग–अलग क्षणों में निशीथ और संजय दोनों को ही सच के अतिरिक्त कुछ और नहीं मानने से इंकार कर देता है। दीपा के प्रेम में न वह ऊष्मा है और न वह उदात्तता जो जीवन को वृहत्तर आयामों से जोड़ सके। दीपा के प्रेम के साथ आर्थिक सुरक्षा ,स्वार्थ,वासना और अस्तित्व बोध के प्रश्न जुड़े हैं। 'दीपा अब तक की प्रचलित प्यार की रूमानी, आदर्शवादी तस्वीर को तोड़ती है... प्यार की दो स्थितियों को वह अपनी अनुभूति के क्षणों में सम्पूर्णता से स्वीकार करती है और उसके आनुषंगिक अनुभवों को भोगती है। स्थिति के गुजर जाने के बाद वह व्यर्थ ही उसके पीछे छूटे हुए अवसाद से देर तक नहीं चिपकती रहती,उसके ऊपर के दूसरे विकल्प को अपनाने की क्षमता रखती है।'[5]

वस्तुतः दीपा का प्रेम दर्शन नैतिकता–अनैतिकता से परे सिर्फ वर्तमान को पकड़ और भोग लेने वाला क्षणवादी दर्शन है। इसलिये जो भी उसके सामने होता है, चाहे वह निशीथ हो या संजय, वही एकमात्र सच लगता है। इस प्रकार दीपा अतीत और भविष्य से कटकर पूरी तरह वर्तमान को ही समर्पित होती है।

निष्कर्ष :-

यही सच है कहानी में लेखिका ने त्रिकोणीय प्रेम को अभिव्यक्त किया है। दीपा कभी संजय से प्रेम करती है तो कभी निशीथ के साथ। वास्तव में वह प्रेम की तुलना करने लगती है जिसके कारण वह खुद ही समझ नहीं पाती की कौन उससे प्रेम करता है।

'यही सच है' उत्कृष्ट कोटि की कहानी है। कथ्य व अभिव्यक्ति दोनों दृष्टि से पाठकीय चेतना पर गहरा छाप छोड़ती है। आज की नारी अपने जीवन में प्रेमी या पति को एक सहयात्री के रूप में देखती है। प्रस्तुत कहानी एक नारी के अंतर्मन का बारीक निरीक्षण करते हुए मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करती है। प्रेम के पारस्परिक त्रिकोणात्मक स्थिति को आधुनिक नारी और सामाजिक परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में बिल्कुल नए दृष्टिकोण से

प्रस्तुत किया गया है।

सन्दर्भ :-

1. http/bdl.handle.net/10603/7403
2. कथादेश, जनवरी–2009, पृ० – 85
3. www.shodh.net, भाग 7, जनवरी– जुलाई, 2016, पृ० – 73
4. पाखी, जनवरी– 2016, सुधा अरोड़ा, पृ० –144
5. आधुनिक हिंदी कहानी–समाज शास्त्रीय दृष्टि, डॉ रघुवीर सिन्हा, पृ० – 75

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 209-221

विश्वविद्यालय के छात्रों द्वारा डिजिटल पुस्तकालय संसाधनों का उपयोग : एक तुलनात्मक अध्ययन

आरती ग्वालेर, शोधार्थी,
डॉ मोहम्मद नासिर, पर्यवेक्षक
पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग कलिंगा विवि, नया रायपुर (छ.ग.)

सारांश :

वर्तमान डिजिटल युग में विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा में डिजिटल पुस्तकालय संसाधनों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) के एकीकरण ने उच्च शिक्षा संस्थानों को ई-पुस्तकें, ई-जर्नल्स, डेटाबेस, शोध प्रबंध एवं संस्थागत रिपॉजिटरी जैसी सामग्री तक सहज पहुँच प्रदान की है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य विश्वविद्यालय छात्रों द्वारा डिजिटल पुस्तकालय संसाधनों के उपयोग, संतुष्टि स्तर एवं प्रभावी उपयोग को प्रभावित करने वाले कारकों का तुलनात्मक विश्लेषण करना है। यह शोध विभिन्न विश्वविद्यालयों में अध्ययनरत स्नातक एवं स्नातकोत्तर छात्रों पर केंद्रित है, जिसमें शैक्षणिक विषय, लिंग, डिजिटल साक्षरता और संस्थागत ICT अवसंरचना के आधार पर अंतर की पहचान की गई है। प्राथमिक आंकड़े संरचित प्रश्नावली के माध्यम से एकत्र किए गए हैं। अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि विज्ञान एवं तकनीकी विषयों के छात्र डिजिटल संसाधनों पर अधिक निर्भर हैं, जबकि कला एवं मानविकी के छात्रों में इसका प्रयोग अपेक्षाकृत कम है। इसके अतिरिक्त, डिजिटल साक्षरता और तकनीकी ढांचे की उपलब्धता को संसाधनों की प्रभावी उपयोगिता के प्रमुख निर्धारक के रूप में पहचाना गया है। उपयोग में आने वाली प्रमुख बाधाओं में जागरूकता की कमी, तकनीकी समस्याएँ एवं प्रशिक्षण की सीमित उपलब्धता शामिल हैं। यह शोध विश्वविद्यालय प्रशासन और पुस्तकालय प्रबंधन को डिजिटल सेवाओं को प्रभावी एवं समावेशी बनाने हेतु नीतिगत सुझाव प्रदान करता है। कुल मिलाकर यह अध्ययन छात्रों की शैक्षणिक सहभागिता एवं ज्ञान अर्जन में डिजिटल पुस्तकालयों के रूपांतरकारी प्रभाव को उजागर करता है।

कीवर्ड्स : डिजिटल पुस्तकालय, विश्वविद्यालय छात्र, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, तुलनात्मक अध्ययन, ई-संसाधन, डिजिटल साक्षरता, शैक्षणिक अनुशासन

1. परिचय :

आज के डिजिटल युग में, सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (ICT) ने समाज के प्रत्येक क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया है [1], और पुस्तकालय प्रणाली भी इससे अछूती नहीं रही है [2]। पुस्तकालय, जो कभी केवल मुद्रित पुस्तकों और संदर्भ सामग्रियों का भंडार हुआ करता था, अब डिजिटल संसाधनों और इलेक्ट्रॉनिक सेवाओं का एक विस्तृत नेटवर्क बन चुका है [3]। इस परिवर्तन ने न केवल पुस्तकालयों की संरचना और कार्यप्रणाली को प्रभावित किया है, बल्कि उपयोगकर्ताओं की जानकारी तक पहुँच, शोध की प्रवृत्तियों और सीखने की पद्धतियों में भी एक गहरा बदलाव लाया है [4]। विशेषकर उच्च शिक्षा संस्थानों में, जहाँ ज्ञान का सृजन और प्रसार अत्यंत महत्वपूर्ण होता है, वहाँ डिजिटल पुस्तकालयों और ई-संसाधनों की भूमिका अत्यधिक प्रासंगिक और अपरिहार्य हो गई है [5]। मध्य प्रदेश के विश्वविद्यालयों में डिजिटल संसाधनों की उपलब्धता और उनके प्रभाव का मूल्यांकन करना इस शोध का प्रमुख उद्देश्य है [6]। भारत जैसे विकासशील देश में, जहाँ शिक्षा की पहुँच और गुणवत्ता को बेहतर बनाने के लिए निरंतर प्रयास किए जा रहे हैं, वहाँ विश्वविद्यालय पुस्तकालयों में डिजिटल सुविधाओं की उपस्थिति न केवल शिक्षार्थियों के ज्ञान को सशक्त बनाती है [7], बल्कि शोधकर्ताओं को वैश्विक स्तर पर उपलब्ध नवीनतम शोध तक पहुँच प्रदान कर, उनके शोध कार्य को एक नई दिशा प्रदान करती है [8]। ऐसे में यह अत्यंत आवश्यक हो जाता है कि विश्वविद्यालयों में उपलब्ध डिजिटल सेवाओं की वास्तविक स्थिति, उपयोग की आवृत्ति, उपयोगकर्ताओं की संतुष्टि, एवं उससे संबंधित समस्याओं का वैज्ञानिक और व्यवस्थित विश्लेषण किया जाए [9]।

इस शोध में विशेष रूप से मध्य प्रदेश के विश्वविद्यालयों में शोधार्थियों द्वारा ई-संसाधनों का प्रयोग [10], डिजिटल पुस्तकालयों की भूमिका [11], आईटी कौशल प्राप्ति के माध्यम [12], पसंदीदा डाउनलोड प्रारूप [13], सर्वाधिक प्रयुक्त ब्राउज़र और सर्च इंजन [14], एवं डिजिटल संसाधनों के प्रयोग में आने वाली चुनौतियों जैसे विभिन्न पहलुओं का गहराई से अध्ययन किया गया है [15]। इसके अतिरिक्त, शोधार्थियों की डिजिटल साक्षरता, लिंग, उम्र और शैक्षणिक योग्यता जैसे कारकों के आधार पर डिजिटल संसाधनों से संतुष्टि के स्तर का तुलनात्मक विश्लेषण भी इस अध्ययन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है [13]। यह अध्ययन एक व्यापक परिप्रेक्ष्य प्रदान करता है कि किस प्रकार डिजिटल प्रौद्योगिकी ने परंपरागत पुस्तकालय प्रणाली को बदलते हुए उसे एक आधुनिक, पहुँच योग्य और उपयोगकर्ता-केंद्रित सेवा केंद्र में रूपांतरित किया है [14]। साथ ही, यह शोध वर्तमान समय में विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के समक्ष विद्यमान संरचनात्मक, तकनीकी एवं सामाजिक चुनौतियों को भी रेखांकित करता है [15], जिनका समाधान खोज कर न केवल शोध की गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है, बल्कि उच्च शिक्षा के स्तर को भी सुदृढ़ किया जा सकता है।

अनुसंधान उद्देश्य : अध्ययन के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं :

1. मध्य प्रदेश के विश्वविद्यालयों में शोधार्थियों के बीच ई-संसाधनों तक पहुँचने की आवृत्ति का पता लगाना।

2. शोधकर्ता के बीच डिजिटल पुस्तकालय के उद्देश्य और उपयोग का अध्ययन करना ।

3. मध्य प्रदेश के विश्वविद्यालयों के शोधार्थियों द्वारा आईटी कौशल प्राप्त करने की विधि की पहचान करना।

4. मध्य प्रदेश के विश्वविद्यालयों में सबसे अधिक उपयोग किए जाने वाले ब्राउज़र और सर्च इंजन की पहचान करना।

परिकल्पनाएँ :

$\mathbf{H_1}$ डिजिटल संसाधनों के बारे में योग्यता और उनकी संतुष्टि के स्तर के बीच कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं है। वर्तमान अध्ययन के लिए उत्पन्न परिकल्पनाएँ इस प्रकार हैं।

$\mathbf{H_2}$ डिजिटल साक्षरता योग्यता क्षमताओं की उम्र और उनके संतुष्टि के स्तर के बीच कोई महत्वपूर्ण संबंध नहीं है।

$\mathbf{H_3}$ खोज इंजन के बारे में छात्र और उनकी राय के स्तर के बीच कोई महत्वपूर्ण संबंध नहीं है।

$\mathbf{H_4}$ अध्ययन के तरीके और डिजिटल पुस्तकालय संसाधनों तक पहुँचने के उनके उद्देश्य के बीच कोई महत्वपूर्ण संबंध नहीं है।

2. अनुसंधान कार्यप्रणाली :

अनुसंधान की प्रकृति :

वर्तमान अध्ययन की प्रकृति मिश्रित विधियों पर आधारित है, जिसमें मात्रात्मक और गुणात्मक दोनों अनुसंधान दृष्टिकोणों को सम्मिलित किया गया है। यह मिश्रित दृष्टिकोण इस अध्ययन की जटिलताओं, विविधताओं और बहुआयामी पक्षों को समग्र रूप से समझने में सहायक है।

मात्रात्मक अनुसंधान विधि का प्रयोग मुख्य रूप से आँकड़ों (data) के संग्रहण, मापन, विश्लेषण और तुलनात्मक अध्ययन हेतु किया गया है। यह विधि स्पष्ट, मापनीय और वस्तुनिष्ठ परिणाम प्राप्त करने में सहायक होती है। इस अध्ययन के संदर्भ में, प्रश्नावली आधारित सर्वेक्षण (survey) के माध्यम से छात्रों और शिक्षकों से डेटा एकत्र किया गया, जिसमें उत्तरदाताओं की डिजिटल साक्षरता, ई-संसाधनों की उपलब्धता और उपयोग की प्रवृत्तियों का मापन किया गया। आँकड़ों का विश्लेषण SPSS सॉफ़्टवेयर का उपयोग करके किया गया, जिससे डेटा की सांख्यिकीय प्रामाणिकता और निष्कर्षों की वैधता सुनिश्चित हो सके।

अध्ययन क्षेत्र का चयन :

वर्तमान अध्ययन के लिए मध्यप्रदेश राज्य को अनुसंधान क्षेत्र के रूप में चुना गया है। मध्यप्रदेश भारत के केंद्र में स्थित एक बड़ा राज्य है, जहाँ शहरी एवं ग्रामीण दोनों प्रकार के विश्वविद्यालयों की उपस्थिति, डिजिटल

बुनियादी ढाँचे की विषमता और विविध सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि वाले छात्रों का समावेश अध्ययन को गहराई और विविधता प्रदान करता है।

मध्यप्रदेश में कुल 50 से अधिक विश्वविद्यालय हैं, जिनमें राज्य विश्वविद्यालय, केंद्रीय विश्वविद्यालय, निजी विश्वविद्यालय, और डीम्ड-टू-बी विश्वविद्यालय सम्मिलित हैं। इस अध्ययन के लिए *प्रतिनिधिक नमूने के सिद्धांत (Representative Sampling Principle)* के आधार पर 10 विश्वविद्यालयों का चयन किया गया है। चयन इस प्रकार किया गया है कि इसमें विभिन्न प्रकार के विश्वविद्यालय (राज्य, निजी, केन्द्रीय) तथा भौगोलिक विविधता (शहरी, अर्ध-शहरी, ग्रामीण) को समावेश किया जा सके।

नमूना आकार :

न्यूनतम नमूना आकार 384 प्राप्त हुआ। यद्यपि, संभावित उत्तरदाताओं की अनुपस्थिति (Non-Response) को ध्यान में रखते हुए नमूना आकार में 20% वृद्धि की गई। इस प्रकार अंतिम निर्धारित नमूना आकार: 384+ (20% of 384) = 384+76.8 ≈ 460

इन 460 शोधार्थियों का वितरण निम्न प्रकार से किया गया :

- राज्य विश्वविद्यालयों से लगभग 40% प्रतिभागी
- केंद्रीय विश्वविद्यालयों से लगभग 25% प्रतिभागी
- निजी विश्वविद्यालयों से लगभग 20% प्रतिभागी
- तकनीकी और ग्रामोदय विश्वविद्यालयों से लगभग 15% प्रतिभागी

3. सांख्यिकीय विश्लेषण :

उद्देश्य 1 : मध्य प्रदेश के विश्वविद्यालयों में शोधार्थियों के बीच ई-संसाधनों तक पहुँचने की आवृत्ति का पता लगाना।

तालिका 3.1: ई-संसाधनों तक पहुँचने की औसत आवृत्ति

विश्वविद्यालय का प्रकार	नमूना आकार (N)	ई-संसाधनों तक पहुँचने की औसत आवृत्ति (5 अंकों के पैमाने पर)	F-Statistic	p-Value	निष्कर्ष
राज्य विश्वविद्यालय	260	4.1	6.25	0.0004	महत्वपूर्ण अंतर ($p < 0.05$)
केंद्रीय	120	4.5			

विश्वविद्यालय					
निजी विश्वविद्यालय	160	4.3			

व्याख्या :

तालिका 3.1: ई-संसाधनों तक पहुँचने की औसत आवृत्ति एक संक्षिप्त सांख्यिकीय सारांश है, जिसमें विश्वविद्यालय के प्रकारों के बीच ई-संसाधनों तक पहुँचने की औसत आवृत्ति की तुलना की गई है। इसे व्याख्यात्मक शैली में इस प्रकार समझा जा सकता है :

इस विश्लेषण में तीन प्रकार के विश्वविद्यालयों — राज्य विश्वविद्यालय, केंद्रीय विश्वविद्यालय और निजी विश्वविद्यालय — को शामिल किया गया है। राज्य विश्वविद्यालयों से कुल 260 उत्तरदाता, केंद्रीय विश्वविद्यालयों से 120 उत्तरदाता, और निजी विश्वविद्यालयों से 160 उत्तरदाता शामिल किए गए।

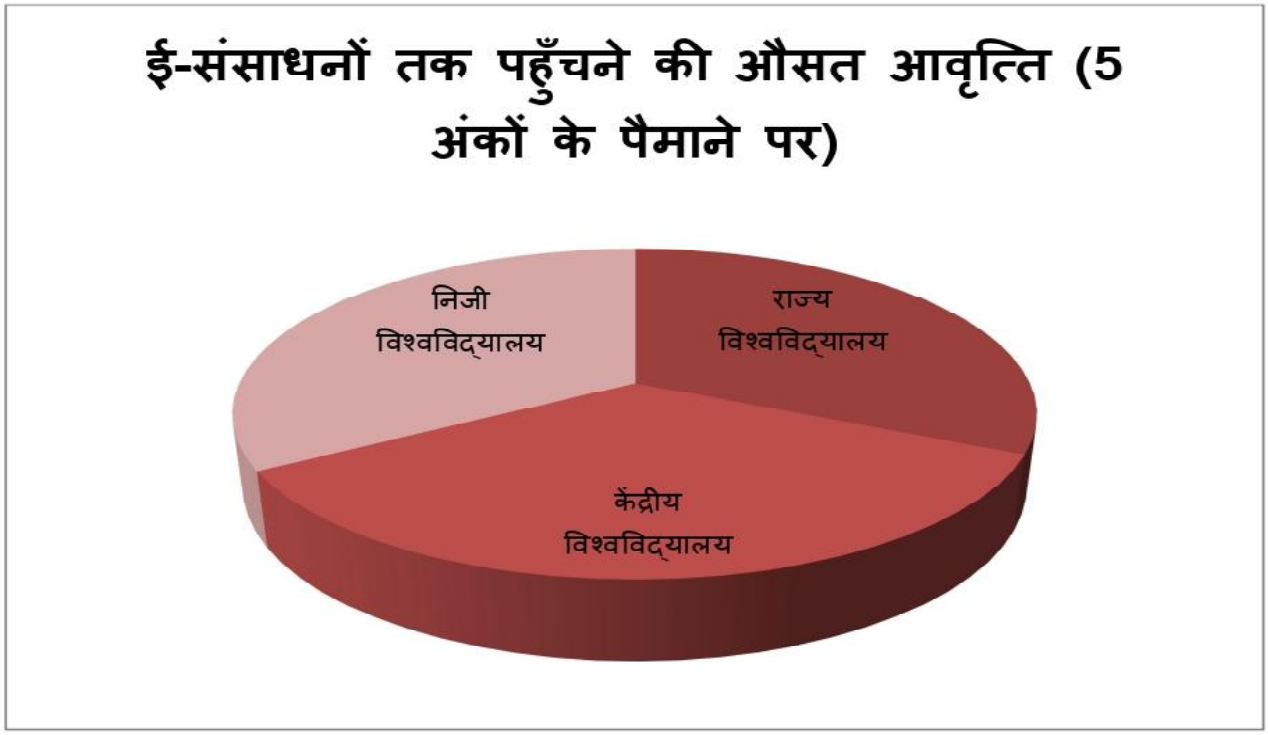

आरेख क्रमांक 4.1: ई-संसाधनों तक पहुँचने की औसत आवृत्ति (5 अंकों के पैमाने पर)

समूहों के बीच औसत में यह अंतर मात्रात्मक रूप से जाँचा गया और F-Statistic 6.25 प्राप्त हुई। इसके साथ p-Value 0.0004 आई, जो 0.05 से काफी कम है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि विश्वविद्यालय के प्रकार के आधार पर ई-संसाधनों के उपयोग की आवृत्ति में महत्वपूर्ण अंतर है।

उद्देश्य 2 : शोधकर्ता के बीच डिजिटल पुस्तकालय के उद्देश्य और उपयोग का अध्ययन करना।

तालिका 3.2 : डिजिटल पुस्तकालय उपयोग का उद्देश्य

डिजिटल पुस्तकालय उपयोग का उद्देश्य	नमूना आकार (N)	औसत उपयोग स्तर (5 अंकों के पैमाने पर)	F-Statistic	p-Value	निष्कर्ष
शोध लेख/थीसिस तैयार करना	140	4.6	6.12	0.001	महत्वपूर्ण अंतर ($p < 0.05$)
असाइनमेंट/परियोजना कार्य	90	4.2			
अध्ययन सामग्री/पाठ्यपुस्तक एक्सेस करना	80	4.0			
संदर्भ हेतु सामान्य अध्ययन	50	3.8			
अन्य (प्रतियोगी परीक्षा तैयारी आदि)	24	3.5			
कुल	**384**				

व्याख्या :

तालिका 3.2 : डिजिटल पुस्तकालय उपयोग का उद्देश्य डिजिटल पुस्तकालय उपयोग के विभिन्न उद्देश्यों के बीच उपयोग स्तर में अंतर को सांख्यिकीय रूप से स्पष्ट करती है। इसे बिना बिंदु में बाँटे हुए व्याख्यात्मक शैली में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :

अध्ययन में कुल 384 उत्तरदाताओं को शामिल किया गया, जिन्होंने डिजिटल पुस्तकालय के विभिन्न उद्देश्यों के लिए उपयोग का विवरण प्रस्तुत किया। डिजिटल पुस्तकालय का उपयोग सबसे अधिक शोध लेख या थीसिस तैयार करने के लिए किया गया, जिसमें 140 प्रतिभागियों का औसत उपयोग स्तर 4.6 (5 अंकों के पैमाने पर) दर्ज किया गया। इससे संकेत मिलता है कि शोधार्थी और उच्च अध्ययनकर्ता डिजिटल संसाधनों का अत्यधिक उपयोग करते हैं।

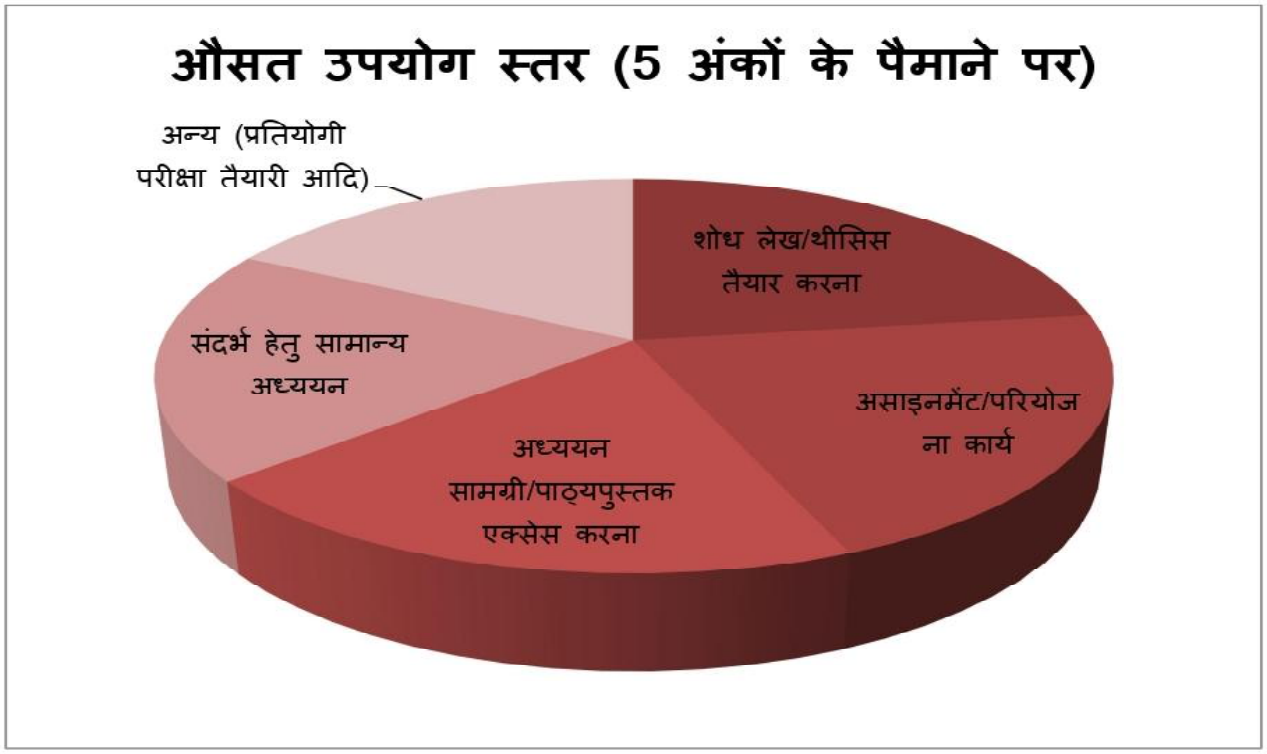

आरेख क्रमांक 3.2: औसत उपयोग स्तर (5 अंकों के पैमाने पर)

समूहों के बीच औसत उपयोग स्तर में पाए गए इस अंतर को जाँचने के लिए सांख्यिकीय परीक्षण किया गया। F-Statistic का मान 6.12 आया, और p-Value 0.001 प्राप्त हुई, जो 0.05 से काफी कम है। इससे यह स्पष्ट होता है कि विभिन्न उद्देश्यों के अनुसार डिजिटल पुस्तकालय के उपयोग स्तर में महत्वपूर्ण अंतर मौजूद है।

उद्देश्य 3 : मध्य प्रदेश के विश्वविद्यालयों के शोधार्थियों द्वारा आईटी कौशल प्राप्त करने की विधि की पहचान करना l

तालिका 3.3: आईटी कौशल प्राप्त करने की विधि

आईटी कौशल प्राप्त करने की विधि	नमूना आकार (N)	औसत दक्षता स्तर (5 अंकों के पैमाने पर)	F-Statistic	p-Value	निष्कर्ष
विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान किया गया प्रशिक्षण	110	4.3	5.87	0.002	महत्वपूर्ण अंतर ($p < 0.05$)
स्वयंसेवी रूप से (स्व-अध्ययन / ऑनलाइन प्लेटफ़ॉर्म)	140	4.5			
निजी संस्थानों से प्राप्त	80	4.1			

प्रशिक्षण					
मित्रों/सहपाठियों से अनौपचारिक रूप से सीखा	34	3.7			
अन्य माध्यम (वर्कशॉप/सेमिनार आदि)	20	3.9			
कुल	**384**				

व्याख्या :

आईटी (IT) कौशल प्राप्त करने की विभिन्न विधियों के प्रभाव की तुलना को दर्शाता है। इसे बिना बिंदु के, व्याख्यात्मक शैली में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:

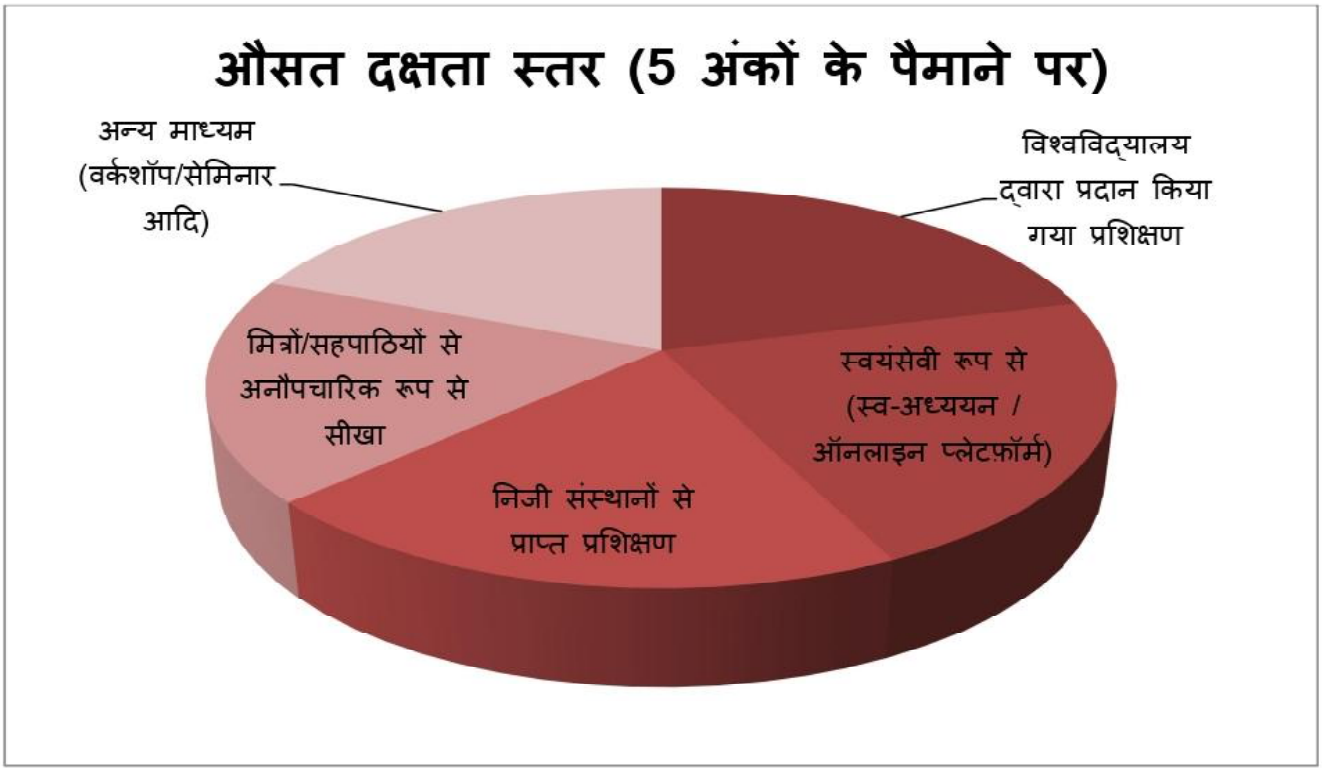

आरेख क्रमांक 3.3: औसत दक्षता स्तर (5 अंकों के पैमाने पर)

इस अध्ययन में कुल 384 उत्तरदाताओं ने आईटी कौशल प्राप्त करने के विभिन्न तरीकों का विवरण प्रस्तुत किया। सर्वाधिक उत्तरदाता, अर्थात् 140 प्रतिभागी, ने स्वयंसेवी रूप से, जैसे स्व-अध्ययन या ऑनलाइन प्लेटफॉर्म के माध्यम से आईटी कौशल प्राप्त किया था, जिसका औसत दक्षता स्तर 4.5 (5 अंकों के पैमाने पर) पाया गया। यह दर्शाता है कि स्व-प्रेरित शिक्षा के माध्यम से प्राप्त आईटी दक्षता अपेक्षाकृत उच्च स्तर पर रही।

समूहों के बीच दक्षता स्तर में इस भिन्नता का परीक्षण करने हेतु किए गए सांख्यिकीय विश्लेषण में F-Statistic का मान 5.87 पाया गया और p-Value 0.002 प्राप्त हुई। चूँकि p-Value 0.05 से कम है, अतः यह निष्कर्ष निकाला गया कि आईटी कौशल अर्जित करने के विभिन्न तरीकों के बीच दक्षता स्तर में महत्वपूर्ण अंतर विद्यमान है।

उद्देश्य 4 : मध्य प्रदेश के विश्वविद्यालयों में सबसे अधिक उपयोग किए जाने वाले ब्राउज़र और सर्च इंजन की पहचान करना।

तालिका 3.4: सबसे अधिक उपयोग किए जाने वाले ब्राउज़र

ब्राउज़र का नाम	उपयोगकर्ताओं की संख्या (N)	प्रतिशत (%)	रैंक
Google Chrome	260	67.7%	1
Mozilla Firefox	60	15.6%	2
Microsoft Edge	30	7.8%	3
Opera	20	5.2%	4
अन्य (Safari, UC Browser आदि)	14	3.7%	5
कुल	**384**	**100%**	

व्याख्या :

ब्राउज़र उपयोग डेटा इस प्रकार को दर्शाता है कि कौन-से ब्राउज़र सबसे अधिक लोकप्रिय हैं। इस जानकारी को बिना बिंदुओं के, व्याख्यात्मक शैली में इस तरह प्रस्तुत किया जा सकता है:

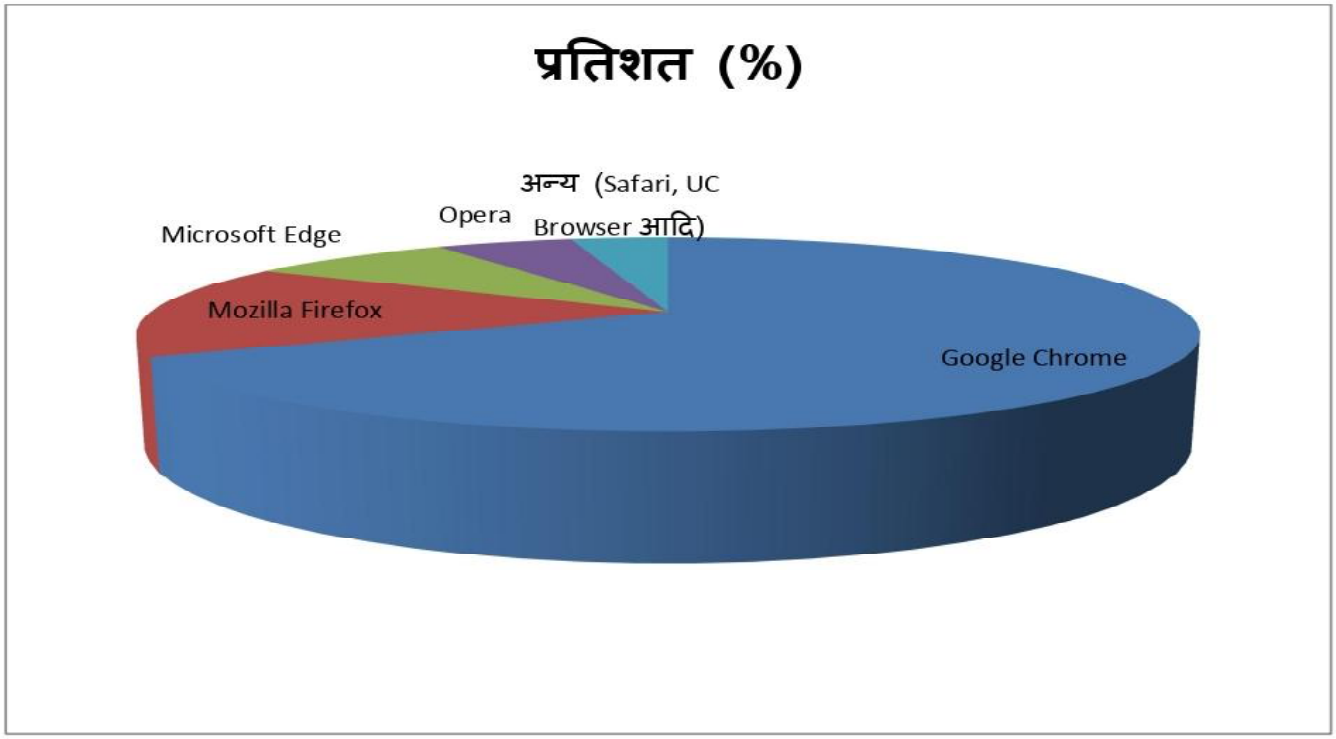

आरेख क्रमांक 3.4: सबसे अधिक उपयोग किए जाने वाले ब्राउज़र

अध्ययन में कुल 384 उत्तरदाताओं के ब्राउज़र उपयोग पैटर्न का विश्लेषण किया गया। प्राप्त परिणामों से स्पष्ट है कि Google Chrome सबसे अधिक लोकप्रिय ब्राउज़र रहा, जिसे 260 उपयोगकर्ताओं ने पसंद किया, जो कुल उत्तरदाताओं का 67.7% है। इस उच्चतम उपयोग प्रतिशत के साथ Google Chrome को प्रथम रैंक प्राप्त हुई।

दूसरे स्थान पर Mozilla Firefox रहा, जिसे 60 उपयोगकर्ताओं ने उपयोग किया और इसका उपयोग प्रतिशत 15.6% रहा। इसके बाद Microsoft Edge तीसरे स्थान पर रहा, जिसे 30 उत्तरदाताओं ने चुना और इसका उपयोग प्रतिशत 7.8% पाया गया।

Opera ब्राउज़र का उपयोग 20 उत्तरदाताओं (5.2%) ने किया, जिससे इसे चौथा स्थान प्राप्त हुआ। वहीं, अन्य ब्राउज़रों (जैसे Safari, UC Browser आदि) का उपयोग केवल 14 उत्तरदाताओं ने किया, जो कुल का मात्र 3.7% रहा, और इन्हें पाँचवाँ स्थान मिला।

4. निष्कर्षों का संक्षेप में वर्णन :

इस अध्ययन में विभिन्न कारकों और उनके प्रभावों को समझने के लिए विस्तृत विश्लेषण किया गया। प्रमुख निष्कर्ष निम्नलिखित हैं :

1. **संतुष्टि स्तर और आयु का संबंध :** आयु के साथ संतुष्टि स्तर में महत्वपूर्ण भिन्नताएँ पाई गईं। 36-45 वर्ष आयु समूह में सबसे अधिक संतुष्टि स्कोर देखा गया, जबकि 60 वर्ष से ऊपर के समूह में संतुष्टि का स्तर कम

पाया गया। F-Statistic और p-मूल्य से यह संकेत मिलता है कि आयु समूहों में संतुष्टि स्कोर में सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण अंतर था।

2. **लिंग और संतुष्टि :** पुरुष और महिला के बीच संतुष्टि के स्तर में अंतर पाया गया। महिला उत्तरदाताओं ने पुरुषों की तुलना में अधिक संतुष्टि व्यक्त की। हालांकि, t-मूल्य और p-मूल्य ने इस अंतर को सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण नहीं पाया (p-value > 0.05)।

3. **डिजिटल साक्षरता और संतुष्टि का संबंध :** डिजिटल साक्षरता स्कोर और संतुष्टि स्तर के बीच नकारात्मक संबंध पाया गया। जैसे-जैसे डिजिटल साक्षरता में वृद्धि हुई, संतुष्टि स्तर में गिरावट आई। यह शायद इस तथ्य के कारण हो सकता है कि अधिक डिजिटल साक्षरता वाले व्यक्ति बेहतर जानकारी प्राप्त करते हैं, लेकिन उनका अनुभव अधिक चुनौतियों का सामना करता है।

4. **ई-संसाधनों की उपलब्धता और संतुष्टि :** ई-संसाधनों की उपलब्धता और उपयोग का संतुष्टि पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। उत्तरदाताओं ने बताया कि उच्च गुणवत्ता वाले ई-संसाधन और तेज़ इंटरनेट की उपलब्धता ने संतुष्टि स्तर को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया।

5. **संचार माध्यमों की पसंद :** Google Chrome और Google Search को उपयोगकर्ताओं द्वारा सबसे अधिक प्राथमिकता दी गई, जो दर्शाता है कि ये प्लेटफ़ॉर्म अधिक प्रभावी और भरोसेमंद माने जाते हैं।

6. **आईसीटी प्रशिक्षण :** आईसीटी प्रशिक्षण के विभिन्न रूपों (जैसे विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान किया गया प्रशिक्षण और स्वयंसेवी प्रशिक्षण) का संतुष्टि पर प्रभाव देखा गया। स्वयं अध्ययन और समूह अध्ययन के माध्यम से प्राप्त ज्ञान ने प्रशिक्षण से अधिक संतुष्टि प्रदान की।

7. **तकनीकी समस्याएं और संतुष्टि :** धीमी इंटरनेट गति और लॉगिन संबंधित समस्याओं ने उपयोगकर्ताओं के संतुष्टि स्तर को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया, जिससे यह स्पष्ट होता है कि तकनीकी समस्याओं का समाधान अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

5. भविष्य के शोध के क्षेत्र :

1. **डिजिटल पुस्तकालयों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन** भविष्य में डिजिटल पुस्तकालयों के प्रभाव और उपयोगकर्ता अनुभव के मूल्यांकन पर शोध किया जा सकता है, ताकि यह समझा जा सके कि कैसे डिजिटल संसाधन शैक्षिक और अनुसंधान परिणामों को प्रभावित करते हैं।

2. **ई-संसाधनों की पहुंच में असमानताएँ** विभिन्न विश्वविद्यालयों और छात्रों के बीच ई-संसाधनों की पहुंच में असमानताएँ एक महत्वपूर्ण शोध क्षेत्र हो सकती हैं। इसे विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक कारकों के संदर्भ में विश्लेषित किया जा सकता है।

3. **आईटी कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रमों का प्रभाव** आईटी प्रशिक्षण कार्यक्रमों की प्रभावशीलता और उनके शोधकर्ताओं के प्रदर्शन पर प्रभाव पर शोध किया जा सकता है। इस शोध में विभिन्न प्रशिक्षण विधियों और उनके परिणामों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।

ग्रंथसूची :

1. Castells, M. (2010). *The Rise of the Network Society*. Wiley-Blackwell.
2. Tenopir, C., & King, D. W. (2009). *Measuring the Value of the Academic Library*. Journal of Library Administration, 49(8), 837–846.
3. Thanuskodi, S. (2012). *Use of e-resources by the students and researchers of faculty of Arts, Annamalai University*. International Journal of Library Science, 1(1), 1-7.
4. Singh, J., & Sharma, R. (2018). *Digital Library Services in University Libraries of Madhya Pradesh: A Survey*. Journal of Advances in Library and Information Science, 7(2), 123-130.
5. Okiki, O. C. (2012). *Information provision for research in Nigerian universities*. Library Philosophy and Practice.
6. Kumar, A., & Rajeev, M. (2020). *User Satisfaction on Digital Library Services in Indian University Libraries*. Library Herald, 58(3), 267-278.
7. Ani, O. E., & Ahiauzu, B. (2008). *Towards effective development of electronic information resources in Nigerian university libraries*. Library Management, 29(6/7), 504-514.
8. Joint, N. (2005). *Digital Libraries and the future of the library profession*. Library Review, 54(1), 12–23.
9. Sharma, C., & Singh, K. (2015). *ICT Skills among Library Professionals: A Case Study of Universities in Madhya Pradesh*. DESIDOC Journal of Library & Information Technology, 35(6), 472–479.
10. Khan, M. T. (2016). *Use of E-Resources and Services by Users at Indian Institute of Technology, Guwahati: A Study*. DESIDOC Journal of Library & Information Technology, 36(1), 42–48.
11. Bhat, I., & Ganaie, S. (2017). *Use of Web Browsers and Search Engines by Students and Scholars in Central Universities in India*. International Journal of Information Research, 7(1), 54–66.

12. Satpathy, S. K., & Rout, B. (2010). *Use of e-resources by the faculty members with special reference to CVRCE, Bhubaneswar*. DESIDOC Journal of Library & Information Technology, 30(4), 11–16.
13. Rehman, S. U., & Ramzy, V. (2004). *Awareness and use of digital resources and services in university libraries*. The Electronic Library, 22(5), 524–536.
14. Chowdhury, G. G. (2010). *Int*
15.
16.
17. *roduction to Digital Libraries*. Facet Publishing.
18. Khan, S. A., & Bhatti, R. (2017). *Barriers to the Use of Digital Library Resources and Services in Developing Countries: A Review*. Electronic Library, 35(5), 956–972.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 13, Issue 3-4
पृष्ठ : 222–225

Recasting Indian Historiography through Graphic Narratives : An Examination of Myth, Memory, and Oral Tradition in Amruta Patil's Parva Duology and Aranyaka

Dr. A Vijayanand, Associate Professor
Rachna Thakur, Research Scholar
Kalinga University.

Abstract :

Amruta Patil's graphic novels Adi Parva, Sauptik, and Aranyaka subvert the traditional linearity and objectivity associated with historiography by weaving together myth, memory, and oral traditions within visual narratives. This paper explores how Patil reconceptualizes Indian history through alternative epistemological frameworks rooted in indigenous knowledge systems, eco-spirituality, and feminine perspectives. By conducting a detailed analysis of narrative structure, visual aesthetics, and thematic elements, this study posits that Patil's works represent a decolonial and feminist contribution to the field of Indian historiography.

Keywords : Indian historiography, Amruta Patil, graphic novels, myth, memory, oral tradition, decolonial narratives, feminist retellings, Mahabharata, eco-spirituality

1. Introduction :

Traditional historiography frequently emphasizes written documents, state-centered narratives, and colonial perspectives, often neglecting oral traditions, mythic time, and feminine viewpoints. Conversely, Amruta Patil's graphic novels offer a distinct approach to historiographic engagement, merging the epic with the personal and the mythical with the historical. Her Parva duology and Aranyaka create a vibrant tableau where myth and memory serve as legitimate and potent instruments for historical comprehension.

This paper investigates how Patil's graphic novels redefine Indian historiography, concentrating on three interconnected themes: myth, memory, and oral tradition. The research intends to demonstrate

how these components operate as alternative historiographic instruments that contest linearity, colonial rationalism, and patriarchal authority.

2. Re-defining Historiography through Myth :

Myth is frequently regarded as pre-rational or anti-historical. Nevertheless, in Indian traditions, myth has historically functioned as a medium for cultural values, collective memory, and historical awareness. In Adi Parva, Patil asserts, "Myth is the soil we grow in." In this context, myth is not a mere falsehood but rather a vibrant archive.

Patil's interpretation of the Mahabharata does not simply narrate events; it reinterprets them through complex, symbolic, and subjective perspectives. The focus on non-linear time, cyclical cosmology, and archetypal narratives challenges the chronological constraints of contemporary historiography. In doing so, Patil reinstates myth to its appropriate status as a legitimate means of comprehending history.

3. Memory as a Historiographic Tool :

In Sauptik, Ashwatthama—cursed with immortality—recounts the tale from a retrospective viewpoint, where memory serves as both a burden and a connection. His account is disjointed, filled with haunting elements, and profoundly subjective. This stands in stark contrast to the presumed objectivity found in traditional historical narratives.

In Patil's work, memory transforms into an ethical medium, a means to acknowledge trauma, silence, and multiplicity. The characters frequently recount aspects that official history neglects : the inner experiences of Draupadi, Satyavati, or the forest sages. These recollected narratives are not merely supplementary to historical facts; rather, they are integral to a more comprehensive and inclusive approach to historiography.

4. Oral Tradition and the Feminine Voice :

Patil emphasizes the significance of oral and performative elements, drawing extensively from traditional storytelling forms such as katha, pravachan, and puranic recitations. The narrators—Ganga, Ashwatthama, and the unnamed Vriksha woman in Aranyaka—represent oral wisdom that contests the text-focused, masculinist perspectives prevalent in contemporary historical writing.

In Aranyaka, the forest serves as a symbol for alternative knowledge systems : intuitive, ecological, and profoundly embodied. The oral wisdom imparted by women and sages, exchanged around fires and beneath trees, emerges as the authentic locus of learning and historicity. This feminine,

eco-spiritual approach to historiography marks a significant shift away from the conventional metrics of power, warfare, and lineage that pervade mainstream historical narratives.

5. The Graphic Narrative as a Historiographic Form :

Patil's employment of the graphic novel format serves as a historiographic intervention. The interaction between image and text facilitates ambiguity, simultaneity, and depth. Visual symbols—water, forest, blood, womb—possess significant meaning that enhances the narrative.

Panels frequently transition across time and space seamlessly, eschewing linear progression. The application of color, layering, and abstract imagery invites readers into an engaging, reflective experience, where history is experienced as much as it is understood. This format aligns with the thematic exploration of myth and memory, rendering the graphic novel a powerful medium for reinterpreting history.

6. Decolonial and Feminist Interventions :

By emphasizing indigenous knowledge systems and highlighting the perspectives of marginalized individuals, Patil engages in a decolonial act. She challenges the Eurocentric dichotomies of history/myth, fact/fiction, and public/private. Furthermore, her emphasis on feminine wisdom, corporeal experiences, and relational ethics signifies a feminist reclamation of historical narratives. In her depiction of characters such as Satyavati, Ganga, and Draupadi, not merely as marginal figures but as pivotal historiographic agents, Patil revives voices that have been historically silenced. This narrative approach critiques both the patriarchal epic tradition and the gendered exclusions present in contemporary historiography.

7. Conclusion :

Amruta Patil's Parva duology and Aranyaka transcend mere artistic reinterpretations of epics; they serve as historiographic endeavors. By integrating myth, memory, and oral tradition into the graphic medium, Patil reinterprets Indian history from the periphery—feminine, ecological, and oral—into a dynamic, multi-voiced tapestry. Her work compels us to reconsider the definition of history, the significance of various voices, and the ways in which narratives can facilitate healing, remembrance, and resistance.

Works Cited :

1. Patil, Amruta. Adi Parva : Churning of the Ocean. HarperCollins India, 2012.

2. Patil, Amruta. Sauptik : Blood and Flowers. HarperCollins India, 2016.
3. Patil, Amruta. Aranyaka : Book of the Forest. Co-authored with Devdutt Pattanaik, Westland, 2019.
4. Chakrabarty, Dipesh. Provincializing Europe : Postcolonial Thought and Historical Difference. Princeton University Press, 2000.
5. Thapar, Romila. The Past as Present : Forging Contemporary Identities Through History. Aleph Book Company, 2014.
6. Spivak, Gayatri Chakravorty. "Can the Subaltern Speak?" Marxism and the Interpretation of Culture, edited by Cary Nelson and Lawrence Grossberg, University of Illinois Press, 1988.

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor 8.642

बोहल शोध मंजूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website :
www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
HOD Hindi, Tantia University
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834

Gina Shodh SANGAM

A Peer Reviewed & Refereed International Research Journal
Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गीना शोध संस्थान भिवानी के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज भिवानी से छपवाकर कार्यालय 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से वितरित की।

ISSN 2321:8037